झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की पी-एच०डी० (संस्कृत) की उपाधि के लिये प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध २००१
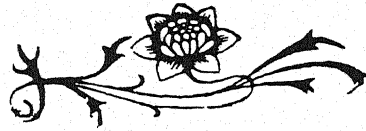
निर्देशक :-

डा० कैलाशनाथ द्विवेदी

एम०ए०, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न, पीएच.डी., डी.लिट.

प्राचार्य - मथुराप्रसाद महाविद्यालय कोंच

(जालौन) उ०प्र०

अनुसंधित्सु :-

कु० कल्पना सौनकिया

फोन : (05165)44669

मथुराप्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय

कोंच (जालौन) उ0प्र0

(सम्बद्ध : बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी)

डा0 कैलाशनाथ द्विवेदी
पीएच.डी., डी.लिट
प्राचार्य

पत्रांक

दिनांक 27-11-2001
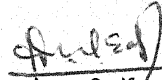
प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु0 कल्पना सौनकिया ने मेरे निर्देशन में 'झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन' शीर्षक शोध प्रबन्ध तैयार किया है

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी के शोध अधिनियम के अन्तर्गत वाञ्छित अवधि तक शोधछात्रा ने महाविद्यालय के शोध केन्द्र पर उपस्थित रहकर अपना शोधकार्य सम्पन्न किया है।

प्रस्तुत शोधप्रबन्ध शोधकर्त्री कु0 कल्पना सौनकिया का मौलिक कार्य है।

मै इसको मूल्यांकन हेतु अग्रसारित करता हुआ शोधछात्रा के उज्ज्वल भविष्य की मंगल कामना करता हूँ।

शोध निर्देशक

([illegible])

प्राक्कथन

समृद्ध संस्कृत साहित्य अपनी विविध विधाओं कालजयी कृतियों में भारत राष्ट्र की भास्कर संस्कृति सभ्यता के साथ ही युगयुगीन अमर महापुरूषों की उज्ज्वल गौरवगाथा एवं चारूचरित्र को चमत्कारी रूप में चित्रित करता है। इस दृष्टि से रामायण, महाभारत एवं पुराणों के लोक विश्रुत दिव्यादिव्य पात्रों की प्रभावशालिनी प्रस्तुति अनेक पुरातन महाकाव्यों, नाटकों, आख्यायिकाओं, चम्पू काव्यों में परिलक्षित होती है।

श्री रामकृष्ण, निषधराज नल, भीष्म अर्जुन गौतम बुद्ध प्रभृति पुरूष रत्नों पर जहां अनेक काव्यकृतियां संस्कृत साहित्य में समुपलब्ध हैं वही इतिहास प्रसिद्ध रमणी मणियों की समुज्ज्वल दिव्यप्रभा भी संस्कृत वाङ्मय में प्रतिभासित है। सीता, रूक्मिणी, राधा, द्रौपदी, सुन्दरी वासवदत्ता आदि रमणीय रत्नों के चारूचरित्र को जहां संस्कृत साहित्य में अनेक काव्य कृतियां प्रस्तुत करती है। वहीं अर्वाचीन युगीन ऐतिहासिक नारियों का भी संस्कृत वाङ्मय में (भले ही स्वल्प मात्रा में) चित्रण अवश्य समुपलब्ध होता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की दिव्य ज्योति जलाने वाली बुन्देलखण्ड के हृदय राज्य झांसी की अधीश्वरी लक्ष्मीबाई का नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरों में अंकित है। यद्यपि इस अमर वीरांगना पर राष्ट्रभाषा हिन्दी में अनेक रचनायें अर्वाचीन साहित्य में समुपलब्ध है किन्तु संस्कृत वाङ्मय में इस साहसी महिला पर स्वल्प साहित्य संलक्षित होता है।

डा0 सुबोध चन्द्र प्रणीत झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य वीरांगना लक्ष्मीबाई के जीवन चरित को ऐतिहासिक एवं साहित्यिक रूप की दृष्टि से चित्रित करने में अति महत्व पूर्ण है।

तत्कालीन बुन्देलखण्ड की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक अवस्थाओं का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर इस महाकाव्य में सुन्दर साहित्यिक निरूपण समुपलब्ध होता है, जिसका अनुसंधानात्मक अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है।

संक्षेप में झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से अनुसंधान पूर्ण आलोचनात्मक अध्ययन करना ही मेरे शोध का चरम लक्ष्य एवं महान उद्देश्य है।

प्रस्तुत शोध कार्य को लक्ष्य तक पहुंचाने में विद्वर डा0 कैलाश नाथ द्विवेदी एम.ए., पीएच.डी. , डी.लिट. , साहित्याचार्य, साहित्यरत्न प्राचार्य मथुरा प्रसाद महाविद्यालय, कोंच जिला जालौन के निर्देशन

में सम्पन्न हुआ।

अतः सर्वप्रथम मैं प्रातः स्मरणीय, संस्कृत ज्ञान का अक्षय भण्डार रखने वाले माननीय पूज्य गुरूवर श्रीमान कैलाश नाथ जी की आभारी हूं जिन्होंने मेरे अन्तःकरण में किसी उद्देश्य की जाग्रति उत्पन्न की। आपने शोध कार्य में मेरे मार्गदर्शक बनकर मुझे अतिसहयोग प्रदान कर मेरे अज्ञान रूपी अन्धकारमय जीवन को ज्ञान रूपी ज्योति से आलोकित कर आगे पग बढाने का मार्ग प्रशस्त किया है। इस शोधकार्य के मध्य भी मैं जब भी विचलित हुयी आपने मधुर और शुभाशीष बचनों से मेरे विचलित हृदय को एकाग्रता प्रदान की। सत्य तो यह है कि आपके जैसे गुरू की बन्दना हेतु वह शब्द ही नहीं जिनके द्वारा आपका आभार व्यक्त कर सकूं, फिर भी अपनी तुच्छ बुद्धि से आपके चरणों में इन काव्य सुमनों को अर्पित कर आभार व्यक्त करती हूँ –

करूँ मैं नित इनका पूजन, करूँ मैं इनके चरणों का वन्दन।।
हैं कीर्तिवान कीर्ति देने वाले, करूं मै शत शत बार नमन।
मुझको मिल उत्साह बढ़ाया, आगे बढ़ने का पाठ पढ़ाया।
आंख खुले नित ध्यान धरूँ मैं, हैं धन्य भाग्य ऐसा गुरू पाया।।

आपने जो महती अनुकम्पा की उसके लिये मैं आजीवन ऋणी रहूँगी।

आपके साथ–साथ मैं आभारी हूँ आपकी पत्नी श्रीमती कुसुमा देवी जी की जिन्होंने प्रतिक्षण मेरा उत्साह बर्धन कर मुझे शक्ति प्रदान की। अतः मैं अपने गुरू एवं गुरू माता के प्रति श्रद्धा भाव एवं विनम्र भाव से हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती हूँ।

मैं श्रद्धावनत् हूँ डा0 रामसजीवन शुक्ल पीएच.डी., साहित्यरत्न प्रो0 मथुराप्रसाद महाविद्यालय एवं डा0 श्री तोताराम जी निरंजन पीएच.डी. प्रो0 मथुरा प्रसाद महाविद्यालय की जिन्होंने इस अध्ययन की दिशानिर्धारण के साथ – साथ तत् सम्बन्धी सुबिधा एवं सहायता प्रदान करने की महती अनुकम्पा की एंव मुझे समय समय पर सत्परामर्श देकर अनुग्रहीत किया। एतदर्थ मैं श्रद्धेय गुरूओं के प्रति हृदय से साभार कृतज्ञता ज्ञापन करना पुनीत कर्तव्य समझती हूँ।

एतदिरिक्त जिन महानुभावों ने प्रकृत कार्य में अपने सत्परामर्श, पुस्तकों के सहयोग, पत्रों तथा अपनी शुभकामनाओं एवं आशीर्वचनों से अनुग्रहीत किया है, उनमें है मेरे जीजाजी श्री देवेन्द्र कुमार चतुर्वेदी (ए.एस.एम.) मैं इनके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

मै आभारी हूँ अपनी दादी स्व0 श्री मती सरस्वती देवी की जो अति पुरातन विचारों की होते हुये भी शिक्षा के क्षेत्र में कभी किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न करते हुये, इस अल्प जीवन में कुछ करते रहने एवं अपने माता पिता के नाम की यश रूपी पताका फहराने में सदैव प्रेरणा स्रोत वनी रहीं। जीवन के प्रति उनके समुचित मार्गदर्शनात्मक कथन कर्णपटल पर आज भी गूंजने लगते है।

मैं अपने ताऊ स्व0 पं0 श्री शालिकग्राम जी शौनकिया के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन हम सबके लिये समर्पित कर दिया। उन्होंने अपने जीवन के 75 वर्ष अपने भाइयों के परिवार की देखरेख में व्यतीत कर दिये। शिक्षा के क्षेत्र में वह हमेशा हमारा उत्साहबर्धन कर नितनव मार्ग हम सबके लिये खोजते रहे। उन्होंने अपने सत्परामर्शों से हमें अनुग्रहीत किया। किन्तु अकस्मात् उस समय जबकि मेरा शोधकार्य चरम बिन्दु पर था उनका (20 जुलाई 2001) को देहावसान हो गया। उनके शुभाशीर्वचनों का स्मरण कर मैं इनके अथक परिश्रमी एवं परोपकारी जीवन के प्रति श्रद्धावनत् हूँ। तथा आपके चरित्र से प्रेरणा ग्रहण करने के लिये प्रयासरत रहूँगी। मैं आभारी हूँ अपने स्नेहमय पिता श्री राजाराम सौनकिया (सेवानिवृत्त अध्यापक) एवं सरल प्रकृति वाली स्नेहमयी माता श्रीमती गायत्रीदेवी की जो सदैव ही मेरे प्रेरणा स्रोत रहे तथा जिन्होने अपने स्नेह एवं आर्शीवाद से सदैव मुझे मेरे कार्य में पूर्ण रूपेण प्रवृत्त रहने में सहयोग प्रदान किया। मेरे पिता ने प्रतिक्षण मेरा उत्साह बढ़ाया। तथा श्रमाधिक्य के क्षणों में माता ने अपने स्नेहीस्पर्श से मुझमें दृढ़ता प्रदान की सच तो ये है कि माता पिता के सहयोग के प्रति मैं जितना भी लिखूं उतना कम ही है क्योंकि जो प्यार एवं सहयोग पग पग पर उनके द्वारा मिला उसकी कृतज्ञता शब्दों में व्यक्त नहीं की जा सकती है। फिर भी मैं पूर्ण श्रद्धाभाव, प्रेमभाव एवं सेवाभाव से नत्मस्तक होते हुये उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

मै आभारी हूँ अपने भाइयों श्री भरतलाल सौनकिया एवं श्री रिपुसूदन सौनकिया एवं समस्त छोटी बहिनों की जिन्होंने संशोधन कार्य में सहायता प्रदान कर मेरा सहयोग किया। इनके साथ ही मैं अपनी भाभियों श्रीमती सरोज एवं श्री मती ममता की आभारी हूँ जिन्होंने ग्रहकार्यो से मुझे दूर रखकर इस कार्य हेतु पूर्ण अवसर प्रदान किया।

मै आभार व्यक्त करती हूँ उन पत्र पत्रिकाओं के लेखकों के प्रति जिनके लेखों से मुझे इस शोधकार्य में सहयोग प्राप्त हुआ है।

अन्त में मैं आभार व्यक्त करती हूँ श्री आशुतोष कुमार अग्रवाल (आशुतोष कम्प्यूटर कोचिंग) का

जिन्होंने इस शोध को त्रुटिहीन रखते हुये आत्मीय भाव से पूर्ण सजगता एवं मनोयोग से इस कार्य को पूर्ण किया मैं इनका हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

विनयावनत

कु० कल्पना सौनकिया

विषयानुक्रमणिका :-

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना विषय प्रवेश

संस्कृत साहित्य में महाकाव्य परम्परा एवं अर्वाचीन ऐतिहासिक महाकाव्यों में ' झाँसीश्वरी चरितम् ' का स्थान 'झाँसीश्वरी चरितम् ' महाकाव्य का रचना विधान आदि का संक्षिप्त परिचय, शोध प्रबन्ध की संक्षिप्त पृष्ठभूमि !
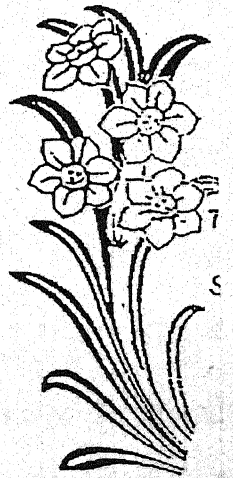
संस्कृत साहित्य में महाकाव्य परम्परा -

संस्कृत महाकाव्यों की सरसता, मधुरता तथा अभिरामता सर्वत्र प्रशंसनीय है। अन्य अध्यायों को छोड़कर यदि हम केवल काव्य की ही ओर दृष्टिपात करें तो उसकी महत्ता स्मृति में आये बिना नहीं रह सकती। संस्कृत काव्यों की झलक सर्वप्रथम हमें ऋग्वेद में ही मिलती है। ऋग्वेद में ऐसे कई मन्त्र दृष्टिगोचर होते है जिनमें उनके रचनाकार प्रार्थना के स्तर को त्यागकर कवि प्रतिभा का भी परिचय देते है, परन्तु जिसे हम वास्तविक काव्य शैली कहते है, उसका पूर्ण परिपाक वैदिक काल में नही माना जा सकता । वस्तुतः संस्कृत का आदिमहाकाव्य संस्कृत साहित्य के देदीप्यमान आदि कवि महर्षि वाल्मीकि कृत महाकाव्य रामायण ही है। भारतीय संस्कृत साहित्य के मार्गदर्शक आदिकवि वाल्मीकि तथा महर्षि वेदव्यास ही है। महाकाव्य रामायण ही उस काव्य धारा का उद्‌गम है जो भास, कालीदास, माघ, अश्वघोष एवं भारवि आदि अन्य स्रोतों में विभाजित होकर समग्र संस्कृत काव्यउद्यान को सींचती चली आयी है। महाकाव्य रामायण ने अनेक परवर्ती महाकवियों के समक्ष महाकाव्य का आदर्श उपस्थित किया। रामायण की अलंकृत, सरल, सरस एवं मधुर काव्य शैली ने कालीदास और अश्वघोष आदि कवियों को पूर्णतया प्रभावित किया । महाभारत का मुख्य विषय काव्य नहीं अपितु इतिहास है फिर भी रामायण की भाँति महाकाव्य महाभारत में भी कहीं–कहीं काव्य शैली प्रस्फुटित होती है।

महाकाव्यों के विषय में यह निश्चित कर पाना अत्यन्त दुरूह है कि उनकी उत्पत्ति कब, कहाँ और कैसे हुयी, सर्वप्रथम किस महाकाव्य की रचना की गयी यह निश्चित कर पाना कठिन प्रतीत होता है लौकिक संस्कृत में महाकाव्य रचने वाले शारदा के उपासक महाकवि कालिदास ही है, किन्तु यह कहना कि महाकाव्यों की उत्पत्ति इन्हीं के महाकाव्यों से हुयी सर्वथा अनुचित ही है। महाकाव्य कालिदास से प्राचीन हैं क्योंकि इनसे पूर्व भी महाकाव्यों की रचना हो चुकी थी यह रामायण एवं महाभारत महाकाव्यों से स्पष्ट ही है।

स्वयं पाणिनी (400 ई0 पू0) ने 'पाताल–विजय' और 'जाम्बबती विजय' नामक दो काव्यों की रचना की थी ऐसा 'रूद्रट' कृत काव्यालंकार सूत्र के टीकाकार द्वारा ज्ञात होता है। पतञ्जली (150 ई0 पू0) अपने महाभाष्य में काव्य साहित्य से पूर्ण परिचित प्रतीत होते है। एक ओर जहाँ उन्होने भारत से अपना परिचय प्रकट करवाया है तो दूसरी ओर उन्होंने 'कंसवध' और 'बलिबन्ध' नामक नाटकों की भी रचना की है। एक ओर उन्होंने 'वाररूचकाव्य' और 'वासवदत्ता'

की कुछ पक्तियों को भी उद्धृत किया है। इन रचनाओं के नामोल्लेख से सिद्ध होता है कि ई0 पू0 द्वितीय शताब्दी के काफी समय पहले काव्य साहित्य की उत्पत्ति हो चुकी थी यद्यपि यह रचनायें उपलब्ध नहीं हैं।

ईसा की प्रथम शताब्दी के कुछ शिलालेखों, उनकी भाषा एवं शैली से ज्ञात होता है कि उस समय तक काव्य साहित्य विकासोन्मुख था। अलंकृत काव्य शैली का अति मनोहर उदाहरण है – रूद्रदामन का गिरनार का शिलालेख (150ई0), जिससे प्रतीत होता है कि इसके रचयिता पुरातन अलंकार शास्त्र से पूर्णरूपेण परिचित थे। प्रयाग के 'अशोक स्तम्भ' की हरिषेण कृत समुद्रगुप्त की प्रशस्ति की शैली भी इस बात का स्पष्टीकरण करती है कि इनके पूर्व भी अनेक महाकाव्यों का उद्भव हो चुका था। पतंजली ने ई0 पू0 द्वितीय शताब्दी में जिस महाकाव्य की रचना की उसमें प्राचीन कवियों के अति मनोहर श्लोकों का वर्णन मिलना भी इस बात का प्रमाण है कि इस समय भी काव्य कला की उन्नति हो चुकी थी ।

इन समस्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि कालिदास से लगभग 600 वर्ष पूर्व ही महाकाव्यों की परम्परा प्रारम्भ हो चुकी थी । अति सुन्दर महाकाव्यों के रचयिता महाकवि कालिदास तो काव्य कानन की विकसित काव्य कला के प्रतिनिधि कवि हैं। यह पूर्ण रूपेण स्पष्ट हो ही जाता है कि संस्कृत काव्य साहित्य की रचना की शाश्वत धारा जो आदि काव्य रामायण से प्रभावित हुयी थी वह अविच्छिन्न रूप से अब तक प्रभावित होती रही है। इस मध्य अनेक कवियों ने काव्य ग्रंथो की रचना कर संस्कृत काव्य कानन को अपने सुन्दर सुमनोहर काव्य पुष्पों से संजोया है।

पाश्चात्य मत से काव्य दो प्रकार के होते है –

1. विकसित महाकाव्य (Epic of Growth) 2. कलापूर्ण महाकाव्य(Epic of Art)

विकसित महाकाव्य की कोटि में – रामायण, आदि महाकाव्य तथा कलापूर्ण महाकाव्य की काटि में – नैषधीय चरित, शिशुपालवध, रघुवंश, कुमार संभव, किरातार्जुनीयम् आदि काव्य आते है। यह सम्पूर्ण महाकाव्य संस्कृत साहित्य के उत्कृष्ट महाकाव्य हैं। इनमें मानव के सम्पूर्ण जीवन चक्र का विस्तृत वर्णन है। अर्वाचीन महाकाव्यों पर प्रकाश डालने से पूर्व इन महाकाव्यों पर संक्षिप्त प्रकाश डालना तथा उनका कालक्रमानुसार वर्णन करना अनुचित न होगा।

1. कालिदास कृत् कुमार संभव :–

महाकवि कालिदास ने दो महाकाव्यों की रचना की – कुमार संभव , रघुवंश।

कुमार संभव कालिदास की काव्य कला का चूड़ान्त निदर्शन है। यह अपनी उदात्त एवं

कोमल कल्पना शक्ति, मधुर और सरस भाव व्यंजना तथा सुबोध पदविन्यास के कारण वह आधुनिक रूचि के विशेष अनुकूल है। अलंकृत शैली के सर्वोत्कृष्ट उदाहारण हमें कालिदास के कुमार संभव एवं रघुवंश में मिलता है ।

कुमार संभव महाकाव्य में 17 सर्ग है जिनमें शिव पार्वती के शुभविवाह, कार्तिकेय के जन्म तथा तारकासुर के वध का वर्णन किया गया है। इसके आठ सर्गो पर ही ' मल्लिनाथ' द्वारा लिखी गयी (संजीवनी) टीका उपलब्ध होती है जिससे कुछ विद्वानों के मत है कि ' कुमारसंभव ' के प्रारम्भिक आठ सर्ग ही महाकवि द्वारा रचित हैं किन्तु कुछ विद्वानों का मानना है कि अन्तिम नौ सर्गो के अभाव में महाकाव्य में जो लक्षण होने चाहिये वह सम्पूर्ण लक्षण भी घटित नहीं होते। मात्र आठवें सर्ग का शिव पार्वती की रति क्रीड़ा का वर्णन विशेष आपत्ति का कारण बना है, किन्तु यह सर्ग भी वामन (800 ई0) के काल में भी उपस्थित था। अतः ऐसा अन्य कोई प्रमाण उपलब्ध न होने के कारण यह सिद्ध नहीं होता कि ये सर्ग कालिदास की रचना नहीं है। अष्टम् सर्ग भी कालिदास का ही निःशंसय निर्माण है। कुमार संभव कालिदास की सच्ची निःसंदिग्ध रचना है। कुमारसंभव में कालिदास की वर्णना शक्ति अनुकूल रूप में प्रकट हुयी है कहीं विवाहित सौख्यों का आनंद तो कहीं वसंत का स्निग्ध चारू चित्रण प्रसार पा रहा है, कहीं प्रियवर की वियोग से उत्पन्न ज्वाला चित्त को जला और सांसारिक सुखों को शून्य कर रही है। इस काव्य की मुख्य विशेषता है– बाह्य प्रकृति का अति मनोहर चित्रण । आरंभ में हिमालय का आलम्बन रूप में वर्णन पठनीय है[1] तृतीय सर्ग में वसन्त के आगमन् पर वन श्री का वर्णन, चौथे सर्ग में रति–विलाप, पांचवे में शिव तथा पार्वती संवाद, कठोर तपस्या का वर्णन, ये समस्त प्रसादपूर्ण शैली के उत्कृष्ट उदाहरण है। शिव–पार्वती का मिलन मात्र रति सुख नहीं बल्कि उनसे परमपुंज तेजकार्तिकेय का जन्म होना, जिससे तारकासुर का वध होना ही विशेष था। बिना तपस्या के प्रेम कभी परिनिष्ठित नहीं हो सकता यही इस महाकाव्य का अमर संदेश है। कालिदास की सभी कृतियां प्रायः श्रृंगार प्रधान रहीं है। अतः कुमारसंभव कालिदास की काव्य कला का सुंदर प्रतीक है।

2. रघुवंश महाकाव्य –

कालिदास के समस्त काव्यों ही नहीं अपितु समग्र संस्कृत साहित्य में रघुवंश सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ रहा है भारतीय आलोचना भी इस तथ्य को स्वीकारती है। इसलिये कालिदास को

---

1. अस्त्युत्तरस्यां दिशिदेवतात्मा हिमालयोनाम नगाधिराजः !
पूर्वापरौ तोयनिधींवगाहय स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः !!

1/1 कुमारसंभव

रघुकर (रघुवंश का रचयिता) 'क इह रघुकारे न रमते' भी कहा गया है। विभिन्न काल में निर्मित 40टीकाओ से यह ज्ञात हो जाता है कि यह ग्रंथ अत्यधिक व्यापक तथा लोकप्रिय रहा है। यह महाकाव्य 19सर्गोमें निबद्ध है तथा इसमें सूर्यवंशीय राजाओं का यशोगान किया है। प्रारंभिक नौ सर्गो में श्री राम के चार पूर्वजों, दिलीप, अज,रघु और दशरथ का चित्रण किया गया है। रामचरित का वर्णन 10 से 15 सर्गों तक मिलता है तथा अन्तिम चार सर्गो में राम के वंशजों का चित्रण किया गया है। यह वीररस प्रधान काव्य है तथा इसकी प्रसादगुणमयी शैली समग्र मानव हृदय को मोहित कर लेती है। रघुवंश कालिदास की परिपक्व प्रज्ञा और प्रौढ़ प्रतिभा का उत्कृष्ट उदाहरण है। 19 सर्गो में ऐसे रोचक चरित्र चित्रण और विशद वर्णनों से उसके सौन्दर्य में वृद्धि करना, प्राकृतिक रूप से अन्तर्भाव करना, तत्पश्चात् समग्रग्रंथ में इस व्यंजना तथा शैली का उचित समावेश करना ये समस्त कार्य कवि की सर्वातिशायिनी प्रज्ञा से ही पूर्ण हो सकते है। दिलीप के गोचारण द्वारा रघु का जन्म द्वितीय, तृतीय में उनके अदम्य पराक्रम से समस्त भारतवर्ष पर दिग्विजय चतुर्थ सर्ग में, उनकी दानशीलता पंचम सर्ग में, इसके उपरान्त इन्दुमती का स्वयंवर, अज का विलाप, राम तथा सीता की विमान यात्रा, राम के द्वारा परित्यक्ता का लक्ष्मण के द्वारा संदेश भेजना, इनमें प्रत्येक धटना अत्यधिक प्राकृतिक तथा रूचिर शैली में वर्णित हुयी है। यह निःसंशय पाठक के मानस पटल पर एक अमिट छाप छोड़ जाती है। श्रंगार रस, वीर, करूण, शान्त आदि रस प्रमुख है। भावों को अधिक रमणीय बनाने के लिये अलंकारों का भी अति रमणीय प्रयोग किया गया है। भाषा अत्यन्त सुबोध है। कालिदास ने प्रभुशक्ति की कल्पना में अपने विचारों को पूणरूपेण अभिव्यक्त कर दिया है। रधुवंश महाकाव्य सुकुमार एवं मनोहर कथोपकथनों के लिये, कोमल रसोत्पत्ति के लिये, आदर्शो की अनुपम सृष्टि के लिये, कोमल एवं सुकुमार भाव व्यंजना के लिये, अद्‌भुत कल्पना शक्ति के लिये कालिदास की यश पताका को सतत् परिस्फुरित करता रहेगा। कालिदास अपनी सर्वतोन्मुखी प्रतिभा के कारण विश्व साहित्य में अद्वितीय स्थान रखते है।

अश्वघोष कृत " सौन्दरनन्द " –

कालिदास के उपरान्त ऐतिहासिक क्रम से अश्वघोष का नाम लिया जाता है। संस्कृत के बौद्ध कवियों में यह सर्वोच्च स्थान रखते है। ये ब्राह्मण थे किन्तु कालान्तर में यह बौद्ध भिक्षु बने । परम्परानुसार ये ईसा की प्रथम शताब्दी में राजा कनिष्ठ (78ई0) के गुरू और आश्रित कवि थे। वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ व्याख्याता वाल्मीकि रामायण के सफल अध्येता तथा तर्कशास्त्र के निष्णात् पण्डित थे । इनके दो ही महाकाव्य उपलब्ध है –

1. बुद्धचरित
2. सौन्दरनन्द

1. " सौन्दरनन्द " इनका प्रथम महाकाव्य है जिसमें 18 सर्ग हैं। इसमें बुद्ध के कनिष्ठ भ्राता तथा उनकी धर्मपत्नी सुन्दरी का वर्णन है। बुद्ध के उपदेश से नन्द सांसारिक मोहमाया और सम्पूर्ण सुखों को त्याग बौद्ध धर्म की दीक्षा ले लेते है। इसमें कवि का उद्देश्य अपनी आकर्षक एवं स्निग्ध काव्य शैली द्वारा मानव जाति को वौद्ध धर्म के प्रति मोड़ना, बौद्धधर्म के उच्च सिद्धान्तो को समझना तथा इहलौकिक भोगों को त्यागकर वैराग्य की ओर उन्मुख कराना ही था। इसमें बुद्ध धर्म के सिद्धान्तों का प्रतिपादन कवि ने बड़ी ही सहजता एवं सरलता से किया है। शुद्धोदन के प्रासाद में दोनों ही सुखपूर्वक यौवन व्यतीत कर रहे थे कि तथागत की दृष्टि उनपर पड़ी । अपने भाई नंद का जीवन इस मोह माया, भोगविलास को छोड़कर कल्याणमय बनाने के लिये नंद से प्रव्रज्या ग्रहण करने के लिये प्रेरित किया। किन्तु इन सुखों में आसक्त नंद मानव जीवन के इन सुखों को त्यागना नहीं चाहता था किन्तु वड़ी ही कुशलता एवं प्रलोभन से अन्त में जाकर प्रव्रज्या मार्ग पर वाध्य किया जाता है। उसी के आंतरिक भावना की, भोग वासना के प्रचुर संघर्ष की अत्यन्त मोहक अभिव्यक्ति हमें सौन्दरनन्द में दृष्टि गोचर होती है। काव्य सुलभ की दृष्टि में यह बुद्धचरित की अपेक्षा कहीं अधिक मोहक कोमल तथा सुन्दर है। शुद्ध वैदर्भी रीति के प्रयोग के साथ ही वर्णन शैली स्वाभाविक तथा प्रभावोत्पादक हैं। रूखें सूखे तथा दार्शनिक तत्वों को अधिक मधुर सरस तथा घरेलु दृष्टान्तों द्वारा समझाने का प्रयास किया गया है। अतः वे शीघ्र ही हृदयंगम् हो जाते है। अश्वघोष की कृतियों में शब्दालंकारों के उपयुक्त प्रयोग उत्पन्न पदलालित्य भी दृष्टि गोचर होता है।

2. बुद्धचरित :-

अश्वघोषकृत द्वितीय महाकाव्य बुद्धचरित है। इसके 28 सर्ग हैं। किन्तु केवल 17 सर्ग ही उपलब्ध होते हैं। वस्तुतः महाकवि अश्वघोष द्वारा रचित 13 सर्ग ही उपलब्ध होते हैं। 19 वीं शताब्दी के 'अम्रतानंद' द्वारा इसमें चार सर्ग और जोड़ दिये गये, इस तरह कुल सत्रह सर्ग ही उपलब्ध हैं। इस ग्रंथ का 404 ई0 का एक चीनी अनुवाद तथा 800ई0 का एक तिब्बती अनुवाद अवश्य उपलब्ध होता है। इस महाकाव्य में गौतम बुद्ध के चरित्र का विस्तृत वर्णन किया गया है। बुद्धचरितम् के प्रथम सर्ग में भगवान बुद्ध का जन्म, द्वितीय सर्ग में अन्तःपुर विहार, तृतीय सर्ग में संवेगोत्पत्ति, चतुर्थ सर्ग में स्त्रीनिवारण, पंचम सर्ग में अभिनिष्क्रमण, षष्ठम में छन्दक विसर्जन, सप्तम में तपोवन प्रवेश, अष्टम में अन्तःपुर विलाप, नवम में कुमारान्वेषण दशम में बिम्बिसारागमन, एकादश में कामनिन्दा, द्वादश में अराद्रदर्शन, त्रयोदश में काम विजय, तथा चतुर्दश सर्ग में बुद्धत्व प्राप्ति का निरूपण है। शेष पन्द्रहवें सर्ग से अट्ठाईसवें सर्ग पर्यन्त क्रमशः बुद्ध का काशीगमन, शिष्यों को दीक्षा देना, महाशिष्यों

का सन्यास लेकर जाना, अनाथपिण्ड की दीक्षा, पितापुत्र का समागम, जेतवन की स्वीकृति, सन्यास का झरना, आम्रपाली के उपवन में आयु का निर्णय, लिच्छवियों पर अनुकम्पा, निर्वाण मार्ग में महापरिनिर्वाण, निर्वाण की प्रशंसा तथा धातु विभाजन निरूपित किया गया है। इस प्रकार महाकवि अश्वघोष ने भगवान वुद्ध के सम्पूर्ण जीवन की अनेक घटनाओं का बड़ा ही सजीव समुज्ज्वल एवं मनोहर चित्र चित्रित किया है। सम्पूर्ण काव्य की भाषा शैली प्रासादिक, अत्यन्त प्रांजल एवं मधुर है। प्राकृतिक वर्णन का अति सजीव चित्रण किया गया है। तथा उपमायें बड़ी ही परिष्कृत रूप में प्रयुक्त है। बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों का कथा प्रवाह के मध्य रोचक रूप प्रतिपादित किया गया है। गूढ़ दार्शनिक तत्वों को काव्य रूप में प्रतिपादित करने के कारण शैली में कुछ दुरूहता तथा शिथिलता अवश्य आयी है फिर भी यह पक्तियाँ इनकी रचना चातुरी, काव्य कौशल के उत्कृष्ट उदाहरण–

विबभौ करलग्नवेणुरन्या स्तनविस्रस्तसितांशुका शयाना।
ऋजुषट्पदपंक्तिजुष्टपद्मा जलफेनप्रहसन्नटा नदीव ।।

अन्य – *शुचौशयित्वा शयने हिरण्मये प्रबोध्यमानो निशि तूर्यनिस्वनैः।*
कथंबत स्वप्स्यति सोऽद्य मे व्रती पटैकदेशांतरिते महीतले ।।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अश्वघोष के काव्य संस्कृत के भूषण है। अश्वघोष के काव्य पाठकों के लिये हृदयग्राही हुये हैं। उनके काव्य शान्त रस प्रधान हैं तथा श्रंगार रस के साथ करूण रस का सुन्दर संयोग सह्रदय पाठकों को अपनी ओर खींचता है। प्राकृतिक चित्रण के साथ–साथ मानव मनोभावों का भी अति सुन्दर एवं सूक्ष्म वर्णन किया है। उनकी शैली सरल तथा रोचक है।

3. भारविकृत किरातार्जुनीयम् –

महाकाव्यकारों में महाकवि कालिदास और अश्वघोष के पश्चात् भारवि का ही नाम आता है। महाकवि भारवि द्वारा विरचित किरातार्जुनीयम् ही एक मात्र महाकाव्य उपलब्ध होता है। भारवि का प्रभाव माघ (600) की रचनाओं में दृष्टिगोचर होता है तथा भारवि की रचनाओं पर कालिदास का प्रभाव पड़ा है। इससे यह प्रतीत होता है कि भारवि कालिदास के बाद के तथा माघ से पहले के कवि हैं। वाण (650) की रचना में भारवि का उल्लेख नहीं किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि उस समय भारवि ने अधिक ख्याति प्राप्त नहीं की थी किन्तु ऐहोल के 634 ई0 के शिलालेख में पुलकेशी द्वितीय की प्रशस्ति[1] में भारवि का नाम स्पष्ट रूप से उल्लिखित हैं।

---

1. *येनायोजि नवेश्मस्थिरमर्थ विधौ विवेकिना जिनवेश्म ।*
स विजयतां रवि कीर्तिः कविताश्रित कालिदास भारवि कीर्तिः ।।

जिससे स्पष्ट होता है कि भारवि का स्थिति काल 634 से पहले का है तथा वे दक्षिण भारत में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकें थे।

भारवि के यश गौरव का आधार उनका एकमात्र महाकाव्य 'किरातार्जुनीयम्' ही है। 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य ने प्रांजल कविता की दृष्टि से और व्यवहारिक नीति प्रतिपादन की दृष्टि से संस्कृत साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है। महाकवि भारवि ने अति आकर्षक और रोचक भाषा में नीति के क्लिष्ट तत्वों का हृदयंगम कराने में सचमुच अद्भुत सफलता प्राप्त की है। अतः विद्वत्समाज ने इसे बड़ा ही सम्मान प्रदान किया है। आपके विषय में अति सुन्दर उक्ति किसी कवि के द्वारा कही गयी है–

नवसर्गेगते माघे नवसर्गे च नैषधे ।
नवसर्गे किराते च नवशब्दो न विद्यते ।।
उपमाकालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यम् माघे सन्ति त्रयोगुणा।।

इस तरह संस्कृत की वृहत्रयी किरात, माघ, नैषध में इसका प्रमुख स्थान है।

किरातार्जुनीयम् का कथानक महाभारत के वनपर्व से लिया गया हे। 18 सर्गो में आबद्ध इस महाकाव्य में तपस्या करते हुये अर्जुन का किरात वेशधारी शिव के साथ युद्ध होना ही वर्णित किया गया है। धूत क्रीड़ा में अपना सर्वस्व हारकर पाण्डव द्वैतवन में रहते है। एक गुप्तचर दुर्योधन के सुव्यवस्थित शासन का वर्णन उनके समक्ष करता है जिसे सुनकर भीम और द्रोपदी युधिष्ठर को युद्ध के लिये प्रेरित करते है किन्तु धर्मराज युधिष्ठर युद्ध के लिये उद्यत नहीं है। तब महर्षि वेदव्यास 'पाशुपतास्त्र' पाने के लिये तपस्या करने का परामर्श देते है। तब अर्जुन इन्द्रकील पर्वत पर ' पाशुपत अस्त्र ' प्राप्ति हेतु तपस्या करते हैं जहाँ कई सुरांगनायें उनकी तपस्या भंग करने का प्रयास करती है। जिसमें वह असफल होती है। अन्त में भगवान शंकर किरात् वेशधारी बन अर्जुन से युद्ध करते हैं तथा अर्जुन के साहस और बाहुबल से प्रसन्न होकर वह पाशुपत नामक दिव्य अस्त्र अर्जुन को देते है। जो कि अर्जुन की तपस्या का उद्देश्य था । यही इस महाकाव्य की कथा का सारांश है। इनके आरंभ के तीन सर्ग विशेष क्लिष्ट होने के कारण ' पाषाणत्रय ' नाम से विख्यात हैं।

किरातार्जुनीयम् का आरंभ 'श्री' शब्द से हुआ है – "श्रिय कुरूणामधियापस्य पालिनीम् " तथा प्रत्येक सर्ग के अन्त में लक्ष्मी शब्द का प्रयोग हुआ है। 'किरातार्जुनीयम्' का प्रमुख रस वीर है। संस्कृत साहित्य में इसके समान ओजगुण से परिपूर्ण इस तरह का उग्रकाव्य अन्य कोई

नहीं मिलता। वीर रस के प्रयोग में कवि को अद्भुत सफलता मिली है। गौण रूप में श्रंगार तथा अन्य रसों का वर्णन किया गया है। सूर्यास्त, पर्वत, जलक्रीड़ा, ऋतु, तपस्या, सुरांगना विहार किरात अर्जुन आदि के युद्ध आदि के विशद वर्णन में उन्होंने अपनी अद्भुत वर्णन शक्ति को प्रदर्शित किया है। चित्रकाव्य तथा श्लेष के कारण कहीं-कहीं काव्य क्लिष्ट बन गया है। अतः इनकी कविता को नारिकेल फल के समान बताया गया है। " नारिकेल फल संमितंवचोभारवैः " । भारवि राजनीति के अच्छे ज्ञाता थे। इनकी अनेक सूक्तियां विद्वानों की जिह्वा पर नाचती है। यह काव्य अपने अल्प शब्दों में विपुल अर्थ के लिये विख्यात है- ' भारवेरर्थ गौरवम् से ' इनके अर्थ गाम्भीर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इनकी काव्य शैली के कुछ उदाहरण[1] पठनीय है। आपने कुछ पद्यो में केवल दो ही तथा कुछ में एक ही व्यंजन का प्रयोग किया है[2]। इन्होंने नीति विषयक अनेक सूक्तियों का अति सुन्दर प्रयोग किया है। यथा- हितं मनोहारी च दुर्लभं वचः, वरंविरोधोऽपि समं महात्मभिः, सुदुर्लभाः सर्वमनोरमा गिरः न वंचनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः, सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदं, गुणाः न संहतिः , विचित्र रूपा खलु चित्तवृत्तयः, अहोदुरन्ता बलवदविरोधिता इत्यादि अति मनोरम सूक्तियों का प्रयोग दृष्टव्य होता है। इस तरह अनेक गुणों, साहित्य सौन्दर्य, अर्थ गाम्भीर्य, तथा पदावली के प्रयोग में मणिकांचन संयोग का आदर्श उपस्थित करता है। अतः कालिदास और अश्वघोष के काव्यों के पश्चात् यह महाकाव्य सम्मानीय स्थान पाने के सर्वथा योग्य है।

4. भट्टिकृत 'रावणवध' या 'भट्टिकाव्य' -

भट्टि द्वारा रचित महाकाव्य 'रावणवध' है जो इनके नाम 'भट्टिकाव्य' से भी प्रसिद्ध है। लगभग साढ़े तीन हजार श्लोकों में आबद्ध 22 सर्ग युक्त महाकाव्य है। उसमें श्री रामचन्द्र जी की जीवन गाथा तथा उनके सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं का विशद वर्णन है। इनके महाकाव्य में 10 से लेकर 13 सर्गो तक काव्य की सर्व विशेषताओं का वर्णन मिलता है। भट्टि का काव्य व्याकरण के ज्ञाताओं के लिये दीपक के तुल्य तथा इससे भिन्न व्यक्ति के लिये

---

1. मुखैरसौ विद्रुमभंगलोहितैः शिखाः पिशंगी कमलस्य विभ्रती।
   शुकावलिर्व्यक्तशिरीषकोमला धनुः श्रियं गोत्रभिदोऽनुगच्छति ।।
   4/36 (किरातार्जुनीयम्)
2. न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु ।
   नुन्नोऽनुन्नो न नुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुन् ।।
   15/14 (किरातार्जुनीयम्)

अंधे के हाथ दर्पण के समान है ऐसा इन्होंने स्वयं अपने काव्य के विषय में लिखा है।[1] बाईस सर्गो के इस महाकाव्य में रोचकता, मधुरता तथा सरसता का अभाव नहीं दिखलाई पड़ता है। भट्टि अपने समय के अलंकार शास्त्र के पूर्ण परिचित हैं। उनके काव्य में शब्दालंकार एवं अर्थालंकार दोंनों का खूब प्रयोग हुआ है। दसवें सर्ग के नवें श्लोक में यमक का अति रमणीय रूप देखने को मिलता है।[2] कुछ आलोचकों ने भट्टिकाव्य पर कृत्रिमता और आडम्बर की अधिकता का दोषारोपण किया है। पर उनके काव्य के विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखते हुये यह कहना अनुचित नहीं होगा कि उनमें वास्तविक काव्य के गुणों की कमी नहीं। भट्टि ने 22 सर्गो का जो विपुलकाय महाकाव्य प्रस्तुत किया उसमें रोचकता मधुरता और काव्योचित सरसता का अभाव नहीं है। उनके प्रभावशाली संवाद, प्राकृतिक दृश्यों के मनोहारी चित्र, प्रौढ़ व्यंजना प्रणाली तथा वस्तु वर्णन उत्कृष्ट कोटि के हैं।

5. माघकृत 'शिशुपाल वध ' महाकाव्य :–

वृहत्रयी में सर्वश्रेष्ठ माना जाने वाला महाकवि माघ कृत शिशुपाल वध 22 सर्गो में आबद्ध है। लगभग साढ़े सौलह सौ पद्यों के इस महाकाव्य का कथानक महाभारत से लिया गया है। यह एक कलापूर्ण कोटि का महाकाव्य हैं। इस काव्य का नाम वर्णनीय घटना के आधार पर आधारित है। शिशुपाल जो कि युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भगवान श्री कृष्ण के द्वारा मारा जाता है यही इस महाकाव्य का मुख्य विषय है। माघ उच्चकोटि के कवि है आपका महाकाव्य प्रौढ़ एवं उदात्त शैली का उत्कृष्ट उदाहरणहै। सम्पूर्ण महाकाव्य में ओजोगुणमयी कविता का विकास दिखाई देता है तथा शैली की असाधारणता सर्वत्र झलकती है। कुछ पद्य वास्तव में वर्णन सौन्दर्य, विचार गाम्भीर्य एवं भाव सौष्ठव में अद्वितीय ही है। सम्पूर्ण संवाद बड़े ही सरल एवं ओजपूर्ण है। उपमायें भी अत्याधिक रोचक हुयीं है। अनुप्रासों[1] में माघ का पदलालित्य रमणीय बन पड़ा है। महाकवि माघ के काव्य का आदर्श किरातार्जुनीयम् महाकाव्य है। महाकवि माघ का भाषा पर पूर्ण अधिकार है। भारतीय आलोचकों ने एक मत होकर माघ की भूरि–भूरि प्रशंसा कर प्रभूत प्रशंसा की वृष्टि की है– आपमे भारवि का अर्थगौरव, दण्डी का पदलालिव्य तथा कालिदास की उपमा

---

1. दीपतुल्यः प्रबन्धोऽयं शब्दलक्षणचक्षुषाम् ।
हस्तादर्श इवान्धानां भवेद् व्याकरणादृते ।। 22/23 (रावणवध)

2. न गजा नगजा दयिता विगतं विगतं ललितं ललितम् ।
प्रमदा प्रमदामहता महतामरणं मरणं समयात् समयात् ।। 10/9 (रावणवध)

1. मधुरया मधुबोधितमाधवीमधुसमृद्धिसमेधित मेधया ।
मधुकरांगनया मुहुरून्मदध्वनिभृता निभृताक्षरमुज्जगे ।।
6/20 शिशुपालवध

इन तीनों गुणों का सन्निवेश बताया गया है।

" उपमा कालिदासस्य भावेरर्थगौरवम् ।

दण्डिनः पदलालित्यम् माघे सन्ति त्रयोगुणाः ।।"

6. कुमारदास कृत " जानकी हरण " –

संस्कृत के महाकवि कुमारदास कृत 'जानकी हरण' विख्यात महाकाव्य है। पच्चीस सर्गो में आवद्ध इस महाकाव्य की कथा रामायण पर आधारित हे। इसमें दशरथ की कथा से रावणवध तथा राम के राज्याभिषेक तक की कथा का विशद वर्णन है। इसके पच्चीस सर्गो में से केवल पन्द्रह सर्ग ही उपलब्ध होते हैं। कुमार दास ने पाणिनीय व्याकरण की प्रसिद्ध टीका 'काशिकावृत्ति' (650) से अपना परिचय प्रकट किया है। वामन (800ई0) ने अपने ग्रंथ में 'जानकी हरण' से उद्धरण दिये है। अतः कुमारदास का स्थिति काल 650 से 750 के मध्य माना जाता है। राजशेखर द्वारा कुमार दास की प्रशंसा इस प्रकार की गयी है –

" जानकीहरणं कुर्तं रघुवंशे स्थिते सति।

कविः कुमारदासश्च रावणश्चयदिक्षमः ।।"

7. रत्नाकर कृत 'हरविजय' –

कवि 'रत्नाकर' द्वारा रचित 'हरविजय' महाकाव्य एक वृहत्काय महाकाव्य है। इस महाकाव्य की अद्वितीयता के परिचायक इसके पचास सर्ग हैं। भगवान शिव द्वारा अन्धक असुर का वध ही इस महाकाव्य का प्रमुख कथानक है। वसन्ततिलका की प्रचुरता से युक्त 4320 पद्य इस महाकाव्य में हैं। यद्यपि इस महाकाव्य का कथानक लघु है तथापि कवि ने अपनी वर्णना शक्ति द्वारा उसे अधिक विपुलकाय बना दिया है। रत्नाकर काश्मीरी नरेश चिप्पट जयापीड़ (779–813ई0) के आश्रित कवि थे । कल्हण की ' राजतरंगिणी ' से विदित होता है। कि इन्होंने राजा अवन्तिवर्मा के राज्यकाल (855–884) में प्रसिद्धि पाई थी ।

मुक्ताकणः शिवस्वामी कविरानन्दवर्धनः ।

प्रथां रत्नाकरश्चागात्साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः।। (5/39 राजतरंगिणी)

क्षेमेन्द्र[1] ने रत्नाकर के वसन्त तिलका की भूरि–भूरि प्रशंसा की हैं। " अलंकार–विमर्श"[2] मे तथा

1. " वसन्ततिलका रूढा वाग्वल्ली गाढसंगिनी ।
   रत्नाकरस्योत्कलिका चकास्त्याननकानने ।। " (क्षेमेन्द्र)
2. " माघः शिशुपालवधं विदधत् कविमदवधं विदधे।
   रत्नाकरः स्वविजयं हरविजयं वर्णयन् व्यवृणोत् ।। " (अलंकार–विमर्श)

राजशेखर[3] के अनुसार तो इन्हें चार रत्नाकरों (समुद्रों) को पर्याप्त न मानकर पांचवे इस रत्नाकर (कवि) की ब्रह्मा द्वारा सृष्टि बतलायी है।

4. हरिचन्द्रकृत 'धर्मशर्माभ्युदय' –

' धर्मशर्माभ्युदय' नामक महाकाव्य जैन महाकाव्यों में विशेष उल्लेखनीय है। इसके रचयिता 'हरिचन्द्र' का समय निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता किन्तु कुछ उल्लेखों के आधार पर इसका समय 11वीं शताब्दी माना जाता है। 'सदुक्तिकर्णामृत'[4] में उन्हें महाकवियों की श्रेणी मे रखा गया है। इक्कीस सर्गों में आबद्ध इस महाकाव्य में पन्द्रहवें तीर्थकर धर्मनाथ की जन्म से निर्वाण पर्यन्त कथा वर्णित है। वैदर्भी रीति में लिखे गये इस महाकाव्य में 'भारवि' और 'माघ' के सदृश 'हरिचन्द्र' ने भी 19वें सर्ग में चित्रालंकारों की भरमार की है –

रैरोऽरि रोरूररुत्काकुकंकेकिकंकिकः ।

चञ्चचञ्चू चञ्चिचोञ्चे ततताततीति तं ततः ।।

19/32 (चतुरक्षरः)

9. कविराज कृत 'राघवपाण्डवीय' –

कविराजकृत 'राघवपाण्डवीय' महाकाव्य एक अद्भुत महाकाव्य है। कविराज का स्थितिकाल 12वीं शताब्दी था इनका नाम 'माधवभट्ट' था तथा कविराज, सूरि पंडित आदि उनकी उपाधियां थी। इस महाकाव्य के प्रत्येक श्लोक में श्लेष द्वारा रामायण और महाभारत की कथा का साथ–साथ वर्णन किया है यथा –

" नृपेण कन्यां जनकेन दित्सितामयोनिजां लम्भयितुं स्वयंवरे।

द्विजप्रकर्षेण स धर्मनन्दनः सहानुजस्तां भुवनमप्यनीयत ।। (राघवपाण्डवीयम्)

' राघव पाण्डवीयम् ' महाकाव्य का कई कवियों द्वारा अनुकरण किया गया है।

10. श्री हर्षकृत 'नैषधमहाकाव्य' –

श्री हर्ष कृत 'नैषधीयचरितम्' एक वृहत्काव्य है। ये श्री हर्ष उन सम्राट हर्षवर्धन से सर्वथा भिन्न है, जो 'रत्नावली' 'नागानन्द' और 'प्रियदर्शिका' नाटिका के रचयिता थे। श्री हर्ष कन्नौज के राजा जयचन्द्र राठौर की सभा में रहते थे। इनका स्थितिकाल

---

3. " मा स्म सन्तु हि चत्वारः प्रायो रत्नाकरा इमे।
इतीव सत्कृतो धात्रा कवी रत्नाकरोऽपरः ।। " (राजशेखर)

4. " सुबन्धौभक्तिर्नः क इह रघुकारे न रमते, धृतिर्दाक्षीपुत्रे हरति हरिचन्द्रोऽपि हृदयम् ।
विशुद्धोक्तिः सूरः प्रकृतिमधुरा भारविगिरः तथाप्यन्तर्मोदं कमपि भवभूतिर्वितनुते ।।

बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध है। बाईस सर्गों के इस महाकाव्य में निषध देश के राजा नल के पावन चरित्र का बड़ा ही रमणीय चित्रण किया गया है। यह मुख्यतः वेदर्भी रीति प्रधान महाकाव्य है। इसका कथानक स्रोत भी पौराणिक ही है। 'नैषध' में वास्तविक काव्य सौन्दर्य तथा शोभतिशायक अलंकारों का मणिकांचन संयोग है। यह महाकाव्य संस्कृत साहित्य जगत की अनुपम निधि है। आपकी स्वभाव मधुर कविता सभी के मन को हर लेती है। शब्द और अर्थ की नवीनता उसे वास्तव में " एकार्थमत्यजतो नवार्थधटनाम्" बना देती है। श्री हर्ष की आलोक–सामान्य प्रतिभा से जाज्वल्यमान नैषध रूपी हीरक के सामने 'किरातार्जुनीय' तथा 'शिशुपालवध' आदि काव्यों की आभा फीकी पड़ जाती है– " उदिते' नैषधे काव्ये क्व माघः क्व च भारविः " । अपने विषय में श्री हर्ष की उक्ति है

" ताम्बूलद्वयमासनंच लभते यः कान्यकुब्जेश्वरात् ,
यः साक्षात् कुरूते समाधिषु परं ब्रह्म प्रमोदार्णवम् ।
यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपरास्तर्केषु यस्योक्तयः ,
श्री श्री हर्ष कवेः कृतिः कृतिमुदे तस्याभ्युदीयादियम् ।।

22/154 नैषधीयच0

11. मंखक कृत " श्री कण्ठचरित " –

श्री कण्ठचरित 25 सर्गो से युक्त एक महाकाव्य है। इसके रचयिता श्री मंखक हैं। इस महाकाव्य में श्री मंखक ने शिव और त्रिपुर के युद्ध का वर्णन किया है। इसके सातवें सर्ग से लेकर 16वें सर्ग तक जलक्रीड़ा, सन्ध्या, चन्द्रोदय, प्रसाधन, पानकेलि, प्रभातवर्णन आदि का विशद वर्णन मिलता है। पच्चीसवें सर्ग में तत्कालीन कश्मीरी कवियों का साहित्यिक वर्णन किया गया है।

इन प्रमुख प्राचीन महाकाव्यों के पश्चात् अर्वाचीन महाकाव्यों में " झाँसीश्वरी चरितम् " महाकाव्य का स्थान निर्धारित करने से पूर्व अर्वाचीन महाकाव्यों का अध्ययन आवश्यक बन जाता है। अतः अर्वाचीन महाकाव्यों का संक्षिप्त निरूपण करने के पश्चात् ही 'झाँसीश्वरीचरितम्' महाकाव्य का स्थान निर्धारित किया जा सकता है, अतः सर्वप्रथम अर्वाचीन महाकाव्यों का अध्ययन प्रस्तुत करते हैं।

अर्वाचीन ऐतिहासिक महाकाव्य –

अर्वाचीन महाकाव्यों को दो भागों मे विभक्त कर सकते हैं – 1. वीसवीं सदीं के महाकाव्य 2. राजस्थान के कुछ ऐतिहासिक महाकाव्य । सर्वप्रथम वीसवीं सदीं के

महाकाव्यों का संक्षिप्त उल्लेख करते है।

बीसबीं शती के महाकाव्य –

1. तिलक यशोऽर्णव –

इस महाकाव्य के प्रणेता श्री माधव का जन्म महाराष्ट्र के ब्राह्मण परिवार में सन् 1880 ई0 में 29 अगस्त को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री हरि था। श्री माधव को संस्कृत के प्रति अपार प्रेम था । आप महाराष्ट्र विद्यापीठ के उपकुलपति रहे। जहाँ आपने तिलक चरितात्मक उपलब्ध समस्त ग्रंथों का अध्ययन किया, तत्पश्चात् इस विशालकाय महाकाव्य की रचना की। कवि की तिलक के प्रति अगाध श्रद्धा थी। यह विपुलकाय महाकाव्य तीन खण्डो में विभक्त है। यह महाकाव्य में 85 तरंगो तथा 9507 श्लोंको में विभक्त है। इस महाकाव्य में समुद्र के समान महानतम् तथा विशालतम् व्यक्तित्व के धनी ऐतिहासिक महापुरूष महात्मा तिलक के यशस्वी जीवन को वर्णित किया गया है।

उस समय भारत की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। इस महाकाव्य का प्रधान रस करूण है तथा अन्य रसों की अभिव्यंजना गौण रूप में हुयी है। लोकमान्य तिलक का स्वर्णारोहण वर्णन पाठक के हृदय चंचरीक को विगलित कर देने वाला है –

" मुम्बानगर्या सर्वत्र मार्गे मार्गे स्थिता जनः।
वार्ता वदन्त श्रृण्वन्तः पठन्तो दुःख सकुलां ।।

(85/63 'तिलकयशोऽर्णव)

कुछ अन्य उदाहरण भी आपके महाकाव्य के उत्कृष्ट उदाहरण है।[1]

ऐतिहासिकता की दृष्टि से यह सफल महाकाव्य है। तथा इस महाकाव्य में "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है और हम इसे लेकर रहेंगे " जैसे ऐतिहासिक महाघोष का वर्णन बड़ी ही सजीवता तथा कुशलता से किया गया है।

2. महात्मा गाँधि चरितम् –

'गाँधीचरितम्' के प्रणेता पं0 साधुशरण मिश्र है। देववाणी का ज्ञान

---

1. मुम्बापुरी मौहपुरीजाता शोक पुरी वदा।
   दिङ्मूढ़ा सर्वेआसन् जनाः कालस्य मृत्युना।
   पवित्रो निहितो देहस्तिलकस्यासने यदा,
   हाहाकारः कृतौ लोकरसंख्यैमिलितैस्तदा ।।

   9/104 " तिलक यशोऽर्णवः "

पं0 साधुशरण मिश्र को स्ववंश से उत्तराधिकार में मिला तथा आपके वंश पर सरस्वती की महती अनुकम्पा परम्परागत रही। 'गान्धिचरितम्' में राष्ट्रपिता महात्मागाँधी के जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त वर्णन किया गया है। उन्नीस सर्गों में आवद्ध इस महाकाव्य में महात्मा गाँधी के संघर्षमय जीवन की ऐतिहासिक घटनाओं का विशद् वर्णन है। स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गाँधी का नेतृत्व सर्वाधिक महत्वशाली रहा है।

प्रकृत महाकाव्य का प्रकाशन सम्बत् 2019 के अनुसार 1962 में हुआ। गाँधी जी के महनीय जीवन की ऐतिहासिक गाथा में रस, छंद, अलंकार, भाषा सौष्ठव, प्रकृति चित्रण आदि का सुन्दर परिपाक हुआ है। यह महाकाव्य गाँधिचरितात्मक अन्य महाकाव्यों से ऐतिहासिक की दृष्टि से सर्वोपरि है।

3. स्वराज्य विजयम् –

स्वराज्य महाकाव्य के प्रणेता " विद्यामार्तण्ड " स्वर्गीव श्री द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री का जन्म 1892 ई0 में उत्तर प्रदेश मुजफ्फरनगर के पारसौली ग्राम में हुआ था।आप संस्कृत वाङ्मय के प्रकाण्ड पण्डित, आर्यजाति के प्रतिष्ठित मार्गदर्शक एवं संस्कृत की सृजनात्मक परम्परा के एक श्रेष्ठ रत्न कवि थे।

'स्वराज्यविजय' महाकाव्य बीस सर्गों में आबद्ध स्वातान्त्रय संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में गाँधी जी के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है। इस सम्पूर्ण महाकाव्य में स्वतन्त्रता के आन्दोलन में भाग लेने वाले वीरों के चरित्र को उभारा गया है। उसमें कवि ने प्रमुखतः स्वातान्त्रय संघर्ष के ऐतिहासिक कथानक का सुन्दर वर्णन किया है।

इस महाकाव्य के आरम्भिक सर्ग में भारत का भौगोलिक वर्णन, भारत में वसने वाले चारो वर्णो, आश्रमचतुष्ट्य, आश्रम में पढ़ाये जाने वाले विविध वर्ण्य विषय, प्राणिहिंसा का निषेध, वैज्ञानिक समृद्धि आदि का वर्णन है, तथा भारत की अद्यागति का सुन्दर वर्णन देखने को मिलता है। सन् 1857 का विद्रोह आदि विषयों का विशद चित्रण है।

4. गंगा सागरीयम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता स्वर्गीय श्री विष्णुदत्त शुक्ला का जन्म 1895 ई0 में हुआ था । 'गंगासागरीयम्' महाकाव्य के रचनाकाल के विषय में कवि ने स्वयं संकेत किया है कि इसकी रचना संवत 2018 में हुयी ।[1] यह संस्कृत का रूपकात्मक महाकाव्य है। पाश्चात्य

---

1. वस्विन्द्राकाशनेत्राणां वत्सरे श्रावणीतिथौ।
विष्णुदत्तेन शुक्लेन पूर्ण काव्यमिदं कृतम् ।।

विद्वान् इसे 'एलिगिरी' विद्या के नाम से कहते हैं। इस महाकाव्य के पात्र प्राकृतिक है जैसे – सागर, गंगा, हिमालय, मेघ इत्यादि। इस महाकाव्य की कथावस्तु नौ सर्गो में आवद्ध है। इसमें " 419 " पद्य है। गंगा के माध्यम से कवि ने लोकाचार आदि विषय में अपने विचार व्यक्त किये है।

यतो लोकाचारो भवति हि विद्यानं न नियतेः।
ततोऽस्यावज्ञायां विषय इह वाधा ननु कुतः ।।

7/11 " गंगासागरीयम् "

तथा सागर के माध्यम से स्वाधीनता सेनानी महाकवि ने विश्वशान्ति[2] का संदेश दिया है। जैसे –

अपहरति कदासौ नैव कस्यापि राज्यं नहि खलु निजसीमां लंघते राष्ट्रवृद्ध्यै।
परम्निरभिमानः शीलसद्वृत्तिमूर्तिरभवदवनिचक्रे तादृशो नैव सम्राट ।।

6/36 गंगासागरीयम्

5. गान्धि गौरवम् –

" गान्धिगौरवम् " के रचयिता श्री शिवगोविन्द त्रिपाठी का जन्म नमिषाख्य तीर्थ के समीप हरदोई जनपद के अन्तर्गत 'सण्डीला' नगर में सन् 1898 ई0 में हुआ था।

यह महाकाव्य महात्मा गाँधि के पावन जीवन आदर्शों पर आधारित है। उत्तर प्रदेश सरकार ने सन् 1974–75 में इस महाकाव्य को राज्य साहित्य पुरस्कार से सम्मानित किया थां। इस सफल महाकाव्य के रूप में जाना जाने वाला है इस महाकाव्य में भाव पक्षीय एवं कलापक्षीय विशेषताओं का मणिकांचन संयोग है। गाँधि गौरवम् बीसबीं शताब्दी के महाकाव्यों में एक अमर कृति के रूप में स्थान प्राप्त किये है।

6. विश्वमानवीयम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता श्री विद्याधर शास्त्री है। इनका जन्म 1901 ई0 हुआ था। आधुनिक विषय से सम्बद्ध यह महाकाव्य मानव की चन्द्रयात्रा पर आधारित है। यह आठ सर्गो में आवद्ध लघुमहाकाव्य है। चन्द्रमा का, नव ग्रहों तथा उनके स्थान का आह्मलादक रूप कवि वे प्रस्तुत किया है –

---

2 *स्वाधीनता सेनानीः पं0 विष्णुदत्त शुक्लस्य व्यक्तित्वं कृतित्वञ्च (शोधलेख) – डा0 कैलाशनाथजी द्विवेदी*

दिल्ली संस्कृत अकादमी सं0 2000 पृ0 353-364

रजतकान्तिमती विमलद्युतितिर्गगनपारक~रीयमहो तरी।

परिनिमज्जति भाव सरोवरं सपपिकान् विवशं न कवीन् सदा।।

6/4 (विश्वमा0)

7. ' नेहरूचरितम् ' -

आ0 श्री ब्रह्मानन्द शुक्ल प्रणीत यह बीसबीं शती का उत्कृष्ट महाकाव्य है। इतिहास वीरपुरूष राष्ट्रनायक पण्डित 'जवाहरलाल नेहरू' के पावन चरित्र को प्रकृत महाकाव्य में उच्च कोटि की साहित्यिक शैली द्वारा संजोया गया है यह ग्रन्थ रत्न 707 श्लोंको में आबद्ध अष्टादश सर्गो में ग्रथित है। ऐतिहासिक इतिवृत, रसनिष्पति, वर्ण्यविषय एवं प्रकृति चित्रण, भाषा शैली छंद अलंकार आदि दृष्टि से यह ग्रंथ एक ऐतिहासिक महाकाव्य है। इस महाकाव्य में ऐतिहासिक घटनाओं का तथ्यपरक वर्णन है। पं0 नेहरू के जन्म, वंश, उनका अध्ययन, विवाह, देशसेवा आदि को कवि ने इतिहास सम्मत ही प्रस्तुत किया है।

8. नेहरू यशः सौरभम् -

इस महाकाव्य के रचयिता 'गोस्वामी बलभद्र' प्रसाद शास्त्री है आपका जन्म हरदोई जनपद के अन्तर्गत सकाहा ग्राम में हुआ। आपने साहित्याचार्य तथा एम0 ए0 परीक्षायें ससम्मान उत्तीर्ण की तथा आपने 'साहित्यरत्न' एवं 'साहित्यांकार' उपाधियों को धारण किया ।

' नेहरू यशः सौरभम्' गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री जी की अप्रतिम कृति है जिसमें राष्ट्रचिन्तक पं0 जवाहर लाल नेहरू के उदात्त जीवन तथा राष्ट्रीय चरित्र को सुन्दर रूप में वर्णित किया गया है। नेहरू जी ने स्वराज संघर्ष पथ पर चलकर राष्ट्र के लिये समर्पित अपने यश द्वारा विश्व को उज्ज्वल किया है। कवि नेहरू जी के पावन चरित्र का वर्णन अति निष्ठा के साथ कर सका है। इस महाकाव्य में 12सर्ग तथा 579 श्लोक निबद्ध हैं। रस, छंद, अलंकार, प्रकृति चित्रण सभी अपने उत्तम रूप में प्रयुक्त हुये है।

9. सुभाष चरितम् -

'सुभाषचरितम्' महाकाव्य के प्रणेता श्री विश्वनाथ केशव छत्रे है इन महानुभाव का जन्म 27 दि0 1906 ई0 में नासिक पंचवटी स्थान में हुआ था। प्रतिभावान होने के कारण आपने संस्कृत, मराठी और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया । यह महाकाव्य 10 सर्गों में विभक्त है तथा उसमें 627 श्लोक निबद्ध है। इस महाकाव्य में महान देशभक्त, त्यागमूर्ति, देशप्रेमी राष्ट्रनेता श्री 'सुभाषचन्द्र वोस' के ओजस्वी जीवन को उभारा गया है। वही इस महाकाव्य के नायक है जो कि

शारदेय चन्द्र तुल्य उज्जवल कीर्ति युक्त, महात्यागी, कर्मशील, कर्मठ एवं स्वातान्त्रययाग में आहुति देने वाले वीर है। स्वातान्त्र्य भावना से ओतप्रोत होने के कारण इसे ऐतिहासिक महाकाव्य कहा जा सकता है।

10. मालवीय चरितम् –

'मालवीय चरितम्' महाकाव्य के प्रणेता कविवर स्व0 पं0 'राजकुँवेर मालवीय' हैं। मालवीय चरितम् पं0 रामकुबेर की प्रमुख रचना है। इसका प्रकाशन सन् 1965 में हुआ। यह महाकाव्य " महामना मदनमोहन मालवीय" के जीवन पर आश्रित है। इसकी कथवस्तु 15 सर्गों में विभक्त हे। इस महाकाव्य में 'पं0 मदन मोहन मालवीय ' के चरित्र को अति कुशलता से प्रस्तुत किया गया है। यह एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक कृति है। मालवीय जैसे महनीय इतिहास पुरूष पर आधारित प्रकृत महाकाव्य बीसवीं शती का एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक महाकाव्य है।

11. दयानन्द दिग्विजयम् –

प्रकृत महाकाव्य के प्रणेता कविरत्न ' पं0 अखिलानन्द शर्मा" है। यह काव्य पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध दो भागों में विभक्त है। पूर्वार्द्ध में 10 तथा उत्तरार्द्ध में 11 सर्ग है। इस तरह कुल 21 सर्गों में यह काव्य आबद्ध है। महाकाव्य के नायक आदर्श पुरूष, लोक नायक इतिहास प्रसिद्ध महर्षि दयानन्द सरस्वती जी है। इसमें भारतीय संस्कृति के रक्षक दयानन्द सरस्वती के जीवन पक्ष को उभारा गया है।

12. पूर्वभारतम् –

श्री "प्रभुदत्त स्वामी" प्रणीत महाकाव्य वीसवीं शती के ऐतिहासिक महाकाव्यों में प्रमुख स्थान रखता है। 21 सर्गो में विभक्त इस महाकाव्य में 1444 श्लोक निबद्ध है। इस महाकाव्य में भारत की गौरव गाथा को प्रौढ़ कोमल तथा कमनीय शैली में वर्णित किया गया है। इसमें मनु, युधिष्ठिर, पोरस तथा सिकन्दर आदि से सम्बन्धित ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन किया गया है।

13. भारत विजयम् –

यह महाकाव्य भी 'श्री प्रभूदत्त स्वामी ' द्वारा रचित महाकाव्य है।

14. मौर्यचन्द्रोदयम् –

श्री प्रभुदत्त स्वामी द्वारा ही प्रणीत यह महाकाव्य इक्कीस सर्गों में निबद्ध है। इस महाकाव्य का कथानक ऐतिहासिक है। 19वें सर्ग तक की प्राप्त हस्तलिखित प्रति में 1057 श्लोक

है। प्रकृत महाकाव्य में चन्द्रगुप्त से सम्बन्धित ऐतिहासिक घटनाओं को वर्णित किया गया है। जैन तथा बौद्ध ग्रंथो में विखरी हुयी घटनाओं को सुन्दर रूप में संजोया है।

15. शिवराज्योदयम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता 'डा0 श्रीधर भास्कर वर्णेकर'' है। आपका जन्म 31 जुलाई सन् 1919 को नागपुर के एक संस्कृत निष्ठ परिवार में हुआ था। 1941 में संस्कृत में एम.ए. कर आपने सन् 1964 में डी.लिट. की उपाधि धारण की। आपने अनेकों ग्रंथो की रचना की ।

'शिवराज्योदयम' महाकाव्य का प्रेरणा स्रोत आपका अन्तःकरण ही रहा। स्वातान्त्र्य वीर सावरकर का राष्ट्रीय गान –

" हे हिन्दू शक्ति सम्भूत दीपतम् तेजा, हे हिंदू नृसिंह प्रभो शिवाजी राजा।।'' प्रकृत महाकाव्य के प्रणयन का प्रमुख स्रोत रहा। शिवराज के प्रति – कवि के विचार अवलोकनीय हैं। –

" वीरता साधु तोपेता साधुता चातुरीयुता,
चातुरी लोक मांगल्या चरितेऽस्मिन् विराजते।
तन्मया परया भक्त्या कविता विषयी कृतम्,
संप्रीतयेऽस्तु सर्वेषां सज्जनानां निरन्तरम् ।।"[1]

यह विशाल महाकाव्य है। इस ग्रन्थ की रचना का "श्री गणेश' सन् 1958 को हुआ तथा 13 अप्रैल 1968 को पूर्णता को प्राप्त हुआ तथा इसका प्रकाशन सन् 1972 में हुआ। इस महाकाव्य के नायक 'छत्रपति शिवाजी' है तथा उनके सांगोपांग जीवन की वाड्.मयी अभिव्यक्ति है। शिवाजी की माता जीजावाई ही उनकी परमगुरू तथा उपदेशक रही। कवि ने शिवाजी की वीरता का अति सजीव चित्रण कर राष्ट्र की रक्षा हेतु देशवासियों को सतत् सन्नहित रहने का उपदेश दिया है। महाकाव्य का प्रधान रस वीर है। वीर रस का कुशलता पूर्वक परिपाक करते हुये इसकी सुन्दर अभिव्यंजना कवि द्वारा की गयी है। इस स्वीकारोक्ति का अवलोकन करें –

" चरितं शिवराजस्य विजयत्री विराजितम्।
वीराद‌द्भुतरस पुण्यं रामायणमिवापरम् ।। "[2]

कवि ने प्रायः वैदर्भी शैली का प्रयोग किया है पर यत्रन्तत्र युद्धादि वर्णनों में गौड़ीरीति

---

1. भूमिका – शिवराज्योदयम् पृ0 8

2. भूमिका – शिवराज्योदयम् पृ0 8

का प्रयोग कर काव्य चातुरी को प्रकट किया गया है। चित्रोपमता आपकी भाषा का विशेष गुण रही है। प्रकृति की मनोहर झाँकी देखने को मिलती है अन्य स्थलों पर प्रकृति के सुरम्य चित्र चित्रित किये गये है।

इस प्रकार यह महाकाव्य वीसवीं शताब्दी के महान काव्यों में विशेष रूपेण उल्लेखनीय है। कवि ने इसमें अपनी सम्पूर्ण कुशलता का परिचय दिया है।

16. गान्धि सौगन्धिकम् –

इस महाकाव्य के रचयिता " श्री सुधाकर शुक्ला " है मध्यप्रदेश शासन द्वारा सम्मानित यह कवि मध्य प्रदेशीय संस्कृत कवियों में विशिष्ट स्थान रखते है। मोहनदास कर्मचन्द्र गांधि जी के जीवन चरित को इस महाकाव्य में 20 सर्गो में विभक्त किया गया है। इस महाकाव्य में महात्मा गांधि जी के सिद्धान्तों का पद–पद पद अवलोकन होता है। इसकी भाषा सरल सरस तथा बोधगम्य है।

17. छत्रपति चरितम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता श्री उमाशंकर त्रिपाठी का जन्म 1 जनवरी 1922 ई0 में देवरिया जनपद के कुशीनगर कस्वा से बीसमील स्थित 'सिंगहा' ग्राम में हुआ था। आपका हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी तीनों भाषाओं पर समानाधिकार है।

" छत्रपति चरितम्" ऐतिहासिक महाकाव्य है जो कि राष्ट्रीय भावना, वीर रस से ओतप्रोत है। ऐतिहासिक वीरपुरूष छत्रपति शिवाजी प्रकृत महाकाव्य के वर्ण्यविषय है तथा वे ही नायक है। राष्ट्र की गतिविधि, सम्बोधन परम्परा, समस्याये, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिवेश आदि इस महाकाव्य की आत्मा के सहज धर्म है। इस महाकाव्य में प्रायः सभी रस प्रसंगानुसार, वर्णनानुसार अभिव्यंजित हुये है। इसमें स्वातान्त्रय वोध के परिप्रेक्ष्य में वीर शिवाजी की वीरता एवं शौर्य वर्णन इस महाकाव्य का आत्मा है अतः वीर रस ही अपने प्रमुख रूप में मुखरित हुआ है। छंदो का सुन्दर परिपाक दृष्टि गत होता है।

आपका अलंकार विधान भावानुसार तथा कृत्रिमता से परे है। इस महाकाव्य की भाषा शैली सरल, सरस तथा बोधगम्य है। कवि ने इस महाकाव्य में गीतत्व को भी समाविष्ट कर उसे 'प्रयाणगति' के रूप में अभिहित किया है। इस महाकाव्य में शिवाजी की मातृ–भावना श्लाघनीय है

" मदेकपुत्रंनहिकेवलं शिवं परं महाराष्ट्र धरानभोमणिम्।

सुमेधसः सन्नयथ प्रभोज्ज्वलं तमोन्तरायोऽभिभवेन्नतद्रुचम् ।।[1]

सम्पूर्ण महाकाव्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है –

" क्वादास वृत्तेः परलोक पद्या श्रेयोऽथवाकुत्र फलोपलब्धिः ।

तदेव पन्था पदसूनपीष्टाम् स्वातान्त्र्यागे पुरूषो जुहोति ।।[2]

इस प्रकार वीसवी शताब्दी के महाकाव्यों में यह महाकाव्य विशिष्ट स्थान रखता है। यह महनीय व्यक्तित्व के धनी छत्रपति शिवाजी जैसे महान नायक से युक्त राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत उत्कृष्ट महाकाव्य है।

18. यशोधरा महाकाव्यम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता " पं0 ओगेटिपरीक्षित् शर्मा" है। 20 सर्गों में विभक्त इस महाकाव्य में महात्मा गौतम बुद्ध के विवाह से लेकर उनके गृह त्याग तक का वर्णन किया गया है। इसकी नायिका बुद्ध पत्नी यशोधरा है।

19. बोधिसत्व चरितम् –

" डा0 सत्यव्रत शास्त्री " द्वारा प्रणीत इस महाकाव्य में चौदह सर्ग है। डा0 सत्य व्रत शास्त्री का जन्म 1930 ई में 29 सि0 को लाहौर में हुआ था। इस महाकाव्य में परम्परागत महाकाव्य वस्तु विन्यास पद्धति नहीं दिखलाई पड़ती है। इसके नायक विभिन्न व्यवसाय में संलग्न लोग हैं।

20. किरातार्जुनीयम् –

डा0 जगन्नाथ पाठक द्वारा रचित इस महाकाव्य की कथावस्तु महाकवि " भारवि " कृत महाकाव्य 'किरातार्जुन' से ग्रहण कर युगानुरूप उसे पल्लवित किया गया है।

21. सीता चरितम् –

पण्डित रेवा प्रसाद द्विवेदी 'सनातन' कृत सीताचरित की कथावस्तु 10 सर्गों में विभक्त है। इसमें 694 श्लोक उपनिबद्ध हैं। 'सीताचरितम्' में राम के राज्यारोहण से लेकर पाताल

---

1. 'छत्रपति चरितम्' 8/50

2. 'छत्रपति चरितम्' 18/34

प्रवेश तक के कथानक को कुशलता के साथ वर्णित किया गया है।

22. स्वातान्त्र्यसम्भवम् –

'सनातन' महाकवि डा0 रेवा प्रसाद द्विवेदी का यह महाकाव्य भारतीय स्वाधीनता संग्राम का ऐतिहासिक दृष्टि से तथ्यात्मक एवं राज्यात्मक वर्णन प्रस्तुत करता है। यह महाकाव्य 'विड़ला फाउण्डेशन' द्वारा 1994 में प्रस्तुत हो चुका है।

23. लेनिनामृतम् –

प्रकृत महाकाव्य के प्रणेता " श्री पदमशास्त्री का जन्म 1935 ई0 में 17 दिसम्बर को अल्मोड़ा के सिंगाली नामक स्थान में हुआ था। यह महाकाव्य 15 सर्गों में निवद्ध एक ऐतिहासिक संस्कृत महाकाव्य है। इस महाकाव्य में साम्य वाद की रूपरेखा, रूस के भौगोलिक एवं ऐतिहासिक वर्णन सहित इतिहास पुरूष "श्री ब्लादिमीर लेनिन " का जीवन चरित्र तथा रूस एवं भारत का श्रंखलाबद्ध इतिवृत्त वर्णित है। संस्कृत भाषा में साम्यवादी विचारधारा की इस युग की यह एक मात्र प्रतिनिधि कृति है।

24. सुदर्शनोदयम् –

जैन मुनि " श्री ज्ञानसागर " रचित इस महाकाव्य में नौ सर्ग हैं। धीरोदात्त गुणों से युक्त 'सुदर्शन' इस महाकाव्य के नायक है। इसमें ब्रह्मचारी शीलप्रसिद्धि प्राप्त सुदर्शन के श्रेष्ठ चरित्र को चित्रित किया गया है।

25. वीरोदयम् –

यह रचना भी 'श्री ज्ञान सागर' जी की ही है। भगवान महावीर जी के सम्पूर्ण चरित्र का चित्रण इस महाकाव्य में मिलता है। 22 सर्गो में विभक्त इस महाकाव्य में भगवान महावीर की दयालुता तथा धार्मिकता को विशेष रूपेण चित्रित किया गया है। इस महाकाव्य में जैन ऐतिहासिक तथ्यों का यथा स्थल निरूपण किया गया है।

26. रक्ताक्तहिमालयम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता पण्डित " परमेश्वर दत्त त्रिपाठी हैं। उसकी कथावस्तु 21 सर्गो में विभक्त है। इसमें चीन का भारत पर आक्रमण कर अपने अधिकार में लेने का वर्णन है। कवि ने पूर्ण निष्ठा के साथ युग परिस्थिति का चित्रण किया है। इस महाकाव्य में राष्ट्रभक्ति की धारा प्रवाहित हुयीं है।

27. श्री जवाहर ज्योर्तिमहाकाव्यम् –

यह महाकाव्य पं0 रघुनाथ प्रसाद चतुर्वेदी द्वारा प्रणीत है। यह महाकाव्य इक्कीस सर्गो में निवद्ध है तथा सम्पूर्ण महाकाव्य में 1185 श्लोक हैं। इसमें भारत सपूत पं0 जवाहरलाल नेहरू जी के जीवन चरित्र की विशद झाँकी प्रस्तुत की है। इसकी कथावस्तु, रसनिष्पत्ति, छंद योजना, अलंकार विधान, भाषा शैली, प्रकृति चित्रण आदि उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत किये गये है।

28. गाँधि विजयम् –

यह महाकाव्य स्वर्गीय " पं0 श्री लोकनाथ शास्त्री " द्वारा प्रणीत है। इसकी कथावस्तु महात्मा गांधी जी के जीवन तथा स्वतन्त्रता आंदोलन पर आश्रित है। पाण्डित्य प्रदर्शन की भावना इस में दृष्टि गोचर होती है। यह एक अपूर्ण महाकाव्य है।

29. 'भारती स्वयंवरम् ' –

'भारती स्वयंवरम्' के प्रणेता श्री ' देवदत्त शुक्ला ' है। प्रकृत महाकाव्य में भारत राष्ट्र के महापुरूष का वर्णन है। यह बाईस सर्गो में विभक्त है।

30. स्वामीविवेकानन्द चरितम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता "श्री त्रयम्बक शर्मा" भण्डारकर हैं। 18 सर्गो में विभक्त इस महाकाव्य में " एक हजार एक सौ ग्यारह" पद्य है। स्वामी विवेकानन्द प्रकृत महाकाव्य के नायक है। इस विश्वविश्रुत इतिहास पुरूष विवेकानन्द के तपः पूत जीवन की झांकी को इसमें प्रस्तुत किया गया है।

31. गुरूनानक देवचरितम् –

श्री विष्णु शर्मा द्वारा प्रणीत इस महाकाव्य को सत्रह सर्गो में विभक्त तथा 879 श्लोकों में आवद्ध किया गया है। 15 श्लोकों में मंगलाचरण के पश्चात् नानक देव चरितम् में भारत की दुर्दशा तथा नानक देव के जीवन पक्ष को उभारा गया है। गुरूनानक के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का चित्रण इतिहास पुष्ट होने से यह महाकाव्य ऐतिहासिक महाकाव्यों की श्रेणी में रखा जाता है।

32. इन्दिरागांधी चरितामृतम् –

आचार्य 'सांहित्यरत्न' श्री विष्णु दत्त शर्मा द्वारा ही प्रणीत इस महाकाव्य में इन्दिरागांधी के चारूचरित को चित्रित किया गया है।

33. आर्योदय महाकाव्य –

प्रकृत महाकाव्य के प्रणेता प्रयागवासी पं. गयाप्रसाद उपाध्याय हैं। 21 सर्ग एवं 1166 श्लोंको में आबद्ध इस महाकाव्य. में आर्यसंस्कृत्युदय आदि ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। उत्तरार्द्ध में स्वामी दयानन्द के जीवन की मूल घटनायें वर्णित है।

34. चालुक्यराज अय्यड़वंश चरितम् –

इस महाकाव्य के रचयिता पं० श्यामभट्ट भारद्वाज है। यह सत्रह सर्गो में विभक्त ऐसा महाकाव्य है जिसमें चालुक्य वंशीय–जयसिंह, विक्रमादित्य, अय्यड़, सोमेश्वर, शिववीर आदि राजाओं का वर्णन किया गया है।

35. प्रभुनारायण चरितम् –

यह महाकाव्य नौ सर्गो में विभक्त है तथा इसके प्रणेता महाकवि " जीवननाथ शर्मा" है। काशीनरेश " प्रभुनारायण सिंह " के वाल्यकाल से लेकर राजधानी काशी, प्रजापालन की तत्परता ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर वर्णित की गयी है।

36. आँग्ल साम्राज्यम् –

महाकवि राजवर्मन कृत इस महाकाव्य को सत्ताईस सर्गो में आबद्ध किया गया है। प्रकृत महाकाव्य में विट्रिश साम्राज्य के ऐलिजावेथ के शासन काल से लेकर 1897 तक (विक्टोरिया राज्य तक) का ऐतिहासिक कथानक प्रस्तुत किया गया है।

37. विक्टोरिया महाकाव्यम् –

श्री ईश्वर विद्यालंकार कृत इस महाकाव्य को 12 सर्गो में विभक्त किया गया है। इसकी रचना 1902 में हुयी थी। इस महाकाव्य की नायिका भारत की शासनकत्री 'महारानी विक्टोरिया' तथा नायक 'अलवर्ट' है। वीर रस अंगी है तथा विक्टोरिया के निधन से करूण रस अंगरूप बनजाता है। इसे विजयिनी महाकाव्य भी कहा जाता है।

38. एडवर्डवंशम् –

उर्वीदत्त शास्त्री प्रकृत महाकाव्य के प्रणेता है। पन्द्रह सर्गों में विभक्त इस ऐतिहासिक महाकाव्य में "जूलियस सीजर" से इंग्लैण्ड के " एडवर्ड सप्तम् " तक के शासन का सुन्दरतम् चित्रण किया गया है।

39. "स्वराज्यविजयम्" –

'स्वराज्यविजय' महाकाव्य महाकवियत्री पं० क्षमाराव द्वारा रचित है।

यह महाकाव्य 54 अध्यायों तथा 1740 अनुष्टप् छंदो में निबद्ध है। भारतीय स्वातान्त्रय हेतु उठाये गये महात्मा गांधी के वीरकदम तथा उनके द्वारा राष्ट्र हेतु किये गये क्रिया कलापों की मनोहर झांकी प्रस्तुत की गयी है।

40. दयानन्द दिग्विजयम् –

आचार्य मेधावत् कृत इस महाकाव्य में युग प्रवर्तक महार्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन वृत्त तथा कार्य कलाकलापों का वर्णन है। पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध में विभक्त यह महाकाव्य 27 सर्गो तथा लगभग 2700 श्लोक है।

41. गाँधि गीता –

श्री निवास तड़पत्रीकर द्वारा रचित गाँधी गीता में 24 अध्याय है। गाँधी विषयक रचना होने से इसे ऐतिहासिक कहा जा सकता है। इसके श्लोकों की संख्या 1087 है।

42. कनकवंश –

प्रकृत महाकाव्य के प्रणेता महाकवि " श्री बालकृष्ण " जी है। 27 सर्गात्मक इस महाकाव्य में 1844 श्लोक निवद्ध हैं। इसमें गड़वाल के प्रतापी परमार वंशीय कनकपाल के वंश का वर्णन है।

43. दयानन्द चरितम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता "श्री रमाकान्त" उपाध्याय हैं। इसमें स्वामी विवेकानन्द के चरित्र को उभारा गया है।

44. श्री गाँधिबान्धवम् –

22 सर्गो में निबद्ध इस महाकाव्य के प्रणेता "पं. जयाराम शास्त्री" है। इसमें गाँधि आदि राष्ट्रीय नेताओं के चरित्र को चित्रित किया गया है।

45. श्री महात्मा गाँधीचरितम् –

इस विशालकाय महाकाव्य जिसके द्वारा रचित है उनका नाम है, "श्री भगवदाचार्य " ! यह महाकाव्य तीन भागों में विभक्त है–

1. भारतपरिजातम् – 25 सर्गात्मिक 1814 श्लोक
2. पारिजातापहार – 29 सर्ग 2025 श्लोक
3. परिज़ात सौरभम्– 21 सर्ग 1672 श्लोक

श्री महात्मा गाँधी चरितम् में कुल मिलाकर 75 सर्ग तथा 5511 श्लोक है।

46. स्वाधीन भारतम् –

प्रो0 रामनिरीक्षण सिंह कृत यह महाकाव्य 14 परिच्छेदों में विभक्त है जो कि 1245 पद्यों से युक्त है।

47. विशाल भारतम् –

इस महाकाव्य को जवाहर दिग्विजय नाम से भी अभिहित किया गया है। 814 पद्यात्मक इस महाकाव्य में 10 सर्ग है तथा इस महाकाव्य के रचयिता आचार्य श्यामवर्ण द्विवेदी जी है। विदेशी अत्याचारों से अभिभूत भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों द्वारा देश की मुक्ति हेतु किये गये उपादानों का तथ्यपरक चित्रण है।

48. इन्दिरागाँधि चरितम् –

प्रकृत महाकाव्य " डा0 सत्यव्रत शास्त्री " द्वारा प्रणीत है। इन्दिरागाँधि चरितम् में नेहरू परिवार के विशिष्ट व्यक्तियों तथा उनसे संबन्धित ऐतिहासिक घटनाओं का सुन्दर परिपाक किया गया है। 25 सर्गात्मक इस महाकाव्य में 879 श्लोक है।

49. नवभारतम् –

महाकवि "श्री मुतुकुलम् श्रीधर" रचित 'नवभारतम्' में अभिनव भारतवर्ष का इतिहास अति प्राज्जल एवं मांजल भाषा में वर्णित है। 18 सर्गात्मक इस महाकाव्य में 1242 श्लोक है।

50. अद्भुतदूतम् –

इस महाकाव्य के प्रणेता " जग्गूबकुल भूषण" है। इसकी कथावस्तु महाभारत से ली गयी है। इसका 15 सर्गों में पल्लवन किया गया है।

51. कर्णार्जुनीयम् –

प्रकृत महाकाव्य स्व0 पं0 " विन्ध्येश्वरी प्रसाद " द्वारा रचित है। बाईस सर्गों में उपनिबद्ध इस महाकाव्य में कर्ण एवं अर्जुन का युद्ध वर्णन प्रस्तुत किया गया है। यहाँ महाभारत पद्मपुराण की कथावस्तु पल्लवित हुयी है। वीर रस अङ्गीरस के रूप में प्रयुक्त है।

52. महर्षिज्ञानानन्द चरितम् –

प्रकृत महाकाव्य के रचयिता भी श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद ही हैं। इसमें महर्षि ज्ञानानन्द के आकर्षक, स्वाभाविक, प्रेरणाप्रद जीवन को चित्रित किया गया है।

53. श्री कृष्णचरितामृतम –

प्रकृत महाकाव्य के रचयिता नेपाल निवासी "श्री कृष्णशर्मा"

हैं। श्री मद्भागवत् पर आधारित यह एक विशाल महाकाव्य है। इसके प्रथम भाग की कथावस्तु 58 सर्गों में विभक्त है तथा 3600 पद्य है।

54. परशुरामदिग्विजय महाकाव्यम् –

प्रकृत महाकाव्य "विद्यासागर महामहोपाध्याय" आदि पदवीं विभूषित "छज्जूराम शास्त्री" द्वारा रचित है। इस महाकाव्य में रामायण में वर्णित भगवान परशुराम की कथा को 12 सर्गों में विभक्त किया गया है।

55. जानकी जीवनम् –

रामायण आधृत भगवान श्री राम तथा सीता का चारूचरित चित्रण इस महाकाव्य में हुआ है। इसके प्रणेता अभिराज डा0 राजेन्द्र मिश्र है। यह महाकाव्य साहित्यिक दृष्टि से समीक्षकों द्वारा प्रसंशनीय है।

56. वामनावतरणम् –

डा0 राजेन्द्र मिश्र कृत यह महाकाव्य श्री मद्भागवत पर आधारित है। सत्रह सर्गों में विभक्त इस महाकाव्य में भगवान विष्णु के वामन अवतार का वर्णन है।

57. उर्मिलीयं महाकाव्यम् –

श्री नारायण शुक्ल "उर्मिलीयं' महाकाव्य के प्रणेता है। प्रकृत महाकाव्य में भगवान राम के अनुज 'लक्ष्मण' की पत्नी उर्मिला का समग्र जीवन चित्रित किया गया है। सत्रह सर्गों में विभक्त इस महाकाव्य पर यत्र–तत्र मैथिली शरण गुप्त के साकेत का प्रभाव परिलक्षित होता है।

58. रामचरितम् –

22 सर्गों में उपनिबद्ध यह महाकाव्य श्री पद्नारायण त्रिपाठी महोदय कृत है। रामायण पर आधृत इस महाकाव्य में भगवान श्री राम के जन्म से, रावण का हनन करके अयोध्या आकर राम के राज्याभिषेक तक की कथावस्तु का वर्णन किया गया है।

59. रूक्मिणीहरणम् –

" सुधी सुधा निधि " श्री काशीनाथ प्रणीत 'रूक्मिणीहरणम्" 21 सर्गों में विभक्त है। नारी प्रधान इस महाकाव्य की नायिका रूक्मिणी है। श्री मद्भागवत पर आधृत इस महाकाव्य में श्री कृष्ण द्वारा रूक्मिणी के हरण का वर्णन है।

60. पारिजात हरणम् –

पं० उमापति शर्मा द्वारा प्रणीत पौराणिक आख्यान पर आधृत "पारिजात हरणम्" की सुविख्यात कथा को इस महाकाव्य में साहित्यिक रूप में प्रस्तुत किया है।

राजस्थान के कुछ ऐतिहासिक महाकाव्य -

1. मानवंश महाकाव्य –

प्रकृत महाकाव्य कविवर सूर्यनारायण शास्त्री द्वारा विरचित है। इस महाकाव्य में कच्छवंशीय राजाओं का प्रमाणिक जीवनवृत्त उत्कृष्ट काव्य तत्वों के साथ उपनिबद्ध है।

2. कच्छवंशम –

श्री कृष्ण रामभट्ट का यह महाकाव्य जयपुर के ऐतिहासिक संस्कृत काव्यों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त आरंभिक दो सर्गो में कच्छवंशीय राजाओं की पौराणिक तथा ऐतिहासिक वंशावली को यत्र–तत्र कल्पना का आश्रय लेते हुये प्रस्तुत किया गया है।

3. जयवंश महाकाव्यम् –

महाकवि सीताराम भट्ट द्वारा प्रणीत इस महाकाव्य में कच्छवाहे राजाओं का समग्र जीवन चरित्र चित्रित किया गया है। इसकी शैली महाकवि कुलगुरू कालिदास के 'रघुवंशम्' के सदृश्य हैं। छंद, अलंकार, विधान, रस, भावाभिव्यंजना सर्वथा प्रशंसनीय है। कला के साथ भाव पक्ष भी उत्कर्षपूर्ण है।

" अर्वाचीन ऐतिहासिक महाकाव्यों में झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य का स्थान –

उपर्युक्त समस्त ऐतिहासिक महाकाव्यों का अध्ययन करने के पश्चात् झाँसीश्वरी चरितम् महाकाव्य का इन अर्वाचीन महाकाव्यों में स्थानकानिर्धारण करते हैं।

झांसीश्वरीचरितम् –

महाकवि डा० सुबोधचन्द्र पन्त प्रणीत झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य एक विकसित(Epic of growth) कोटि का महाकाव्य है। यह आधुनिक काल की रचना है। बाईस सर्गों में आबद्ध इस महाकाव्य में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई जो कि ऐतिहासिक नारी है की जीवन से लेकर मृत्युपर्यन्त की कथा को डा० सुबोध चन्द्रपन्त ने बड़ी ही मधुर तथा सरस शैली में अति कुशलता के साथ वर्णित कर मानस चित्त चंचरीक को आकृष्ट किया हैं। इस महाकाव्य में मुख्य भावना वीर

रस की है। इसमें वीरांगना लक्ष्मीबाई की वीरता, शौर्य, अनेक युद्ध, विवाह नगर वर्णन, उत्सव, नख–शिख–षट् ऋतु आदि के वर्णन, तथा राजनीति आदि के वर्णन कौशल पूर्ण है।

इस महाकाव्य में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त द्वारा ऐतिहासिक कथानक तथा कल्पना का सुन्दर मणिकांचन संयोग देखने को मिलता है। "झांसीश्वरी चरितम्" महाकाव्य के संबध में सर्वप्रथम उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण बात यह है। कि–

यद्यपि अबतक अनेक महाकाव्यों का प्रणयन हो चुका है। जिनमें कुछ नारी प्रधान महाकाव्य एवं अनेक रसों में लिखे गये महाकाव्य हैं किन्तु इस महाकाव्य की प्रमुख विशेषता यही है कि यह नारी प्रधान तथा वीररस से ओत प्रोत ओजोमय महाकाव्य है क्योंकि अब तक जिन महाकाव्यों का प्रणयन हुआ है उनमें जो नायिका प्रधान है वह वीररस से युक्त नहीं है। अतः इस महाकाव्य से पूर्व नारी पात्र को लेकर वीर रस से ओत प्रोत किसी महाकाव्य की रचना नहीं हुयी थी। इस दृष्टि से यह महाकाव्य एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

वैसे प्रायः श्रंगार रस से ओत प्रोत महाकाव्यों के ही दर्शन होते है यह महाकाव्य वीर रस से ओतप्रोत है। वीररस की निष्पत्ति तथा ऐतिहासिक घटनाओं में बड़ा ही मधुर सामंजस्य है। राष्ट्रीय भावनाओं की जाग्रति होना, देश की परतन्त्रय काल की पीड़ा का स्वर देश भक्तों के हृदय से फूटनिकलना और इतिहास के बदलते हुये हर पृष्ठ पर जो रक्तरंजित गाथायें रची गयी है उनका ही प्रतीक यह महाकाव्य है।

वीररस के प्रसंग में ओजगुण, श्रंगार के प्रसंग में माधुर्यगुण को अपनाती हुयी भाषा का जो मनोहारी रूप दिखलाई देता है वह काव्य भी स्वाभाविकता के अनुकूल है। जिस प्रकार झांसीश्वरी चरितम् की नायिका शौर्यशालिनी, पराक्रमी एवं साहसी है उसी प्रकार यह महाकाव्य शैली, ओज, शक्तिमत्ता और गम्भीरता की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। आकार विषयवस्तु एवं वर्णन शैली की दृष्टि से यह महाकाव्य महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथ है।

महाकाव्य के लक्षण–सर्गबद्धता, धीरोदात्त नायक, किसी एक प्रमुख रस का चित्रण ऐतिहासिक अथवा पौराणिक कथा आदि सर्व दृष्टि से भी यह महाकाव्य प्रमुख स्थान रखता है। इस महाकाव्य में काव्य की आत्मा को पहचाना गया तथा उसको प्रधानता मिली है। इस महाकाव्य में भावपक्ष के साथ ही कलापक्ष की भी उपेक्षा नहीं हुयी है तथा उसे सुन्दर उत्कृष्ट रूप में प्रस्तुत किया गया है। डा0 'सुबोध चन्द्र पन्त ' की बहुमुखी प्रतिभा हमारे समक्ष उभरकर आयी है। यह एक प्रेरणाप्रद श्रेष्ठतम् कृति है।

यह सम्पूर्ण महाकाव्य ओजस्विता और ऊर्जस्विता के वातावरण से ओतप्रोत है। घटनाओं की एकाग्रता एवं सजीव चित्रण की दृष्टि से भी यह महाकाव्य सर्वथा पठनीय एवं दर्शनीय है। इसमें वर्णित घटनायें पाठकों की हृदय तंत्री को कभी विषादमयी तथा कभी आश्चर्यमयी बना देती है। डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने प्रबन्धतत्व की ऐतिहासिकता की रक्षा करते हुये अपने भावों और सत्य का उद्घाटन जितनी कुशलता से किया है। वह श्लाध्य है। उच्चकल्पना शक्ति कलागत सौन्दर्य, भावों का सूक्ष्म निरीक्षण, वर्णन शक्ति और विचार गाम्भीर्य में आपका महाकाव्य उत्कृष्ट बन पड़ा है। इस महाकाव्य का प्रकृति चित्रण भी श्लाघनीय है। लंबे-लंबे छंदो का समावेस होते हुये भी इसमें सुकुमारता तथा रोचकता बनी हुयी है।

अर्थ गाम्भीर्य एवं साहित्यिक सौस्ठव की दृष्टि से भी 'झांसीश्वरीचरितम्' महाकाव्य की कसौटियों पर खराउतरता है। आकार में तो यह विशाल है ही, विषय वस्तु के कारण भी यह एक महान रचना है।

काव्य में विभिन्न गम्भीर व्यंजना के साथ-साथ युग जीवन के विशाल चित्रों का अंकन किया गया है।

महत्कार्य महाकाव्य की कथा का चरमविन्दु होता है। 'झांसीश्वरी चरितम्' महाकाव्य में झांसी की रानी लक्ष्मी बाई के जन्म से मृत्यु पर्यन्त कथा का वर्णन है साथ ही अंग्रेजो के आक्रमण, युद्ध, विवाह आदि के वर्णन भी हैं। यदि महत् कार्य का निर्धारण करे तो युद्ध ही चरम विन्दु है तथा यह सारा संघर्ष उसी हेतु है। जीवन का उद्घोष करने वाला यह ऐसा काव्य है जिसमें स्वराज्य की समस्त भावधारा अपने यथार्थ रूप में प्रस्तुत हुयी है। यह महाकाव्य ऐतिहासिक तथा वीरकाव्य की दृष्टि से भी उत्कृष्ट ग्रंथ है जिसमें देश की राजनीतिक उथल-पुथल सम्बद्ध है।

इस महाकाव्य में युद्धवर्णन अत्यन्त सजीव बन पड़ा है, ऐसा प्रतीत होता है जैसे कवि स्वयं युद्ध में उपस्थित रहा हो। इन वर्णनों में वीर रस मूर्तिमान बन गया है। यह महाकाव्य अपने कलेवर में साहित्य के उपांगो की सम्पूर्ण विशिष्टताओं को निहित किये हुये है। रस, छंद, अलंकार, प्रकृति चित्रण, भाषा सौष्ठव आदि समस्त क्षेत्रों में यह महाकाव्य सर्वोत्तम रूप प्रस्तुत करता है। डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने परम्परा गत प्रयोजनों –

" काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये !

सद्यः पर निवृत्तये कान्तासम्मितयोपदेशयुजे !!" [1]

---

1. काव्यप्रकाश का0 2 – पृ0 6 आचार्य मम्मट

को स्मृति में रखते हुये देश, राज्यभक्ति और धर्म गौरव की प्रतिष्ठा और इससे पाठक गण के हृदय को आह्मलादित करना अपना परम उद्देश्य बनाया। साथ ही संस्कृत साहित्य में चमत्कारपूर्ण तथा शोभामय मार्ग का आधान किया।

प्रभाव पूर्ण लेखनी से महाकाव्य विधा को बढ़ाते हुये अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त की है।

यह महाकाव्य एक काव्यमय ऐतिहासिक गाथा है, जिससे भारतीयों की स्वाधीनता के मूल्य का आभास होता रहेगा तथा भारतीय जन अपने देश की स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाये रखने में सतत् प्रयासरत रहेंगे। इसकी ऐतिहासिकता के विषय में विद्धद्वर श्री जी.सी. त्रिपाठी का कथन है–

" Jhansiswari Charitam is a Welcome addition to the branch of Sanskrit Historical Mahakavyas and I can unhesitating by recomend it to any reader desiours of enjoying refined aesthetic Pleasure throughthe medium of Sanskrit."[1]

इस प्रकार यह महाकाव्य साहित्यिक दृष्टि से जितना उपादेय है उतना ही ऐतिहासिक दृष्टि से भी महनीयता रखता है। झांसी की अधीश्वरी रानी लक्ष्मीबाई के यथार्थ को ज्ञात करने के लिये संस्कृत का यह महाकाव्य नितान्त उपादेय है।

प्रायः हर दृष्टि से ही यह महाकाव्य संस्कृत काव्य साहित्य की अनुपम निधि है । इस महाकाव्य के भावपूर्ण छंद, अलंकारो की स्वाभाविकता, भाषा की भाव गरिमा शब्दों का सुन्दर विन्यास भावों का समुचित निर्वाह, कल्पना की समुचित उड़ान प्रकृति के सजीव चित्रण, रसानुकूलता आदि सर्व दृष्टियों से महत्व पूर्ण स्थान रखता है।

इसकी प्रमुख विशेषता यही है कि अभी तक वीरकाव्यों जैसे शिवराज्योदयम् आदि महाकाव्यों में पुरूष पात्र को लेकर ही वीररस से ओतप्रोत ओजोमय काव्यों की रचना हुयी किन्तु नायिका को लेकर वीर रस से ओत प्रोत यह अनुपम तथा अलौकिक निधि है, इस तरह का अन्य कोई महाकाव्य नहीं है।

इस प्रकार महाकाव्य का आद्योपान्त अध्ययन एवं अनुशीलन करने के उपरान्त यह कहना अनुचित न होगा कि सुगठित कथावस्तु की योजना में ओजस्वी वातावरण की अवतारणा में वीररस की अभिव्यंजना, वैयक्तिकता से मण्डित पात्रों के चित्रण में 'झांसीश्वरी चरितम्' एक उच्चतम्

---

1. झांसीचरितम् – Forword पृ0 –6

महाकाव्य है। अतः यह सर्व दृष्टि से सभी अर्वाचीन महाकाव्यों में अपना सर्वोच्च स्थान रखता है।

"झांसीश्वरी चरितम्" महाकाव्य का रचना विधान आदि का संक्षिप्त परिचय-

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त द्वारा रचित 'झांसीश्वरी चरितम्' सुविस्तृत महाकाव्य है जो बाईस सर्गों में विभक्त है। इस चरितार्थात्मक महाकाव्य में पन्त ने लक्ष्मीबाई के चरित्र को निम्नलिखित सर्गो में विभक्त कर चित्रित किया है –

प्रथम सर्ग –

प्रथम सर्ग की पीठिका में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने परम्परागत मंगलाचरण, तथा इसी संदर्भ में दुर्गा[1] की स्तुति तथा जीजाबाई, दुर्गावती, कर्मवती आदि वीरांगनाओं के नामोल्लेख, इन्हीं शक्तियों के रूप में लक्ष्मीबाई का अवतरित होना वर्णित किया है। साथ लक्ष्मीबाई के शौर्य[2] की संक्षिप्त रूप रेखा प्रस्तुत की है।

द्वितीय सर्ग –

द्वितीय सर्ग में कवि पन्त ने प्रकृति वर्णन[3] की सुमनोहर झांकी प्रस्तुत की है। जिसमें सूर्य, चन्द्रमा, दिन, रात्रि, नदियों, सरोवरों, वृक्षों पुष्पों आदि का रमणीय और आकृष्ट रूप प्रस्तुत कर भारत की दशा[4] तथा लक्ष्मी के जन्म के समय की परिस्थितियों का उल्लेख किया है।

तृतीय सर्ग –

तृतीय सर्ग में कवि ने रानी लक्ष्मी बाई के जन्म, जन्मोत्सव तथा उनके सुन्दर स्वरूप[5] को वर्णित किया है।

चतुर्थ सर्ग –

चतुर्थ सर्ग में रानी के वाल्यकाल, उनके नामकरण तथा बाल क्रीड़ाओं का आकर्षक

---

1. या कैटमं शातयितुं मधुं च ब्रह्मण्यपंड्.क व्यतरद्विचारम् !
सच्चिन्तनेन प्रसभं विदूरे येनाकरोच्छक्तिमसौ तमोजाम् ।। 1/4 झांसी0 च0
2. दुर्गामहाराष्ट्र धरित्रि दुर्गा यद्वरश्मिरेकः सुतया सहैव ।
मुक्त्येद्य उज्ज्वालयितुं पपात तूर्ण सजा मातृकमिद्धहांसम् ।। 1/24 झांसी0 च0
3. उततमांपरिधाय करैर्विधोरूडुगणैः प्रसतैरूत शाटिकाम् ।
शशिमुखी रजनिर्जगतोधिकं सततमेव नमर्त्त सुखावहा ।। 2/7 झांसी0 च0
4. सिततनुः स सदाद्य निरंकुशो दलति भारतमेतदहर्निशम् ।
सततमेव भवञ्गरलाकरः फणधृताग्निरहिः शितिविग्रहः ।। 2/38 झांसी0 च0
5. स्मरसि प्रेक्षितां रम्यांभवानी तां भवालये ।
तादृगेव स्फुरद्रूपा राज्ञीयं भविता द्रुतम् ।। 3/2 झांसी0 च0

रूप प्रस्तुत किया है। जिसमें कवि सुबोध चन्द्र पन्त की कल्पना उत्कृष्ट रूप में मुखरित हुयी है।

पंचम सर्ग –

पंचम सर्ग में महारानी लक्ष्मी बाई के पालन पोषण, बचपन से ही उनकी निडरता वीरता तथा काव्य शास्त्र आदि अभिरूचियों का वर्णन किया गया है। तथा वाल्योचित हठ[1] आदि का सुन्दर रूप प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ सर्ग –

इस सर्ग में महारानी लक्ष्मीबाई के व्यक्तित्व को उभारा गया है। साथ ही तात्या दीक्षित का आगमन तथा मनू के विवाह हेतु वार्तालाप का वर्णन किया गया है। रानी के व्यक्तित्व में साक्षात्रमा, लक्ष्मी तथा काली[2] के अवतार का आभास इस सर्ग में प्राप्त होता है।

सप्तम सर्ग –

कवि ने तात्या दीक्षित द्वारा राजा गंगाधर राव के समक्ष विवाह का प्रस्ताव ले जाने उनके राजा पहुचने पर गंगाधरराव द्वारा अतिथि सम्मान, तत्पश्चात रानी लक्ष्मीबाई के साथ राजा गंगाधरराव का हर्षोल्लास के साथ विवाह[3] आदि का वर्णन किया गया है।

अष्टम सर्ग –

इस सर्ग में झांसी नगर का वर्णन वहाँ की स्थिति का वर्णन वहाँ की सम्पत्ति, दुर्ग, महल, मन्दिर आदि का वर्णन किया गया है। वहाँ के मनुष्यों[4] का चित्रण सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया गया है।

नवम सर्ग –

विवाहोपरान्त रानी का झांसी नगर आगमन, उनकी तीन सेविकाओं सुन्दर, मुन्दर, काशी से उनकी भेंट तथा रानी नगर की स्त्रियों को व्यायाम शस्त्र–अस्त्र विद्या आदि के उपदेश तथा भारत हेतु नारियों की उपयोगिता[5] आदि का उपदेश आदि वर्णन किया गया है।

---

1. ऊचे मनू रोधय हे पितृव्य नानां पिता रोधय से रोधयेति।
   सुविह्वलात्मा नृपति वर्भूव मर्माणि कृत्तानि तथैव मोरौः ।। 5/165 झांसी0 च0
2. रमाहरिंप्राप्य च रेवती सा पराप्य नीलाम्बरमुदगत श्रीः ।
   शिवं शिवाच प्रमदालसास्ति समस्तवांछापरिपूरणेन ।। 6/20 झांसी0 च0
3. झांस्यामेव विवाहः स्यात् समं निश्चित्य पेशवा !
   प्रशस्यं लग्नमुक्तेत्वेष्टं त्रात्या झांसी न्यवर्त्तत !! 7/36 झांसी0 च0
4. कस्तूरीव जनानां ते स्वान्ते वसति विश्रुतिः !
   सर्वेश्रद्धायुतास्त्वां प्रत्यत्र प्रान्ते नरीनराः !! 8/3 झांसी0 च0
5. विचिन्त्य चाहूय विमृश्यकारिणी सरवींत्रयीं शीध्रमिलेशवल्लभा !
   अबोधयद् भारतवर्ष हेतोर्नरी जनानामुपयोगितां भ्रशम् !! 9/17 झांसी0 च0

दशम सर्ग –

इस सर्ग में महारानी लक्ष्मी बाई के वैधव्य का करूणा से ओत–प्रोत वर्णन किया गया है। जिसमें राजा गंगा धर राव की मृत्यु के शोक में शोकाकुल उनके मित्र आदि का नामोल्लेख किया गया है।

एकादश सर्ग –

इस सर्ग में रानी के दैनिक क्रिया–कलापों, देश तथा राज्य के प्रति उनके चिन्तन तथा अंग्रजो के प्रति उनके विचारों रानी की देश व राज्य के प्रति चिन्तित मनोदशा[1] का वर्णन किया गया है।

द्वादश सर्ग –

इस सर्ग में रानी का डाकू सागर सिंह के साथ हुये संग्राम तथा उनकी वीरता एवं धीरता का सुन्दर चित्रण किया गया है। डाकू सागरसिंह का पराजित होकर रानी की सेना में रानी द्वारा सम्मिलित किया जाना वर्णित है।

त्रयोदश सर्ग –

त्रयोदश सर्ग में झांसी के निवासियों का रानी के प्रति विश्वास[2] श्रद्धाभाव, रानी की वीरता की प्रशंसा, अंग्रेजों द्वारा कालपी पर आक्रमण, रानी तथा तात्या टोपे का अंग्रेजों के साथ हुये भयानक युद्ध का वर्णन किया गया है।

चतुर्दश सर्ग –

इस सर्ग में अंग्रेजों द्वारा झांसी पर किये गये आक्रमण, तथा रानी सहित उनकी सेना का अंग्रेजों से भयंकर युद्व का होना जिसमें अग्रेंजों का भयाकान्त होना उसी समय इल्हाजू द्वारा किये गये अविश्वास से झांसी की रानी का पराजित होना वर्णित किया गया है साथ ही सैनिको सहित रानी की वीरता, संचालन कुशलता, सैनिको के प्रति रानी की सह्रदया, युद्व, कुशलता आदि योग्यताओं को उभारा गया है।

पन्चदशसर्ग–

इस सर्ग में डा0 सुवोध चन्द्रपन्त ने झांसी युद्ध के पश्चात् हुये अंग्रेजों के क्रूर

---

1. परोपकारे च परेशपूजनै, वभूव तज्जीवनमर्पितं सदा !
सुप्ता स्वराष्ट्रार्थमजागरीत्तथा क्षणे क्षणे राष्ट्रदशाम चिन्तयत् !! 11/2झांसी0 च0

2. राजेश्वरी सा सकलस्य रक्षित्रयपेक्षते नैव सहायतां नः ।
एकापि योद्धुं प्रभवत्यरीणां समूहनेनेति जना अवोचन् ।। 13/8 झांसी0 च0

अत्याचारों, झांसी नगरी में किये गये उनके अविस्मरणीय उत्पातों, नगर विध्वंस एवं मृत्यु ताण्डव का अति सजीव करूण पूर्ण एवं मार्मिक चित्रण किया गया है। इस प्रकार झांसी के पतनोपरान्त स्थिति का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है।

षोडश सर्ग –

इस सर्ग में प्रकृति का चित्रण करते हुये रानी का ससैनिक पुत्र दामोदर को पृष्ठ पर बाँधकर झांसी से निकलने तथा पीछा करते हुये बोकर को पराजित कर सकुशल कालपी पहुँचाने का वर्णन है।

सप्तदश सर्ग –

रानी के अश्व के वर्णन के साथ ही कालपी पहुँचकर नानासाहब से विचारविमर्श आदि गतिविधियों के साथ करूण रस का सुन्दर परिपाक इस सर्ग में दृष्टव्य होता है।

अष्टादश सर्ग –

इस सर्ग में महारानी लक्ष्मीबाई के पिता श्री मोरोपंत को अंग्रेजों द्वारा दी गयी फांसी का मर्मस्पर्शी चित्रण किया गया है। तथा इस कृत्य के कारण वीरों द्वारा प्रतिकार की प्रतिज्ञा भी इसी सर्ग में की गयी है।

ऊनविंश सर्ग –

रानी का रावसाहब, तात्याटोपे, बांदा के नबाब बानपुर के राजा सहित कोंच प्रस्थान, सरह्यूरोज द्वारा कोंच पर आक्रमण, पेशवाई सेना सहित रानी की पराजय तथा भागकर गोपालपुरा पहुँचने का तथा कुछ गद्दारों एवं अंग्रेजों की
दमनात्मक कार्यवाही का वर्णन मिलता है।

विंश सर्ग –

गोपालपुरा पहुँचकर परस्पर विचार–विमर्श, सिन्धिया को पत्र लिखा जाना, प्रतिकूल उत्तर के पश्चात रानी द्वारा ग्वालियर पर आक्रमण, ग्वालियर पर अधिकार कर रावसाहब का राज्याभिषेक, कुछ समय पश्चात हर्षोल्लास में डूबे इन लोंगो पर अंग्रेजो का आक्रमण रानी की अन्तिम सांस तक अंग्रेजों से युद्ध उनकी वीरता का हृदयस्पर्शी चित्रण है।

एकविंश सर्ग –

रानी का घायल होकर रामचन्द्रराव द्वारा बाबा गंगादास के आश्रम तक लाना, रानी

का पीड़ा से युक्त होते हुये अपने मित्रों[1], इस्ट देवों[2], अपनी शैशवकालीन क्रीड़ाओं[3] आदि का स्मरण करना तथा रानी लक्ष्मी बाई की वीरगति[4] का अति स्वाभाविक एवं मार्मिक चित्रण इस सर्ग में किया गया है। अन्तिम राष्ट्रीय भावों को वर्णित किया गया है।

द्राविंश सर्ग –

इस सर्ग में रानी लक्ष्मीबाई के व्यक्तित्व एवं विशेषताओं के उज्जवल पक्ष को उभारते हुये, कवि वीरांगना लक्ष्मी बाई के प्रति भावात्मक श्रद्धांजलि[5] अर्पित कर स्वातान्त्र्य समर में उनके महान योग को स्वीकारते हुये देशवासियों को उनके उत्साह पूर्ण, वीरता पूर्ण, शौर्यमय जीवन से सर्वदा प्रेरणा[6] लेने की कामना करता है।

" शोध प्रबन्ध की संक्षिप्त पृष्ठ भूमि "

आधुनिक महाकवि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त संस्कृत साहित्य के देदीप्यमान कवि रत्न है। आपने झांसीश्वरी चरितम् की रचना कर संस्कृत साहित्य को वीररसोत्प्रेत, ओजोगुणोपेत, सरस एवं संस्कृत साहित्य में नारी पात्र को लेकर प्रथम विशिष्ट अमूल्य निधि प्रस्तुत की है।

आपके महाकाव्य का अध्ययन कर आपके महाकवि, तेजस्वी रूप को सबके समक्ष प्रस्तुत करने की उत्कृष्ट अभिलाषा लेकर मैंने आपके महाकाव्य "झांसीश्वरी चरितम् " का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन का दुष्कर कार्य करने का प्रयास किया ।

प्रस्तुत शोध में मैने 'झांसीश्वरी चरितम् " का सांहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन का प्रयास किया है। इस शोध में कुल नौ अध्याय है। जिसमें पीठिका के रूप में प्रस्तावना तथा

---

1. *किं ते स्मृतौ दत्त गुरुण्डसंज्ञैस्तैर्युद्ध्यमाना विपिनाजिभूमौ ।*
   नानाजिनं त्वां च हितं पराप्य वाणैरहं विद्धवतीमदिष्ठान् ।। 21/9 झांसी0 च0
2. *वन्दे सदा हे हजरन्मनोज्ञे साकेततेजोसि नृलभ्यशौर्या ।*
   वन्दे सदा हे हनुमन्तसिंह मानिन्द्रुतं छिन्धि शिरो रिपूणाम् ।। 21/24 झांसी0 च0
3. *क्रीड़ा भवत्सा खलु शैशवस्य वद्धा तथा शैशवसीमयैव ।*
   तोयं तथापि प्रयतो ददानस्तं मत्कृते पालयसि प्रकामम् ।। 21/17 झांसी0 च0
4. *सहसा नृपपत्न्यहिक्कत द्विरितो धूतरजश्चयाः पुनः ।*
   असु पक्षिण आशु लीनतां गतवन्तोह विदीर्ण पुष्कराः ।। 21/53 झांसी0 च0
5. *सर्वेमातर्नयनसलिल द्वीपवत्यां निमग्ना,*
   हा हा सर्वो विगलतितमां मुक्तिहासोपि कुण्ठाम् ।
   शोकध्वान्तोऽनुभवविषयीभूय सर्वस्य चित्ते ,
   हर्षोद्वेगं सममतितरां सत्रपं द्राक्करोतिं ।। 22/24 झांसी0 च0
6. *झांसीश्वर्या मरणदिवसं मारूतो यद्व्यलापीं-*
   त्सीत्कारं तज्जनितम सकृद वान्करोति प्रकामम्।
   तज्जै वाभूदतिशिथिलता व्याप्य सर्वत्र यासौ
   दत्ते तस्मिन् स्खलनमधिकं सर्वदाद्यापि वात् ।। 22/18 झांसी0 च0

विषय प्रवेश के पश्चात् अध्यायों को विभाजित किया गया है। जो इस प्रकार है।

प्रथम अध्याय -

इस अध्याय में संस्कृत महाकाव्य परम्परा, अर्वाचीन ऐतिहासिक महाकाव्यों में झांसीश्वरी चरितम् का स्थान निर्धारित करके, महाकाव्य का रचना विधान का संक्षिप्त परिचय तथा शोध प्रबंध की संक्षिप्त पृष्ठभूमि प्रस्तुत की है।

द्वितीय अध्याय -

इस अध्याय में साहित्य साधना के शिखर, सरस्वती के उपासक महाकवि पं० डा० सुबोध चन्द्र पन्त का जीवन परिचय व्यक्तित्व, कृतित्व तथा भाषा शैली का साहित्यिक सौष्ठव प्रस्तुत किया है।

तृतीय अध्याय -

महाकाव्य की कथावस्तु, महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से महाकाव्य का पल्लवन नायिका एवं अन्य पात्रों का चरित्रांकन कर ऐतिहासिक दृष्टि से पात्रों के चित्रण में कथा वस्तु की समीक्षा की गयी है।

चतुर्थ अध्याय -

इस चर्तुथ अध्याय में 'झांसीश्वरी चरितम्' के साहित्यिक सौष्ठव के अन्तर्गत काव्य के दोनो पक्षों– भावपक्ष एवं कला पक्ष के अन्तर्गत–भाषा शैली, काव्य रीति, पदलालित्य, छंद, अलंकार रस निष्पत्ति, प्रकृति चित्रण, बिम्बविधान आदि की समीक्षा प्रस्तुत की गयी है।

पंचम अध्याय -

इसमें झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य पर पूर्ववर्ती महाकाव्यों की साहित्यिक रचनाओं का प्रभाव, मौलिकता एवं अनुहरण को प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ अध्याय -

षष्ठ अध्याय में महाकाव्य में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का विवेचन, झांसी राज्य का स्वरूप, रानी का राज्यारोहण, अंग्रेजों की राज्य हड़पने की दुर्नीति का रानी द्वारा प्रतिशोध ,रानी की यौद्धिक अभियान में गतिशीलता, विभिन्न स्थलों पर अंग्रेजों से हुयी मुठभेड़ में रानी की वीरता तथा उनके वीरगति पाने का वर्णन है।

सप्तम अध्याय –

सप्तम अध्याय में झांसीश्वरी चरितम् का सैन्य विज्ञान की दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत रानी द्वारा शत्रु पक्ष के बलाबल का परीक्षण, सैन्य व्यूह रचना, सैन्य संचालन, संग्राम में प्रयुक्त विधि अस्त्र शस्त्र सैन्य उपकरण, सैन्य शिविर आदि की समीक्षा प्रस्तुत है।

अष्टम अध्याय –

इस अध्याय में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन के अन्तर्गत – बुन्देलखण्ड का सामाजिक, पारिवारिक, लोकजीवन, धार्मिक भावनायें रीति रिवाज, पर्व, उत्सव, लोक कलायें, संगीत–नृत्य, वाद्य आदि का निरूपण कर तत्कालीन राजनैतिक दशा, झांसी राज्य तथा झांसीश्वरी लक्ष्मीबाई के प्रभाव का निरूपण किया है।

नवम अध्याय –

नवम अध्याय में समस्त शोध निष्कर्षो का संक्षिप्त निरूपण उपसंहार के रूप में प्रस्तुत किया है।

द्वितीय अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् के रचयिता महाकवि पं० सुबोध चन्द्र पन्त का जीवन परिचय व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पं० सुबोधचन्द्र पन्त की भाषा शैली का साहित्यिक सौष्ठव

साहित्य उद्यान के सुरभित पुष्प आधुनिक महाकाव्यकार साहित्य विशेषज्ञ शास्त्र चूड़ामणि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का नाम संस्कृत साहित्याकाश में देदीप्यमान नक्षत्र की भांति हैं।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के जीवन को ज्ञात करने के लिये मै अत्यधिक प्रयासरत रही किन्तु दीर्घ समय पश्चात् मै उनके जीवन की कुछ प्रमुख विशिष्टताओं सहित उनके जीवन काल, शिक्षा आदि तत्वों को ज्ञात कर सकीं। इसमें पूर्ण सहयोग हमारे गुरू डी0लिट0, साहित्यरत्न, साहित्याचार्य डा0 कैलाश नाथ द्विवेदी जी का रहा, जिनकी मै आजीवन आभारी रहूंगी। सर्वाधिक प्रसन्नता मुझे इस बात की है कि आपके सहयोग से डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी का हस्तलिखित जीवन परिचय मुझे प्राप्त हुआ। अतः मै उनके प्रति विनम्र भाव सहित हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ।

जीवन परिचय –

श्री सुबोध चन्द्र पन्त का जन्म पर्वतीय अंचल के सुप्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में हुआ था। आपके वंश का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

सर्वप्रथम ई0 1303 में कोंकण (महाराष्ट्र) के भारद्वाज गोत्र के श्री जयदेव पन्त कूर्मांचल (कुमाऊँ) में आये थे। वहां के राजा के द्वारा श्री जयदेव पन्त को वहीं रोक लिया गया तथा पद्मपति पन्त मथुरा आये तत्पश्चात उन्नीसवी पीढी में श्री यमुना दत्त पन्त का जन्म हुआ। बीसवीं पीढी के श्री महादेव पन्त हुये तथा इक्कीसवीं पीढ़ी में श्री कन्हैयालाल पन्त का जन्म हुआ जो कि एक महान चिकित्सक ज्योतिर्विद् तथा कुशल तांत्रिक थे। शास्त्र चूड़ामणि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त बाईसवीं पीढ़ी के है। महान ज्यातिर्विद श्री कन्हैयालाल पन्त आपके पिता थे। इस प्रकार लगभग 700 वर्ष पहले से आज तक डा0 सुबोध चन्द्र पंत का यह वंश परिचय रहा।

डा0 सुबोध चन्द्र पंत अब पर्वतीय और कुमाऊँनी कहलाते है। आपका परिवार मथुरा से प्रयाग में आकर वस गया अर्थात आपने मथुरा को छोड़ प्रयाग में अपना निवास स्थान बनाया।

यह सारस्वत सूर्य 7/7 ई0 1934 को प्रयाग नगर में उदित हुआ। आपकी माता का नाम स्व0 जानकी देवी पन्त तथा पिता का नाम कन्हैया लाल पन्त था। यह माता पिता वास्तव में धन्य है जिन्होने डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जैसे व्यक्तित्व को जन्म दिया। वर्तमान समय में श्री पन्त वाराणसी में रहकर सारस्वत साधना में सतत् संलग्न है।

स्वनाम धन्य डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का व्यक्तित्व ऐसा है जो संस्कृत प्रेमी या साहित्य मर्मज्ञ के लिये

या उससे सम्बन्धित किसी भी व्यक्ति के लिये अपरिचित नहीं है। डा0 पन्त जी भारतीय संस्कृति को मात्र दिखावे के लिये अपनाने वाले नहीं अपितु इसका पूर्णरूपेण पालन करने वाले पूर्ण भारतीय है। आप सादा जीवन एवं उच्चविचारो वाले व्यक्ति है तथा आपके विचार सदैव उच्चकोटि के रहे हैं। सादा एवं सरल जीवन जीते हुये आपने सदा अपने कर्तव्यों का पालन करना अपना परमोद्‌देश्य समझा है। आपके जीवन के कुछ अमूल्य क्षण ईश्वर भक्ति–पाठ–पूजा आदि में भी व्यतीत होता है। आप सुबह प्रातः उठकर हल्का सा व्यायायाम आदि कर ईश्वर ध्यान करके, अपने अध्ययन लेखन आदि कार्यों में लगाते है। संयमित जीवन जीने से आपके व्यक्तित्व में आश्चर्य जनक गुणों का आभास होता है। आपके बोलने मात्र से ही आपकी प्रतिभा प्रस्फुटित होने लगती है। आपकी गौरवमयी भाषा आपके उज्ज्वल एवं प्रकाशवान व्यक्तित्व को व्यक्त करती है। आपके अनुपम गुण आपके व्यक्तित्व को और अधिक निखारते हैं। आपकी सादगी में गंभीरता की अनुपम झलक रही है। जिसे देखने हेतु किसी की साधारण दृष्टि पर्याप्त नहीं अपितु आपके व्यक्तित्व की गंभीरता को देखने के लिये कोई विशिष्ट दृष्टि ही चाहिये। जो उनके गंभीर व्यक्तित्व का दर्शन कर सके।

सुगठित शरीर, शुभ्र सुशोभित भाल पर मर्यादा की कतिपय रेखायें, विद्वता विषय बोध की खिड़कियों से झांकते हुये नेत्र युग्म, सौम्य और सहज स्वभाव, शालीनता सहजता की सरल मूर्ति ऐसे बनता है शास्त्र चूड़ामणि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का व्यक्तित्व। संस्कृत साहित्य के आप पहचाने हुये व्यक्तित्व है।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का शरीर वलिष्ठ तथा हृष्ट पुष्ट है। चूंकि आप एन.सी.सी. आदि कार्यो में कार्यरत रहे हैं अतः इस कारण आपका शारीरिक गठन अति उत्तम होने के साथ–साथ आप कभी कठोर परिश्रम से विमुख नहीं हुये। आपने अत्यधिक कठोर परिश्रम करके जीवन में सदैव सफलता ही प्राप्त की। इसी उद्योग का फल रहा आपकी शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर सफलता । शिक्षा के क्षेत्र में आप प्रयत्नशील रहे। इन्होने अपने समय का सदुपयोग अध्ययन कार्य में ही किया।

शिक्षा –

आपका परिवार शिक्षा दीक्षा में लब्ध प्रतिष्ठित था। आपने प्रारंभ से उच्चशिक्षापर्यन्त प्रयाग में ही अध्ययन किया तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में एम.ए. संस्कृत से किया। आपको अपने परिश्रम तथा ईश्वर पर पूर्ण विश्वास रहा और उन्होंने शिक्षा की प्राप्ति में पूर्ण मनोयोग के साथ कार्य किया।

आपने ई0 1947 मे प्रथम श्रेणी में हाई स्कूल तथा ई0 1949 में इण्टर किया। संस्कृत विषय दोनों ही कक्षाओं में रहा तथा दोनों कक्षाओं में आपने संस्कृत विषय में विशेष योग्यता प्राप्त की। ई0 1951 में आपने स्नातक किया जिसमें संस्कृत विषय में आपने हाईस्कूल एवं इण्टर की ही भांति प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त किये। ई0 1953 में आपने Master of art की डिग्री प्राप्त की जिसमें आपने सर्वोच्च अंक प्राप्त किये। आपने एम.ए. अंतिम वर्ष में 65% अंक प्राप्त कर भाषा विज्ञानादि प्रश्नपत्र में इतने अधिक अंक प्राप्त किये कि आपने एक रिकार्ड बना दिया।

हाईस्कूल से एम. ए. तक की शिक्षा को ज्ञात करने पर इस बात का आभास हुआ कि आपकी वाल्यकाल से ही संस्कृत विषय में अभिरूचि रही तथा सर्वदा आपने इस विषय में उच्च अंकों सहित प्रत्येक परीक्षा को अति कुशलता के साथ उत्तीर्ण किया। शायद यह पारिवारिक संस्कारों की ही देन हो।

इनका व्यक्तित्व किसी क्षेत्र विषय में ही नहीं अपितु आपने अन्य भाषाओं में भी अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। 1961 में तिब्बती भाषा का द्विवर्षीय डिप्लोमा आपने किया, जिसमें आपने 80 प्रतिशत से भी अधिक अंक प्राप्त कर अन्य भाषाओं में अपनी रूचि तथा अपने ज्ञान भण्डार का परिचय दिया। आपके शिक्षा काल में सर्व प्रमुख बात यह रही कि आपने कभी तृतीय श्रेणी में परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की तथा पूरक परीक्षित कभी नहीं रहे।

शिक्षा ग्रहण करने के साथ ही इनके हृदय में सदैव कुछ कर दिखाने का उत्साह और चाह रही अतः शिक्षा काल पूर्ण होने के पश्चात ही एक भी दिन रूके बिना 8/7 ई0 1953 से यह संस्कृत विश्वविद्यालय में 15 वर्ष से अधिक समय तक छात्र सहायक, संरक्षक तथा अध्यापक रहे तथा संस्कृत विश्वविद्यालय में ही आप प्रथम एन सी0 सी0 अधिकारी , एन सी0 सी0 बटालियन में पूर्णकालिक 'एडम आफिसर ' रहे। छात्र संरक्षक (डीन स्टूडेन्ट वेलफेयर) दिल्ली विश्वविधालय में भी कुछ समय तक आपने अध्यापन कार्य किया। इसके साथ ही राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान में आपने उपनिदेशक पद को सुशोभित किया। आपने वहाँ पर डिप्टी डायरेक्टर (शोध एवं प्रकाशन परीक्षा) के पद पर आसीन रहकर 1992,31/7 में आपने अवकाश प्राप्त किया (अध्यापन कार्य के साथ साथ आप जैसे व्यक्तित्व के स्वामी अन्य कार्यो में भी अपनी अभिरूचि दिखलाते थे। अपने अध्ययन को और अधिक सुशोभित करने का सुन्दरतम तथा निर्मल विचार आपके मस्तिष्क में रहा अतः शिक्षण कार्य के साथ साथ आप प्रिंसिपल के समस्त कार्य (परीक्षा, टाइम टेबुल आदि) प्रशासनिक व शैक्षिक कार्यो को भी संभाले रहते थे। इनके

अतिरिक्त आप 'चीफ प्रॉक्टर' 'असिस्टेंट रजिस्ट्रार' जैसे प्रशासनिक पदों पर भी कार्य करते रहें। 'डिबेटिंग सोसाइटी' के भी आप अध्यक्ष रहे तथा विदेशी छात्रों के अध्यापन तथा प्रशासन का कार्य भी आपके द्वारा चलाया गया।

आपके महान व्यक्तित्व एवं महान कार्यो को देखकर यह कहना अनुचित न होगा कि आपकी माता वास्तव में धन्य थीं, जिन्होंने आप जैसे बुद्धिमान विद्वान, अक्षय गुणों के भण्डार, अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को सदुपयोग में लगाने वाले श्रेष्ठ पुत्र को जन्म दिया।

डा० सुबोध चन्द्र पन्त ने अपने जीवन को सफल बनाकर अपने माता पिता एवं कुल का नाम उन्नत कर इन पंक्तियों को –

— *"परिवर्तिनी संसारे मृतः को वा न जायते।*

स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ।।[1] " चरितार्थ किया।

आप वास्तव में सरस्वती के पुत्र है गुणियों की गिनती में आप अग्रणी हैं। नीति ग्रन्थ की इन पक्तियों को " कि गुणियों की गिनती में जिस माता के पुत्र पर सर्व प्रथम उँगली न उठे तो वह माता पुत्रवती होने के बाद भी वन्ध्या ही कहलायेगी[2] " ध्यान में रखते हुये ही अपनी माता के मातृत्व की रक्षा कर गुणी लोगों में अग्रणी रहे हैं। यही नहीं आप परीक्षकत्व , संपादन आदि कार्यो में भी अग्रणी रहे।

संपादनः–

आपने विधालय की पत्र पत्रिकाओं, तथा शोध पत्रिकाओं का संपादन कर अपने सर्व गुण सम्पन्न होने का परिचय हमारे नेत्र युग्म के समक्ष दिया हैं।

परीक्षकत्व :–

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त इण्टर परीक्षा में सहायक , और उपप्रधान परीक्षक रहे। कुमाऊँ विश्वविधालय में संस्कृत एम0 ए0 उत्तरार्द्ध की वाक्परीक्षा (viva-voce) आपके द्वारा ली गयी। इसके साथ ही यह महान व्यक्ति सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. उपाधि के शोध प्रबंध तथा मौखिकी

---

1. नीतिशतक – भर्तृहरि – श्लोक सं0 32

2. गुणीगणगणनारम्भे न पतति कठिनी सुसम्भ्रमाद्यस्य।

तेनाऽम्बा यदि सुतिनी ! बद वन्ध्या कीदृशी भवति।। (5 हितोपदेश

परीक्षा के भी परीक्षक रहे।

वास्तव में भारतभूमि रत्नगर्भा है और आवश्यकता पड़ने पर उसने इन रत्नों द्वारा इस मातृभूमि को अलंकृत किया है, अर्थात इस रत्नगर्भा ने डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जैसे रत्नों में प्रमुख, गणनीय, रत्नों से भारत माता को अलंकृत कर इसको अनुपम, अद्वितीय, मनोहारी तथा मनोरम रूप प्रदान किया है। भारत भूमि के इस रत्न ने एम.ए. 'साहित्य विशेषज्ञ', 'शास्त्रचूड़ामणि' डिप्लोमा इन तिबेटन आदि उपाधियाँ प्राप्त की।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त को राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली द्वारा 'शास्त्र चूड़ामणि विद्वान' पूर्ण अवधि तक बनाया गया। जिस वर्ष आपने शास्त्र चूड़ामणि उपाधि धारण की उसी वर्ष सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय ने आपको सम्मानित किया।

इस तरह आप अप्रतिम व्यक्तित्व के स्वामी है तथा इस भारत भूमि के कभी न शान्त होने वाले दीप है। आपने अपनी शिक्षा का सदुपयोग अध्ययन कार्य में ही किया। नीति ग्रंथो में सत्य ही कहा गया है–

काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।

व्यसने च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ।।[1]

वास्तव में पन्त जी ने इस उक्ति को चरितार्थ करते हुये अनवरत शिक्षा प्राप्त कर बिना रूके हुये अध्यापन जैसे उच्च कार्य में अपने समय का पूर्ण रूपेण सदुपयोग करके छात्रों को कृतज्ञ किया क्योंकि विद्या ऐसा धन है जिसकी व्यय करने से और अधिक वृद्धि होती है। वास्तव में विद्वान व्यक्ति ज्ञान का सदुपयोग परहित हेतु ही करंता है। ज्ञान दान करने के लिये ही है और दान करने से ही उसकी वृद्धि होती है। यह बात पन्त जी के शिक्षा कार्य से शिक्षण कार्य तक का अध्ययन करने से स्पष्ट प्रतीत होती है। कहा भी गया है।

" विद्या विवादाय धनं मदाय,

शक्ति परेषां परिपीडनाय!

खलस्यसाधोर्विपरीतमेतद्,

ज्ञानाय दानाय च रक्षनाय।। "

---

1. हितोपदेश् – पृ0 २ऽ

इन नीति श्लोकों का पूर्ण ज्ञान रखते हुये ही शायद पन्त जी अध्यापन का कार्य और उसके पश्चात् अवकाश प्राप्त करने के बाद भी अपने लेखन कार्य द्वारा विद्या का दान अनवरत करते रहे है। कुछ विशेष कृतियों एवं रचनाओं से आपने जो यशोपलब्धि प्राप्त की वह आपके कृतित्व के माध्यम से इस प्रकार है–

कृतियाँ – प्रकाशित –

चन्द्रालोक, शाकुन्तल, दशकुमारचरित (उत्तरार्द्ध) नैषधीय चरित (प्रथम सर्ग) आदि काव्यों का हिन्दी पद्यानुवाद , संस्कृत और हिन्दी व्याख्या सहित किया। साथ ही संस्कृत में चार पांच सहस्त्रनाम (उड़िया लिपि में) डा० सुबोध चन्द्र पन्त द्धारा लिखे गये हैं।इस महान विभूति ने कुछ लेख व कवितायें भी हिन्दी व संस्कृत में लिखी हैं जो कि प्रकाशित हो चुकी हैं तथा अपने प्रकाश से पाठकों के मार्ग को आलोकित कर रही हैं।

अप्रकाशित– रचनायें–

आपके हिन्दी और संस्कृत में सैकड़ों पद्य एवं निबंध ऐसे है जो वर्तमान समय तक प्रकाशित नही हुये हैं अतः अप्रकाशित हैं।

हिन्दी में कुछ शतकों के नाम–

आपने हास्य रस से ओत प्रोत कुछ शतकों की रचना कर मानव के जीवन में मनो–विनोद के महत्व को स्वीकार किया हैं। इन शतकों के नाम इस प्रकार हैं–

जीजा साला , जय जवान जय किसान , ये सभी गद्यात्मक हैं। हास्य रस का इनमें सुन्दरतम एवं अनूठा परिपाक हुआ हैं। इन रचनाओं के साथ ही कुछ काव्यों का अपने संस्कृत हिन्दी में पद्यानुवाद कर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया। जिन रचनाओं का आपने अनुवाद किया वह निम्नलिखित हैं–

1. 'प्रिय प्रवास' का संस्कृत पद्यानुवाद (सम छन्द) । (हरिऔध रचित)
2. 'विकट भट' का संस्कृत पद्यानुवाद ।
3. 'उद्धवशतक' का संस्कृत पद्यानुवाद (रत्नाकर रचित उद्धव शतक)
4. कालिदास कृत 'मेघदूत' खण्डकाव्य का हिन्दी पद्यानुवाद।
5. कालिदास कृत 'कुमार संभव' महाकाव्य का हिन्दी पद्यानुवाद।

6. श्री हर्ष रचित 'नैषध महाकाव्य' का हिन्दी पद्यानुवाद।

7. पण्डित राज जगन्नाथ कृत मुक्तक काव्य 'भामिनी विलास' का हिन्दी पद्यानुवाद।

8. भर्तृहरि कृत 'शतक' आदि का हिन्दी पद्यानुवाद आपकी ज्ञान के अथाह सागर में निमग्न रहने वाली लेखनी से किया गया है।

इन रचनाओं से ज्ञात होता है कि अध्यापन कार्य के साथ ही साथ आपने रचनाकार्य भी किया तथा अपने इस अनुपम कार्य द्वारा संस्कृत साहित्य को अपनी कृतियों रूपी अमूल्य निधि प्रदान की। संस्कृत के अतिरिक्त कवि सुबोधचन्द्र पन्त 'हिन्दी' भाषा काव्य रचना में भी निपुण है तथा हिन्दी संस्कृत पद्य काव्यों के अनुवाद में भी आप सिद्ध हस्त रहे। विशेष बात तो यह है कि आप हिन्दी संस्कृत के अतिरिक्त बंगाली भाषा में भी कुशलता का परिचय देते हुये इन समस्त भाषाओं पर अपना पूर्ण अधिकार रखते है। आपकी विद्वता के विषय में विद्ववर प्राचार्य पण्डित गयाचरण[1] त्रिपाठी ने अपने सुन्दर विचार इस तरह व्यक्त किये है –

"Shri pant is a gifted poet. He Composes verses not only in sanskrit but also in hindi & Bangali. It is surprising how he manages to spare time for his manifold litearay Persuits amidst heavy administrative duties and family liabilites."[2] डा० संबोध चन्द्र पन्त के व्यक्तित्व का निर्धारण करने में जी० सी० त्रिपाठी के ये शब्द अत्यन्त ही सार्थक है।

डा० पन्त संस्कृत के मेधावी विद्वान है। आपकी कृतियों में सर्वप्रमुख कृति संस्कृत महाकाव्य 'झांसीश्वरीचरितम्' ही है। आपकी कीर्ति पताका इसी काव्य वृक्ष पर दोलायमान है। इस कावय की रचना 1959 में की गयी थी तथा इसका प्रकाशन 1979 में केन्द्रीय विद्यापीठ प्रयाग में ही हो सका। इस महाकाव्य में झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के जीवन चरित को कवि द्वारा उभारा गया है।

इतना अत्यधिक ज्ञानवान, विद्वान तथा हिन्दी एवं संस्कृत भाषा के साथ–साथ बंगाली भाषा पर भी

---

1. प्रिंसिपल – जी० एन० झां०, के० एस० विद्यापीठ इलाहाबाद।

2. झांसीश्वरीचरितम् Foreword - Page 6

अपना प्रबल अधिकार रखने पर भी आपका ज्ञान आपको गंभीर एवं शान्त बनाये रखता है। वास्तव में विद्वान व्यक्ति कभी भी अपनी विद्वता पर अहं नहीं करता है।[1] ज्ञान को किसी सीमा में नहीं बांधा जा सकता, इस परिवर्तन शील क्षण भंगुर संसार में ऐसा ही ज्ञान का अथाह सागर पन्त जी के अन्तःकरण मे है और आपके अथाह ज्ञान सागर को कोई पारखी ही ज्ञात कर सकता है क्योकि इनके ज्ञान का जितना जानने का प्रयत्न किया जाये मानव उतना ही ज्ञान सागर में डूबता जाता है।

आपने इस पंक्ति को कि " जो अथक प्रयास परिश्रम करता है, उसकी सहायता ईश्वर भी करते है"[2] चरितार्थ करते हुये अपने बाल्यकाल से लेकर वृद्धावस्था तक अर्थात अभी भी अथक प्रयत्न से अनवरत बिना किसी व्यवधान के ईश्वर की सहायता प्राप्त करते हुये सभी अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति की।

वास्तव में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जैसा व्यक्तित्व खोजपाना, या मिलपाना दुस्कर ही है। आप तीव्र मस्तिक वाले, बहुश्रुत, वहुज्ञ तथा निरन्तर अध्ययन में ही निमग्न रहने वाले व्यक्ति हैं। अंधकार से युक्त स्थान से भी प्रकाश लाना आपका प्रयास रहा है। आप स्वभाव से ही साहित्यिक रसिकता से ओतप्रोत है। उनकी यह विलक्षण छवि ही उन्हें सहृदय जनों के मानस पटल में स्नेह और सम्मान का स्थान दिला देती है। श्री पन्त एक तपस्वी की भांति ही साहित्य सेवा में ही जीवनयापन करना अपना प्रमुख उद्देश्य समझते है। आप संस्कृत साहित्य के विद्वान एवं मनीषी है।

इस तरह आपने एक विशिष्ट व्यक्तित्व के साथ इस काव्य जगत को अपनी काव्य रूपी वर्तिका से सम्पूर्ण साहित्याकाश को प्रकाशित किया। ये तो था आपके जीवन तथा व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय। यद्यपि आपके जीवन से सम्बन्धित तथ्यों को पूर्णरूपेण खोज पाना सरल नहीं, क्योकि जितना अधिक आपके जीवन के महत्वपूर्ण तथ्यों एवं आपके व्यक्तित्व को जानने का प्रयास करती हूं उतना ही आपके गम्भीर व्यक्तित्व एवं विद्वता की गहराई में डूबती जाती हूं तथापि सर्वाधिक प्रसन्नता मुझे इस बात की है कि आपके कुछ विशिष्ट अद्भुत आलापों को मैं सबके समक्ष प्रस्तुत कर रही हूँ क्योंकि अथक प्रयास

---

1. *सम्पूर्ण कुम्भो न करोति शब्दमर्धो घटोघोषमुपैति नूनम।*

   विद्वान कुलीनो न करोति गर्वजलपन्ति मूढ़ास्तु गुणैर्विहीनाः।।

2. *उद्यमः साहसं धैर्य बुद्धि शक्ति पराक्रमः।*

   षडेते वर्तन्ते, तत्र देवः सहायकृत्।।

के पश्चात् भी शायद आपके जीवन के इन प्रमुख तथ्यों को ज्ञात करना सम्भव नहीं था परन्तु माननीय गुरूवर साहित्य रत्न डा0 श्री कैलाश नाथ जी द्विवेदी के प्रयास और सहयोग से तथा स्वयं डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के हस्तलिखित पत्र द्वारा में इन विशिष्ट तथ्यों को खोज पाने में सफल रहीं। आपके जीवन के कुछ आश्चर्यचकित तथा विस्मयाकुल कर देने वाले अद्भुत आलाप (बातें) है जो इस प्रकार है। –

1. आपकी वस्तु चाहे जहां खोती है वह आपको मिल अवश्य जाती है अर्थात खोयी वस्तु आपको पुनः स्वतः प्राप्त हो जाती है।

2. *आवृत्ति* – जब आप कोई नया शब्द सुनते है तो वह अन्यत्र भी आपको दिखलाई या सुनाई पड़ता है।

3. जब आप किसी अपरिचित व्यक्ति का नाम सुनते है तो कुछ घंटो पश्चात ही आपको वह व्यक्ति दर्शन देता है, अर्थात उससे आपकी भेंट होती है।

4. आपको कभी किसी वस्तु की अभिलाषा या चाह नहीं होती और यदि होती है तो वह वस्तु कुछ मिनटों में ही आपको प्राप्त भी हो जाती है।

वास्तव में यह संयोग नहीं है क्योकि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के अनुसार संयोग की एक सीमा होती है और यह सत्य भी है क्योंकि प्रत्येक वस्तु की प्राप्ति में संयोग नहीं हो सकता है।

5. आपकी बहुमुखी प्रतिभा का परिचायक यह आश्चर्य जनक सत्य है कि आप एक ही दिन में सैंकड़ों हिन्दी और संस्कृत के छंद लिख देते है। झांसीश्वरी चरितम् में बाईस सर्ग है और प्रत्येक सर्ग को एक दिन में पूर्ण करके आपने वास्तव में अद्भुत कार्य किया क्योंकि शायद ही यह संभव है ऐसा विचार किसी के भी मन में उठ सकता है किन्तु यह सत्य है जिसका लोगों द्वारा आसानी से विश्वास कर लेना संभव नहीं तथापि आपको इसका स्मरण कर अति हर्ष होता है एवं सुख प्राप्त होता है।

6. यन्त्र गणितः (भद्र) (मैजिक स्कवायर) की कई समस्याओं का समाधान जो आज तक कोई नहीं कर पाया जो कि आपके द्वारा किया गया है जैसे 5X5 और 6X6 आदि के आपने लाखों उत्तर निकाल दिये है जबकि गणित विषय आपने केवल कक्षा अष्टम् तक ही लिया था।

7. महर्षि महेश योगी द्वारा विदेशों में संस्कृत अध्यापन हेतु आपको बुलाया जा चुका है पर किन्हीं कारणों वश आपका वहां जाना टलता जा रहा है।

8. आप किसी व्यक्ति को रोते हुये नहीं देख सकते अर्थात किसी के आंसू आपसे देखे नहीं जाते तथा क़रूण रस से ओत–प्रोत वर्णन पढ़ते समय आपकी आंखों से इतने आंसू गिरते है कि वस्त्र भीग जाते है, तथा आपकी नासिका से भी जल गिरने लगता है।

ऐसे विद्ववर, सरस्वती सपूत, वाग्देवी के उपासक, प्रतिभा सम्पन्न शास्त्र, चूड़ामणि, साहित्य रत्न, साहित्य शिरोमणि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के प्रति समाज एवं संस्कृत साहित्य के साथ–साथ समस्त साहित्य चिर ऋणी रहेगा।

अपने इन शब्दों के माध्यम से मैं आपके शतायु होने की सर्वशक्तिमान से प्रार्थना करती हूं–

" काव्य के है आप धनी, कोई अपर ऐसा नहीं ।
है काव्य के ये पुजारी, कोई भक्त ऐसा नहीं ।।
स्वकाव्य ज्योति से किया प्रदीप्त काव्य लोक को।
भारत के ये दीप हैं, ऐसे वैसे दीप नहीं ।।
रहें सदा ये छाये जग में, वरसायें नित अमृत कण।
हो शतायु जीवन इनका, करती 'कल्पना' इनका वन्दन।।

आपके जीवनपरिचय व्यक्तित्व एवं कृतित्व के पश्चात अब आपके अनन्त कवि रूप को सबके समक्ष उभारा जाये ताकि इनके महाकवि रूप से जो अनभिज्ञ है वह भी परिचित हों अतः आपकी भाषा शैली के साहित्यिक सौष्ठव पर भी दृष्टिपात करते है।

भाषा शैली का साहित्यिक सौष्ठव :-

कविता में भावनाओं की प्रमुखता हुआ करती है। भावना विहीन काव्य सुन्दर से सुन्दर भाषा का होते हुये भी हृदयस्पर्शी नहीं हो पाता, परन्तु भावों की इतनी महत्ता होते हुये भी स्वीकार करना पड़ता है कि कलापक्ष अथवा भाषा जो भावों को अभिव्यक्त करने के साधन हैं का अभाव भावो को प्रेषणीय नहीं बना सकता। जब हमारे पास अपनी बात को कहने के लिये कोई साधन या वाणी नहीं है तो हमारे भावों का मूल्य ही क्या है? इसलिये विद्वानों ने प्राचीन काल से लेकर आज तक भाषा शैली को अति महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

'झांसीश्वरीचरितम्' महाकाव्य के अनुशीलन से डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का संस्कृत भाषा पर असमान्य अधिकार प्रकट होता है। प्रकृत महाकाव्य में पन्त जी ने ओजपूर्ण शब्दावली का प्रयोग किया

है। आपकी भाषा शैली विषयानुकूल, ओजमयी और वीररस की व्यंजना के लिये सर्वथा उपयुक्त है। अतः आपकी शैली को वीर रस की ओज पूर्ण शैली कहा जा सकता है। आपकी शैली नैसर्गिक, सहृदयों के हृदय को आकृष्ट करने वाली है। आपने उदात्त एवं मधुर पदावली का प्रयोग किया है।

आपके युद्ध वर्णन प्रसंगो में परूष वर्णों का प्रयोग देखने को मिलता है। एवमेव शान्त एवं वात्सल्य रस के चित्र माधुर्य गुण युक्त कोमलकान्त पदावली में चित्रित कर पन्त जी ने अपने भाषागत सौष्ठव का प्रदर्शन किया है। उदात्त तथा मधुर शैली के साथ ही यत्र तत्र आपकी भाषा में कुछ क्लिष्टता का भाव अवश्य आ गया है तथा कुछ अप्रचलित शब्दों का प्रयोग करने से महाकाव्य में कुछ दुरूहता अवश्य आगयी है तथापि आपकी शैली उत्कृष्ट रही है। इसमें आपकी विद्वता एवं आपके पाण्डित्य के दर्शन होते है। यद्यपि यह वर्तमान संस्कृतज्ञों के लिये कुछ दुरूह होने के कारण आनन्दानुभूति में बाध ाक है तथा कुछ स्थलों पर कविता का भाव, भाषा और शब्द चयन इतना मधुर है कि पढ़ते ही तद्विषयक भाव पाठक के मानस पटल तथा नेत्र युग्म के सम्मुख उपस्थित हो जाता है। भाषा में शब्दों के इस चयन का अवलोकन करें –

कल्पते स्म न विलोभयितुं यं पेशवा पदमपि प्रथितं तत्।

धीरताजित जगत्त्रय असीद्हर्ष निर्भरमना हि चिमाः सः ।। 4/28 झा० च०

भाषा की सरलता सहजता तथा मधुरता से साक्षात्कार कराने वाले इन श्लोकों को देखें –

वेद्मि नो सप्रयत्नोपि कज्जलं वक्त्रभूवणम्।

कज्जलाभूषणं वक्त्रं यद्धोभे भूष्यभूषणे ।। 3/30 झा० च०

भावों की सहजता एवं सरलता देखें –

स्वसा जाता स्वसा जाता मम कीदृक् प्रिय प्रिया।

एहि पश्य त्वमप्यत्र सर्वभिन्नेयमस्त्यहो ।। 3/1 झां० च०

आपकी साहित्य मर्मज्ञता, भावुकता एवं गम्भीरता के सम्बन्ध में यह जान लेना अत्यन्त अनिवार्य है कि आपने रचना नैपुण्य का अनावश्यक प्रदर्शन कहीं नही किया है तथा अनावश्यक शब्द चमत्कार आदि में भी वह नहीं फंसे है। हां आवश्यकतानुसार कुछ चमत्कार ज्वलन्त प्रदर्शन आपने अवश्य किया है जो आपकी कवि प्रतिभा का निदर्शन है।

स्निग्ध भाषा शैली में रानी का संघर्षमय जीवन चित्रित करने में तथा सामान्य जनता के साथ प्रचुर

सहानुभूति दिखलाने में झांसीश्वरीचरितम् भारतीय दृष्टि से आदर्श इतिहास प्रस्तुत करने में समर्थ होता है।

कोमलकान्त पदावली के सूचकइन श्लोकों को देखें –

यस्याः कृपाया महिषासुरस्य यातोमिभानः प्रलयं क्षणेन।

उद्याम्य सा रक्तकणान् समन्ताद् दैत्यावलीनां हृदयं विभिन्द।। 1/6 झा0 च0

शान्त रस से ओत प्रोत इस कोमलकान्त पदावली, स्निग्ध भाषा शैली का अवलोकन करें –

शक्तिः समस्तस्य भवस्य सर्वा या वर्त्तते प्रत्यणु जीव सङ्घे।

लब्धवैव यद् भास्वरभावमीषन्नेत्रद्वयं भास्वरतां तनोति ।। 1/1 झांसी0च0

आपकी भाषा शैली शब्दों की योजना में आनुप्रासिक होने के साथ–साथ सार्थक तथा भावानुकूल भी है–

धर्मश्च कर्माभवतां विलुण्ठिते देशश्च वेशोभवतां विलुण्ठितौ ।

लज्जा च सज्जाभवतां विलुण्ठिते रंगश्च संगोभवतां विलुण्ठितौ।। 14/65 झां0 च0

'झांसीश्वरीचरितम्' में कवि की काव्य शैली का चारूतम रूप प्रस्फुटित हुआ है। समुचित शब्द विन्यास तथा शब्द शोधन उत्तम कोटि का है। भाषा तथा भावों में अनुपम सामंजस्य है। रानी लक्ष्मी बाई की घायलावस्था के समय शैशव कालीन क्रीड़ा के स्मरण में भाषा तथा भावों का सुन्दर सामंजस्य देखें–

क्रीड़ाभवत्सा खलु शैशवस्य वद्धा तथा शैशवसीमयैव।

तोयं तथापि प्रयतो ददानस्तं मत्कृते पालयसि प्रकामम्।। 21/17 झां0 च0

डा0 सुबोधचन्द्र पन्त ने क्लिष्ट से क्लिष्ट तथां सरल से सरल भाषा को समान रूपेण प्रस्तुत कर काव्य कुशलता का तथा भाषा पर अनुपम अधिकार का परिचय दिया है। प्रारम्भिक कुछ सर्गो में आपने कोमलकान्त पदावली के प्रकाशन के लिये वैदर्भी रीति का आश्रय लिया है तथा अन्तिम कुछ सर्गो में युद्ध आदि के वर्णन के समय वीरोल्लास की व्यंजना के लिये गौड़ी की गाढ़बन्धता रखी है जैसे –

अनयत विद्रुलायास्तानि लक्ष्म्या वंचासि प्रति निवसथमस्याः सैनिकः सैनिको द्राक्।

अकृषत बहवस्तद्घोषणं तारमुग्रं पुनरलसदतुल्यं साहंसं सैन्य मध्ये ।। 19/29 झां0 चं0

अपिच –

पुनरूदयमषापुर्घेर्हुंकारसार्था मरमसव उग्राः प्राप्तुकामा बभूवुः।

स्थितिमधिषत योद्धुं स्वानुकूलां गलौल्यामभिपतननिदेशं प्राप्तुयुत्कां बभूवुः।। 19/31 झां0च0

वास्तव में इस महाकाव्य में जहां एक ओर ललित सुकुमार समास रहित तथा मधुर पदावली का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है वहीं दूसरी ओर भंयकर युद्ध वर्णन के समय प्रकृति के भैरव और प्रचण्ड दृश्यों के चित्रण के समय लम्बे-लम्बे समास वाले ओजोविशिष्ट क्लिष्ट पद्य भी दृष्टिगोचर होते है। प्रकृति के इन वर्णनों में आपकी शैली के क्लिष्ट पक्ष को देखें -

खगकलरवदम्भात् कीर्त्तनं वा प्रभातं, ससुखशयन पृच्छां वाकरोद्वन्दि वृन्दम्।

कृति निकरम शेषं नैत्यिकं सा विधाय, परममवहितात्मा सैन्य सज्जां चकार ।।19/14झां0च0

अपिच -

रजनिमतिमयां तां तं हयस्यान्त्यकालं, जनितृमरणचर्चा वत्सलत्वाहतिंताम्।

स्मरणमुपनयन्तीं राजपत्नी चकम्पे, तदिदिव हृदयाग्रे कापि पुस्फोर घोरं ।। 19/15 झां0च0

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने भाषा को क्लिष्ट बनाकर चमत्कार प्रदर्शन का कोई अनुचित प्रयास नहीं किया है। आपका भाषा पर पूर्ण अधिकार है तभी तो आपकी भाषा शैली इतनी उत्कृष्ट बनगयी है। भाषा पर पूर्ण अधिकार के अभाव में यह कदापि संभव नहीं था। आपकी भाषा शैली सर्वत्र मीठी मुस्कान लिये हुये भावों से गंभीर गुणों से गुणमयी, सौंदर्य एवं माधुर्य से युक्त पाठकों को अपनी ओर हठात् ही आकर्षित करती है। एक विद्वान के मत में इस महाकाव्य की - " भाषा गुणमयी अलंकृत तथा भावपूर्ण है। इसका रचयिता सर्वथा साधुवाद का पात्र है।[1]" तथा अन्य विद्वान के मत में - "पुस्तक नितान्त मौलिक है तथा उत्कृष्ट रचनाओं में स्थान पाने योग्य है। विषयवस्तु भाषा और शैली तीनों दृष्टियों से पुस्तक उत्तम है।[2]"

कवि ने विषयानुकूल शब्दावली का प्रयोग किया है। वीर रस का काव्य होने के कारण इसमे सर्वत्र मधुरता तथा सरसता मिलना संभव नहीं है फिर भी अपूर्व वर्णन शक्ति के प्रयोग में पन्त जी ने अपना

---

1. प्रो0 चण्डिकाप्रसाद शुक्ल - अध्यक्ष संस्कृत विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय

झांसीश्वरीचरितम् पृष्ठ -8 -"शुभाशंसनम्"

2. प्रो0 वद्रीनाथ शुक्ल - कुलपति सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी

झांसीश्वरीचरितम् पृष्ठ -8 - "शुभाशंसनम्"

कौशल दिखलाया है। भवभूति का यह कथन है कि –

"भाषा का प्रौढ़त्व, व्यंजना प्रणाली का औदार्य तथा अर्थ गौरव ही पाण्डित्य और वैदग्ध्य (कलात्मक प्रतिभा) के परिचायक है[1]" सत्य है।

इस महाकाव्य "झांसीश्वरीचरितम्" में भाषा की प्रौढ़ता, शब्द विन्यास की प्रांजुलता, भावों की गरिमा ये सभी गुण समानरूपेण परिलक्षित होते है। भाषा शैली में पाण्डित्य और प्रतिभा दोनों का मणिकांच्चन संयोग हुआ है। आपकी भाषा शैली सहज प्रवाह में वर्णित विषय का सुन्दर चित्रण अंकित करती है। आपकी भाषा शैली में सर्वत्र प्रासादिकता, ओजस्विता एवं मधुरता के साथ–साथ ध्वन्यात्मकता तथा वर्णन कुशलता भी दृष्टि गोचर होती है। यत्र तत्र आपकी भाषा शैली में सुभग शब्द मैत्री द्वारा अत्यन्त रमणीयता का संचार हुआ है। निम्नलिखित श्लोक में शब्दों और अक्षरों की मैत्री का अनूठा उदाहारण देखियें –

भटा वभूवुः परमालसाश्चला महाकुलाः सन्त इतस्ततोद्रवन्।

असित्सरु राज्ञधरत्करेण सा दृढ़ं चचालार्जयितुं यशोभरम्।। 20/50 झां0 च0

वीर रस प्रधान इस महाकाव्य की गुणमयी भाषा शैली मानव के चित्तचंचरीक को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। भयानक रस में ओजपूर्ण शैली का उदाहारण देखें –

आलोक्यतां भयमयीं नृपपत्न्यवस्थां, तस्थौ विचारनिरता निमिषद्वयं सा।

स्तब्धींबभूवतुरूदीर्णभये अकस्मात्सख्यौ, तु चित्रमवलोक्य विचित्रमेतत्।। 12/33 झां0च0

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त मानवी मनोभावों के विश्लेषण में और मार्मिक चित्रण में अद्वितीय रहें है। करूण से ओत–प्रोत इस मार्मिक श्लोक को देखें –

नयन युगलं व्यावृत्तं द्राङ्.नभो वहदार्द्रतां, तममृगयत क्षान्त क्षान्तं निरन्तरमीश्वरम्।

वितरति धरा घाते घातं यदैव निरन्तरं, भवति भुवने श्रेष्ठालम्बस्तदैककमम्बरम्।।15/16झां0च0

इस प्रकार डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने अपनी भाषा शैली की छंदानुकूल, रसानुकूल, अलंकारों तथा

---

1. *यत्प्रौढ़त्वयुदारता च बचसां यच्चार्थतो गौरवम।*

तच्चेदस्ति ततस्तदेव गमकं पाण्डित्य वैदग्धययोः।।

मालती माधव (भवभूति)

प्रसंगानुकूल ही प्रस्तुत किया है। आपकी भाषा शैली कहीं-कहीं क्लिष्ट होते हुये भी कहीं-कहीं अत्यन्त सरल, सरस तथा प्रवाहमयी है। भाषा की सरलता और भावों की उत्कृष्टता का समन्वय ही कवि की प्रमुख विशेषता है अवसरानुकूल दीर्घ समास वहुल पदावली तथा लघु सरस, सरल पदावली का प्रयोग किया गया है। आपका प्राभावोत्पादक महाकाव्य रस छंद अलंकार, पदलालित्य, वस्तु वर्णन, रीति गुण आदि से सुसज्जित एवं भाषा शैली से अलंकृत रस पेशलता से युक्त मानव मन में सुखद सुख का संचार करता है। वीर रस का काव्य होने के कारण गौड़ी रीति का अवलम्बन किया है किन्तु यत्र तत्र वैदर्भी की मनोहारी छटा भी विखरी हुयी है जिससे काव्य में मनोहारी सरस तथा हृदय ग्राही झाँकी भी प्रस्तुत की गयी है।

आपकी भाषा शैली की प्रशंसा इन शब्दों में की गयी है -

"The language of the work is chaste and polished. Corresponding to its central theme. it is vigours and forceful in nature."[1]

इस प्रकार हम देखते है कि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त की भाषा में वैदर्भी एवं गौड़ी रीति का स्वाभाविक प्रयोग है। आपका भाषा का साहित्यिक सौष्ठव दर्शनीय, अविस्मरणीय एवं हृदय ग्राही है। भाषा की सरलता, पदों की सुन्दरता, समासों का समान रूपेण प्रयोग, गाढ़ बन्धनों की विकटता सब मिलकर कवि के भावों से अनुस्यूत होकर आपकी काव्यकला में चमत्कार प्रस्तुत करते है।

---

1. जी0 सी0 त्रिपाठी - प्राचार्य गंगानाथ झां केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ

झांसीश्वरीचरितम् Foreword Page - 6

तृतीय अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् की कथावस्तु एवं महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से उसका पल्लवन, नायिका एवं अन्य पात्रों का चित्रांकन, ऐतिहासिक की दृष्टि से नायिका सहित पात्रों के चित्रण में कथावस्तु की समीक्षा
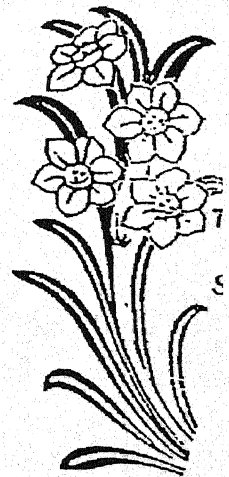
झांसीश्वरी चरितम् एक महाकाव्य है। संस्कृत महाकाव्यों में विकास की दृष्टि से यह एक विकसित काव्य (Epic of growth) है जिसमें कथावस्तु का स्वाभाविक विकास हुआ है। कथावस्तु से तात्पर्य है वर्ण्य विषय और उद्देश्य। प्रबन्ध काव्य की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट काव्य है। इसमें वे सभी तत्व विद्यमान है जो एक आदर्श और उच्चकोटि के काव्य में होने चाहिये। महाकाव्य के लिये जो आदर्श संस्कृत के विद्वानों या अलंकार शास्त्रियों ने प्रस्तुत किये है वे हमें इस महाकाव्य में प्राप्त होते है। इसकी कथावस्तु सर्गबद्ध की गयी है।इस महाकाव्य की कथावस्तु को महाकवि डा0 सुबोधचन्द्र पन्त ने बाईस सर्गो में आबद्ध किया है। कथा के मार्मिक प्रसंग ने कवि की उत्कृष्ट काव्य शक्ति का परिचय प्रस्तुत किया है।

इस देश के उज्ज्वल इतिहास के पृष्ठों में जिन वीरांगनाओं जीजामाता, अहिल्याबाई, दुर्गावती आदि का उल्लेख है।उन्हीं में से एक अंग्रेजो के छक्के छुड़ाने वाली, स्वराज्य के लिये संघर्ष करते–करते अपने प्राणों की आहुति देने वाली, वीरता की प्रतिमूर्ति वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई।

इस चरितार्थात्मक महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् में लक्ष्मीबाई के जीवन चरित को उभारा गया है। जो कि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी का महारानी लक्ष्मीबाई के जीवन, उनका स्वराज्य के लिये संघर्ष एवं स्वातान्त्रय युद्ध में उनके बलिदान की यशोगाथा से परिपूर्ण ऐतिहासिक महाकाव्य है। बाईस सर्गो में आबद्ध इस महाकाव्य की कथावस्तु इस प्रकार है –

इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में पन्त जी ने पीठिका प्रस्तुत की है जिसमें अनेक वीरांगनाओं के नामोल्लेख सहित, परम्परानुसार मंगलाचरण, इसी संदर्भ में दुर्गा की स्तुति तथा शक्ति के काली शाकम्भरी, कर्मवती, जीजाबाई, दुर्गावती और इन्हीं शक्तियों का लक्ष्मीबाई के रूप में अवतरित होना वर्णित है। 'दुशशिप्तशती' में – जंब चण्डमुण्ड आदि का दुराचार था तब दुर्गा ने असुरों का नाश करने के लिये अवतार लिया उसी प्रकार अंग्रेजो के नाश हेतु लक्ष्मी बाई का अवतार हुआ। इसी प्रसंग में महारानी लक्ष्मीबाई के शौर्य की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की है। चण्डी आदि के रूप में लक्ष्मी का अवतरित होना इसी सर्ग में वर्णित है।

तान्येव लक्ष्मीरिति जन्मलेभे लक्ष्म्याश्च चण्डयाश्च विमिश्रितं या

युद्धे मुनि प्राणवसूड्ड पाख्यईशाब्द ऐते प्रसिता बभूव ।। 1/26

द्वितीय सर्ग में मनु के जन्म के समय की परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है। प्रकृति का अति सुन्दर स्वरूप इस सर्ग में हमारे समक्ष उपस्थित होता है।

कथावस्तु –

महारानी लक्ष्मीबाई का जन्म काशी (वाराणसी) में हुआ था –

प्राणरामवसुभूमितमैशं हायनं व्यलसदुत्तमकान्ति ।

मास आयत शशिक्षितिसङ्ख्य ऊनविशतितमं दिनमाप ।। 4/1

इस बात की पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई[1] 'बुन्देलखण्ड का इतिहास[2]' तथा 'भारतीय स्वतान्त्र्य-समर[3]' आदि ऐतिहासिक पुस्तकों से होती है। मनु के जन्म से काशी में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। आचार्य बलराम मिश्र शास्त्री ने 'दुर्गेण शौर्येण जगाम ख्यातिम' में रानी लक्ष्मी बाई का जन्म 1891 कार्तिक कृष्णा 14 बतलाया है।[4]

मनु के जन्म का उत्सव मनाया गया दीप जलाकर रखे गये—

एकोनत्रिंशतं दीपान कृत्वामायामुतामराः ।

अस्या नीराजनां नित्यं कुर्वते नव्यतायुताम् ।। 3/20

इनके पिता जी का नाम श्री मोरोपन्त तथा माता का नाम भागीरथी बाई था। जिनकी कोख से महारानी लक्ष्मीबाई जैसी वीरांगना ने जन्म लिया । इनकी माता का देहान्त हो गया जब यह चार वर्ष की थी।

इनकी माता का नाम भागीरथी बाई, झांसी की रानी[5] लक्ष्मीबाई, भारतीय स्वातन्त्र्य समर[6], आचार्य बलराम मिश्र शास्त्री के लेख 'दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम[7]' आदि में भी मिलता है। श्री मारोपन्त को

---

1. कार्तिक वदी 14 सं0 1891 (11 नबम्बर 1836) झांसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ 29

2. 19 नवम्बर 1835- बुन्देलखण्ड का इति0 पृ0 118 मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त'

3. 19 नवम्बर 1835- भारतीयस्वातन्त्र्यसमर पृ0 28 पं0 विनायक दामोदर सावरकर पारसनीसने भी अपने ग्रंथ में मनू की जन्मतिथि 19 नवम्बर 1835 लिखी है।

4. श्री लक्ष्मीबाई एकनवत्युत्तराष्टादश शततमे विक्रमाब्दे चतुर्दश्यां जन्म लेभे।

"दुर्गेवशौर्येण जगामख्यातिम् (आचार्यः बलराम मिश्रः शास्त्री)

5. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई - वृन्दावन लाल वर्मा - पृ0 29

6. मोरोपन्त ताम्बे अस्याः जनकः भागीरथी बाई चाऽस्याः जननी आस्ताम्।

'दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम! आ0 बलराम मिश्र शास्त्री

7. 'भारतीय स्वातान्त्र्य समर' पं0 विनायक दामोदर राव सावर कर

खण्ड प्रथम तीन अध्याय - पृ0 28

पेशवा बाजीराव ने ब्रह्मवर्त बुला लिया। माँ भागीरथी के देहान्त के बाद मनु का पालन-पोषण का संपूर्ण भार मोरोपन्त पर रहने लगा। मोरोपन्त ने स्नेह में किसी प्रकार की कोई कमी न रखते हुये मनु को बड़े दुलार प्यार के साथ पाला। रानी लक्ष्मीबाई के बचपन का नाम मनु रखा गया।

सा मनुरिति वभूवललास सद्म सद्म मनुमन्वितिपूर्णम् ।

अधिमुक्तिरलसत्प्रतिचित्तं व्याधिमुक्तिरलसत्प्रतिदेहम् ।। 4/36

मनु अत्यंत चंचल थी उनके नेत्र खंजनपक्षी की भाँति थे।[1] मनु काशी में पैदा हुई और ब्रह्मावर्त में नाना साहब और राव साहब के साथ बचपन खेल मे बीता।[2] बाजीराव के संतान न होने के कारण उन्होंने नाना घोंडूपन्त नामक बालक को गोद लिया। नाना तीन भाई थे नाना, वाला, राव ।[3] सुन्दर मनु के बचपन से ही चपल होने के कारण बचपन में बाजीराव इत्यादि स्नेहवश उसे "छवीली" नाम से पुकारते थे।[4] लेकिन मनुबाई को छबीली शब्द अच्छा नहीं लगता था। वाल्यकाल से ही वाजीराव द्वितीय की देखरेख मे रहने के कारण इनमें अंग्रेजोंके विरूद्ध घृणा कूट-कूट कर भरी हुयी थी। बचपन से ही मनु अत्यधिक वीरता पूर्ण बातें किया करती थी। कुछ बड़ी होने के पश्चात् शस्त्र-शास्त्र का अध्ययन काव्यों का अभ्यास तथा महापुरूषों के जीवन चरित्र से सम्बंधित कथाओं को सुनने इत्यादि में मनु की अधिक रूचि थी। जीजाबाई, तारा आदि वीरांगना के चरित्र को बड़े ही ध्यान से सुनना आदि मनु को बड़ा ही भाता था।

जीजाकृतिः सा चरितं च ताराप्रदर्शितं तन्महिलान्तराणाम्।

निपीय मा चिन्तितवत्यजरत्रं शिष्टं पतत्यद्य ममैव भागे।। 5/16 झां0 च0

शिवाजी की वीरता इन्हें बहुत रूचिकर लगती थी।[5] मनू नाना और राव साहब तीनों ने ही

---

1. *प्रातःकाले जनन्यत्र योसावायाति खंजनः।*
   शोभां तल्लोचने अङ्.क एतस्या नेत्रसन्निभाम्।। 3/8 झां0 च0
2. *प्रभाव काश्या अयि लालिते द्राक् क्रीडिष्यसि त्वं सह तत्र नाना।*
   दक्षा भाविष्यस्यधिगत्य रीतिं वाला च रावेण समं सभायाः ।। 5/2 झां0 च0
3. *झांसी की रानी लक्ष्मीबाई वृन्दावन लाल वर्मा पृ0 30 तथा भारतीय स्वातान्त्र्य समर में रांव साहब को नाना साहब का चचेरा भाई बताया गया।*
4. *आकारयत्ता क्षितिपः स वाजीरावश्छबीलीति सवत्सिमान्तः।*
   प्रेम्णोदरे कोपकषायिता साप्यकूर्दतामुष्य बलेन कन्या ।। 5/7
5. *शिवस्य वीरत्वम् अस्यै विशेषतो रुरुचे ।। (दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम)*

मलखम्भ, कुश्ती, तलवार बंदूक, पढ़ना लिखना इत्यादि सब साथ-साथ सीखा था। मनू कम आयु की होने पर भी इन सब कार्यों के साथ -2 अश्वारोहण में भी इन दोनों बालकों में कहीं अधिक आगे थी। मनु चपल हठीली एवं बहुत कुशाग्र बुद्धि की थी। स्त्रियों की संगति कम प्राप्त होने के कारण मनु में स्त्रीजनोंचित लाज ओर संकोच कम ही था।

मनु की शक्ति का अवलोकन करें -

शक्तिंदधाना स्फुरितां करेण तेजस्विनी शक्तिरिव व्यराजीत्।

आरूह्य वाहं शमनेपि लज्जां विद्योतयन्ती स्वमसिं व्यतानीत्। 5/22 झां. च.

अश्विनमास की समाप्ति थी राव, नाना और मनु तीनों ही अश्वारोहण करके आ रहे थे। तभी नाना का घोड़ा ठोकर खाकर गिर पड़ा। घोड़ा घर की ओर भाग गया। नाना के सिर से खून बहने लगा। वह मनु को चिल्लाया। मनू अति बहादुरी और धैर्य के साथ एक हाथ से घोड़े की लगाम थामें रही और दूसरे हाथ से नाना को घोड़े की पीठ पर बिठलाया तथा घर ले आयी। कुछ उपचार के पश्चात नाना को आराम मिला मनु उसे चिढ़ाती है तथा मोरोपन्त आकर नाना साहब को हाथी पर विठाकर घूमने के लिये कहते है। मनु भी नाना और राव के साथ जाने को हठ करती है। वाजीराव नाना और राव दोंनों से मनु को विठलाने के लिये कहते है। किन्तु वह दोनो मुंह फेर कर महावत को आगे चलने के लिये कहते है। मनू के बार बार हठ करने पर मोरोपन्त कहते है कि तुम्हारे भाग्य में हांथी नहीं ।[1] तब तनु चुनौती सी देते हुये कहती है मेरे भाग्य में एक नहीं दस हांथी है—

" निशम्य तातस्य वचांसि तानि किशोरिका सा सहसा जगाद् ।

भाग्यंमदीयं प्रबला गजा में श्रेष्ठंभविष्यन्ति दशेति तथ्यम्।। 5/171

तभी झांसी से शास्त्री तात्या दीक्षित का आगमन होता है। तात्या दीक्षित ज्योतिष शास्त्र के शास्त्री थे। भोजन आदि के उपरांत मोरोपन्त ने तात्या दीक्षित से मनु के लिये कोई योग्यवर का आग्रह किया। वाजीराव. पेशवा तथा मोरोपन्त ने मनू की वीरता, बुद्धि चातुर्य के विषय में बतलाया। वास्तव में मनु का व्यक्तित्व अनुपम था।[2] तात्या दीक्षित आदर और भेंट सहित झांसी लौट आये तथा वह राजा

1. *भाग्यं त्वदीयं गजराजहीनं धैर्यं त्वया वास्वलम्बनीयम्।*
   अलं निवेधेन विडम्बनेयं गजाह्वयस्यारटनं न युक्तम्।। 5/170 झां० च०
2. *मनूरूपेता श्रृणुतावधाय सुभाषिणी भाषणमद्य कुर्यात्।*
   महौजसा तां विदुर्षीं ज्वलन्तीं स्वटीकया पश्य समांजयन्तीम्।। 6/24 झां० च०

गंगाधर राव के पास पहुँचे राजा ने उनका आदर सत्कार किया तथा शास्त्री जी से आने का कारण पूछा। शास्त्री जी ने उनसे जन्मपत्री मांगते हुये उनसे विवाह के लिये कहा, ताकि झांसी को उनके पश्चात एक उत्तराधिकारी प्राप्त हो। झांसी की प्रजा भी इस बात को लेकर चिंतित रहती थी। राजा गंगाधर राव की पहली पत्नी का स्वर्गवास हो गया था तथा उनको कोई संतान नहीं थी। राजा गंगाधर राव सहमत हुये और झांसी से ही विवाह सम्पन्न हुआ। बुन्देलखण्ड के इतिहास में लिखा है कि 1838 में राजागंगाधर राव को झांसी का राजा घोषित किया तथा मनु से 1850 में विवाह हुआ था।[1] तथा भारतीय स्वातान्त्रय समर में 1842 में विवाह बताया गया है। मनू बाई झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के नाम से प्रसिद्ध हो गयी विवाह के समय उनकी भेंट उनकी तीन दासियों काशी, सुन्दर, मुन्दर से हुयी। जिनके प्रति रानी ने सखियों जैसा व्यवहार किया तथा झांसी की नारियों को भी अश्वारोहण मलखाम्भ, तलवार चलाना आदि के लिये उत्साहित किया! रानी विलक्षण बुद्धि की थी। कम आयु में भी विवाह के बाद वह गंभीर हो गयी। सन् 1852 में अगहन सुदी एकादशी 15 बर्ष की आयु में राजा गंगाधर राव को पुत्र प्राप्ति हुयी।[2] नगर सें उत्सव मनाया गया, प्रसन्नता की लहर दौड़ गई किन्तु यह प्रसन्नता अधिक समय तक न रह सकी। तीन माह पश्चात् ही रानी का पुत्र काल कवलित हो गया। राजा पर मानसिक एवं शरीरिक दोनों रूप में प्रभाव पड़ा, और वह अस्वस्थ रहने लगे। राजा ने उसी समय आनंद राव नामक पुत्र को गोद लिया उसका नाम दामोदर राव रखा गया। 'दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम' में भी इसका उल्लेख मिलता है।[3]

वैध प्रतापशाह मिश्र के अत्यधिक उपचार के पश्चात भी (21 नवम्बर 1853 ई0) को[4] राजा गंगाधर राव समस्त झांसी को रोता बिलखता छोड़ कर इस संसार से विदा हो गये। सम्पूर्ण झांसी में मानो तुषार मार गया हो। रानी के तन-मन पर इस दुर्घटना का अति प्रभाव पड़ा । 18 वर्ष की आयु

---

1. 1850 में रानी का हुआ। पृ0 118 बुन्देलखण्ड का इतिहास मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त'

2. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई पृ0 102 वृन्दावन लाल वर्मा

3. आनंदराव-दामोदर राव नामानं दत्तक पुत्रं नीत्वाउपराजः अनुमातिम
अवाप्तुं पत्र लिलिख। 'दुर्गेव शौयेर्ण जगामृख्यातिम' आचार्य वलराम मिश्र शास्त्री
10/13 झां. च. 19 नवम्वर को राजा ने दामोदर को गोदी लेनेका खरीता पोलिटिकल एजेन्ट कैथा को दिया। झांसी की रानी वृंदावन लाल वर्मा पृ0 125

4. बुन्देलखण्ड का इतिहास पृ0 118 मोतीलाल त्रिपाठी अशान्त
झांसी की रानी पृ0 125 वृन्दावन लाल वर्मा।

में यह आघात असहनीय था। प्रकृति का ऐसा कठोर आघात देखकर समस्त झासी का जन समुदाय करुणा में डूब कर विलख पड़ा । लेकिन वीर नारी रानी का आत्मविश्वास अटल रहा इस आघात से, संघर्ष से जूझने के लिये वह और अधिक सजग हो गयी।

राजा गंगाधरराव के देहावसान के पश्चात रानी का समय पूजा, पाठ भजन तथा तीरन्दाजी तलवार चलाना, बंदूक चलाना, दांतो से लगाम पकड़कर दोंनों हाथों से तलवार चलाने का अभ्यास करना एवं नगर की स्त्रियों को यह सब सिखाने में व्यतीत होने लगा। रानी के ऊपर उस समय बज्रपात सा हुआ जब रानी के दत्तक पुत्र को कंपनी सरकार द्वारा अस्वीकार कर दिया गया।[1] रानी फिर भी अपने उद्देश्य से विचलित नहीं हुयी। जब उन्हें यह समाचार सुनाया गया कि झांसी को ब्रिटिश राज्य में मिला लिया जाये तथा रानी को मासिक वृत्ति दी जाये। यह सुनकर रानी ऊँचे स्वर में बोली – "मैं अपनी झांसी नहीं दूँगी ।" भारत के इतिहास में वे शब्द अमर हो गये। झांसी के लिये वे मणि मुक्ता से जड़ित मुकुट के समान हो गये। लार्ड कैनिंग के झांसी मिला लेने के निर्णय पर रानी ने विरोध किया।

रानी ने अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय दिया तथा अदम्य साहस से धैर्य के साथ धूर्त अंग्रेजों के साथ कुटिलों में कुटिलता से कार्य लेना चाहिये ऐसा विचार कर कुटिल नीति का परिचय दिया।[2] रानी ने अंग्रेजों जैसे धूर्त और कुटिल बुद्धि, अपना अधिकार जमाने वाले दुष्टों तथा उनके दुःसाहस को दूर करने का दृढ़ निश्चय किया।

खलस्यभङ्.ग्ध्याशु खलत्वमुद्धुरं दुःसाहसं नाशय तस्य पूर्णतः ।

दुःखानि सञ्चूर्णय भारतस्य भोर्व्यावित्तयाकर्मण इद्धमुन्नतम् ।। 11/33

रानी ने गुप्त रूप से अपनी सेना का निर्माण आरम्भ किया तथा स्त्रियों को भी अस्त्रशस्त्र विद्या का भण्डार देती रही।

झांसी राज्य में बागियों डाकुओं का भी आतंक बढ़ रहा था। रानी ने यह समाचार पाकर शीघ्र ही उस ओर कोई कदम उठाना उचित समझा तथा खुदावख्श को आज्ञा दी कि वह सागर सिंह को मृत या

---

1. *27 फरवरी सन् 1854 को लार्डडलहौजी ने झांसी मिसिल पर हुकुम चढ़ाया। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई पृष्ट 147 वृंदावन लाल वर्मा।*

2. *कौटिल्यहीनस्त्वमहो अहीन चेद्वीरो भवेः किः कुटिलस्य बोधवन्।*

   सारल्यमुच्चं सरलेषु केवलं कौटिल्यमेकं कुटिलेषु साम्प्रतम् ।। ।।/24 झाँ० च०

जीवित लाये। खुदावख्श ने अपनी वीरता का परिचय दिया तथा सागर सिंह पर आक्रमण किया लेकिन सागर वहां से बच निकला तथा खुदावख्श घायल हो गया। रानी को यह समाचार मिला। रानी समाचार पाते ही वरूआसागर की ओर चल दी। रानी के साथ उनकी सहेली मुंदर काशी और मोती बाई भी साथ थीं। वेतवा नदी बेग से चली आ रही थी। वर्षा अपने प्रलयंकारी रूप में उनके समक्ष थी हवा आंधी के रूप में सभी को झकझोर रही थी। विजली अपनी कड़क से सभी को चकाचौंध कर रही थीं –

उत्पाटयन्ति हृदयं बहुवेगयुक्तं शम्पायुधानि बहलं स्फुरणं वितेनुः।

ध्वाना इव श्रुतिमुपेयुरमुं बधान जह्वानाशुतं गडगडायिततः प्रकामम् ।। 12/29

जल की भंवर भयभीत कर देने वाली थी, इन भंवरो से निकलना अत्यंत कठिन था[1], फिर भी रानी निडर बिना किसी भय के आगे बढ़ रही थी। उत्साह और वीरता उनके रोम–रोम से वरस पड़ रही थी। भयभीत कर देने वाले इस वातावरण में रानी निर्भीक होकर आगे बढ़ती रहीं तथा साथियों को वेतवा पार करने की आज्ञा दी। तेज गति से उठ रहे तूफान से इतना झाग उठता कि घुड़सवारों को सामने का किनारा तक दृष्टिगोचर नहीं होता,[2] फिर भी घोड़े अपने सवार का संकट समझ निरन्तर निस्तब्ध टाप के नीचे अथाह गहराई में आगे बढ़ते चले जा रहे थे। रानी अपनी सेना सहित वरूआसागर के किले पर पहुंच गई। खुदावख्श और अन्य सिपाहियों से मिली तथा खुदावख्श सहित सभी सिपाहियों का हाल पूछा। गांव के मुखिया पंच आदि से मिलने के पश्चात रानी को थानेदार से सागरसिंह के विषय में सूचना प्राप्त हुयी कि वह इस समय खिसनी के जंगल में आश्रय लिये हुये हैं। खिसनी का जंगल वरूआसागर से दस कोश पर था–

श्री मुन्दरा प्रचलिताश्वनुगम्यमाना मोर्ती विसृज्य पृतनापतिसान्त्वनायै।

क्रोशान् दशवहदहो हरिणोह्यमाना साह्याय चाप खिसनीमधिपा सुरम्याम्।। 12/56

खिसनी के जंगल में जाकर रानी ने डाकुओं को घेर लिया। डाकू अचानक हुये इस घेराव से

---

1. आवर्त्तघातसमुदायमदर्शयत्सा कल्लोलविक्रममथोच्चतमं ततान।

तीरप्रहारमदितां च तदुत्थरावनिर्भर्त्सनामविरलं प्रकटीचकार ।। 12/32 झा0च0

2. हिल्लोलसंहतिरमज्जयदाशिरस्कं कर्णाननादिकरणं जलहासमाप।

उत्पुप्लुवे जलचयस्तलतः प्रकामं झाइ.कृत्य निर्झरशतं क्षरति स्म बाढम्।। 12/42 झां0च0

घबड़ा गये और वहाँ से भागे। रानी के साथ काशी , मुंदर और मोतीबाई ने भी डाकुओं का पीछा किया।रानी ने मुंदर को अपने समीप से निकल रहे डाकू पर (जो कि सागर सिंह ही था) आक्रमण का इशारा किया। मुंदर ने डाकू सागर सिंह पर आक्रमण किया। सागर सिंह घोड़ा तेज करके भागा किन्तु रानी और मुंदर ने सागर सिंह का पीछा किया। सागर सिंह ने तलवार से वार किया। रानी ने बड़ी वीरता और सजगता के साथ उस वार का उत्तर दिया। जिससे तलवार के दो टुकड़े हुये और सागर सिंह घबड़ा गया। रानी की वीरता और उत्साह के साथ उनकी सहेलियों का उत्साह भी बढ़ा तथा रानी का संकेत पाकर मुंदर और रानी ने सागर सिंह को अपने वज्रपाश में जकड़ कर नीचे खींच लिया। लाख प्रयास के पश्चात भी सागर सिंह अपने आपको इस वज्रपाश से मुक्ति न दिला सका।

सागर सिंह को रानी और मुंदर की शक्ति की प्रतीति हो गयी। उसे वज्रपाश से निकाल कर रस्सियों से बाँध दिया गया।[1] सागर सिंह विवश था। रानी की वीरता ओर बुद्धि की कथा रामायण की भाँति फैल गयी। समय पर सागर सिंह को रानी के समक्ष प्रस्तुत किया गया। रानी ने कहा कि यदि वह उसे छोड़ दे तो वह क्या करेगा। डाकू सागर सिंह रानी का दास बनने के लिये तैयार हो गया। इस तरह रानी ने डाकू सागर सिंह तथा उसके साथियों को झांसी की सेना में भर्ती कर लिया गया तथा सागर सिंह एंव खुदावख्श को कुँवर की पदवी से विभूषित किया। रानी की इस वीरता से झाँसी के जन समुदाय में अंग्रेजों से लड़ने और जीतने का विश्वास तथा उत्साह वढ़ चला था। झाँसी देश में सुसंगठित और सुदृढ़ रूप से क्रान्ति को कार्यन्वित करने की तिथि 31मई 1851 निश्चित की गयी थी किन्तु इससे पहले क्रान्ति की ज्वाला प्रज्जवलित हो गयी।

तात्या टोपे ने अकस्मात् चरखारी के पेशवा को घेर लिया। सर ह्यू रोज को उसके प्रधान सेनापति कैनिंग का आदेश मिला कि वह चरखारी की सहायता करे जिसका उसने उल्लंघन किया। तात्या टोपे ने चरखारी को जीत लिया। इधर सर ह्यूरोज के नेतृत्व में झाँसी पर आक्रमण किया गया।

अप्रैल मास के तृतीय दिन भयंकर युद्ध हुआ। रानी के सभी सैनिक वीरता का परिचय देते हुये लगातार गोलों की वर्षा से शत्रुदल को हतोत्साहित कर रहे थे। शतघ्नी के गोलों से सम्पूर्ण वातावरण भयावह

---

1. पश्चाच्च माचलमलं पदहस्तयोर्द्राग् रज्ज्वा बबन्ध विवशीकृतसर्ववृत्ति।

आहूतवल्यनुचरानटवीनियुक्तानाध्मातकाहलमथाधममाशु निन्ये।। 12/70 झां0 च0

हो गया तथा अंग्रेजी सेना के छक्के छूटने लगे। झांसी के वीरों के साथ-साथ वीर रमणियों की भी वीरता कम न थी। समूचा राज्य मर मिटने को तैयार था। खुदाबख्श और गुलाम गौस खाँ ने ऐसी वीरता का परिचय दिया कि अनेकों अंग्रेज मारे गये सौ शत्रुओं को मारने वाली शतघ्नी से मीकिल जॉन के प्राण पखेरू उड़गये तथा रोज के दोनों लैफ्टिनेन्ट गिर पड़े।[1] कुछ दिनों तक भयंकर युद्ध का रानी तथा रानी की सेना ने सामना किया किन्तु अचानक रानी को विश्वास घात का विष पीना पड़ा। दक्षिण के दुर्ग के तालों को दूल्हाजू ने खोल दिया। अंग्रेजों के प्रवेश से पूर्व ही सुन्दर चण्डी की भांति दूल्हाजू पर टूट पड़ी तथा अपनी तलवार से उस पर कई वार किये किन्तु अंग्रेजी फौज अंदर प्रवेश कर गयी सुन्दर ने बड़े ही साहस से उनका सामना किया तथा वहीं वीरगति को प्राप्त हो गयी। रानी को इस बात का पता चला वह स्तब्ध रह गयी। इतना बड़ा विश्वास घात जिसकी कभी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी फिर भी उन्होंने साहस को नहीं छोड़ा। शहर में चारों ओर अंग्रेज फैलते जा रहे थे चारों ओर हाहाकार मचा था। अंग्रेज महल, नाटक शाला और विशाल पुस्तकालय को घेरने का प्रयास कर रहे थे। झांसी के सैनिक अपने प्राणों की चिन्ता न करते हुये अंग्रेजो से युद्ध कर रहे थे। रानी को लग रहा था कि अब झांसी का सर्वनाश होने को है। रानी झंझावात की तरह किले से बाहर निकलीं और चण्डी की भांति अंग्रेजों पर टूट पड़ी। अपनी तलवार के वार से रानी ने अनेक गोरों को मौत के घाट उतार दिया। फिलिप्स तलवार के मार से गिर पड़ा तथा एन्थोनी भयभीत हो स्थान त्याग कर भाग खड़ा हुआ।[2] अंग्रेजो ने भी अपने पूरे बलाबल के साथ युद्ध किया। रानी के भी अनेक सैनिक मारे गये। अल्प सैनिकों के साथ रानी किले के अन्दर जा पहुँची। अंग्रेजों ने शहर को अपने प्रबन्ध में ले लिया। वहाँ से रानी का निकल जाना ही उचित था। अतः रानी अपने मंत्री आदि से पराभर्श कर अपने कुछ सैनिकों के साथ झांसी से निकल गयीं। वह पुरूषवेश में अपनी सेविकाओं के साथ अपने पुत्र दामोदर को अपनी पीठ पर बांध कर झांसी से निकली[3], जहां वह अनेक अंग्रजों को मारती काटती जा रही थीं। यहां झासी में अंग्रेजो

---

1. *दौ लैफ्टिनैण्टौ पततः स्म शान्तये दोलायमानावधिरोहिणीगतौ।*
   ओकारमेवाभणतां पुनः पुनः कालश्च दंष्ट्राविषयत्व मानयत्। 14/45 झां0 च0
2. *त्वं फुल्लितो माद्य फिलिप्स माद्य रे खड्गः पतत्येष भवस्यतो न हा।*
   स्थानं त्यजैन्थोनी सपद्यहो निजं मा स्थाः प्रमादं कुरू नो भयावहम्।। 14/80 झां0 च0
3. *सा बबन्ध कृतकं तनयं स्वं पृष्ठभाग उदयम्ममकारा।*
   कौशिकेन वसनेन रमेण मञ्जिमानममितं दधार यत्।। 16/51 झां0 च0

ने घोर अत्याचार किये तथा अवर्णनीय कुकृत्यों से झांसी को भयावह बना दिया।

रानी के झांसी से निकलने का पता रोज को चला उसने वॉकर को रानी का पीछा करने के लिये भेजा। वॉकर के पास आते ही रानी उस पर झपटी और वॉकर को घोड़े से नीचे गिरा दिया।[1] रानी ने कई अंग्रेजों को अपनी तलवार से काट गिराया बचे सैनिक अपने प्राण बचाकर भाग गये। रास्ते में रानी का घोड़ा घायल हुआ क्योंकि उसे अधिक परिश्रम करना पड़ा था। अन्य घोड़ा ले वह कालपी पहुँची। कालपी का सेना प्रबंध अस्त व्यस्त था। अंग्रेजों ने कालपी पर आक्रमण का आदेश दिया। कोंच में बानपुर तथा पेशवा की सेना एकत्र हुयी रानी भी कालपी से कोंच पहुँच गयी। रोज ने यह सब ज्ञात होते ही कोंच पर आक्रमण किया। प्रबंध एवं अनुशासन उचित तथा सुदृढ़ न होने से इन्हें हार का मुंह देखना पड़ा।[2] 22 मई का यह प्रयास दुर्भाग्यवश असफलता की ओर ले गया। रानी की सेना, रानी तथा पेशवाई सेना कोंच से ग्वालियर की ओर भागे जहां उन्होंने गोपालपुरा में अपना शिविर डाला। सिंधिया सरकार को पेशवाई सेना के गोपालपुर में आ जाने का समाचार मिला तो उन्होने यह समाचार गवर्नर जनरल को शीध्र भेजा। राव साहब ने सिंधिया सरकार को स्वराज्य स्थापना में सहायता हेतु पत्र लिखा –

स पेशवास्त्वोपजगाम साधनैर्लिखामि शीध्रं मिलसिन्धिया मया।

अपेक्ष्यते सम्प्रति ते सहायता स्वतन्त्रताया इहि दुर्निवारताम् ।।[3] झां0 चं0 20/29

ग्वालियर का राजा अंग्रेजों से मिल गया था तथा रानी के विरूद्ध खड़ा हो गया था इस बात की पुष्टि झाँसी की रानी, दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम[4] आदि से भी होती है। पेशवाई सेना को सिन्धिया

---

1. धूयमान उद्गात बत् काली भ्रूविलास इव सच्छ्वे रसिः।

शिक्षितोपि सुतरां स बोकरघोटको निपतितः क्षितिपृष्ठे ।। झां0 च0 16/66

2. 24 मई को रोज को सफलता मिली 'पृ0 421' झांसी की रानी लक्ष्मीबाई वृन्दावन लाल वर्मा।'झांसीश्वरीचरितम् –

द्वाविंशो दिवसो जगाम स मई मासस्य तां वक्रतां

जातो व्यर्थतरो यया स सकलोप्येकः श्रमः सत्वरम्।

साफल्यं विफलत्वमाप सततं भाग्यस्य की दृग्गति –

भग्ना किं वत मानवस्य भवति क्षोण्यां सदा कल्पना।। 19/53

3. इस बात की पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के पृष्ठ 432 पर दिये गये इसी मन्तव्य से होती है।

4. "परं धिक तं सिन्धिया कुल कलंड़कं ग्वालियर नरेशं येन वैदेशिकानां पञ्च माऽडिंगत्वमऽंगीकृत्य आड़गलीयानां सहायता विहिता।।" दुर्गेव शौर्येण जगाम ख्यातिम – आ0 वलराम मि0 शा0

का उचित उत्तर न मिला तब रानी ने ग्वालियर पर आक्रमण की आज्ञा दी। नाना साहब, शाहगढ़ के राजा, बानपुर के राजा मर्दन सिंह ने उनका सहयोग किया रानी ने ग्वालियर के किले पर विजय प्राप्त कर अपने अधिकार में कर लिया। सिंधिया राजा पराजित तथ विवश हो भाग गया। नाना राव को पुनः पेशवा घोषित किया गया तथा सिंहसानारूढ़ किया गया –

वभूव रावस्त्वभिषेकमङ्गलप्रमुत्परः सौख्ययशये भटाबलिः।

सुखातिरेकः कुपथं प्रवर्त्तयत्यथालसीकृत्य विनाशयत्यपि ॥ 20/58 ऋाँ० च०

रानी इस उत्सव के विरूद्ध थीं लेकिन पेशवाई सेना इसमें डूबी हुयी थी। रानी जानती थी कि इन सब बातों के लिये यह समय अनुपयुक्त है। वह चाहती थी कि इस समय विजयोत्सव के स्थान पर अपनी शक्तिको सुगठित किया जाये। इस बात की चेतावनी भी उन्होंने सभी को दी लेकिन समस्त सेना विजय के मद में थी। वह सब नृत्यगान आदि में डूबे हुये थे। ऐश्वर्य प्रमत्त थे अतः रानी के विचारों पर किसी का भी ध्यान न गया। अन्ततोगत्वा वह दिन भी आ गया जब विजय पराजय के रूप में परिवर्तित होने के सम्पूर्ण लक्षण दृष्टि गोचर होने लगे। रोज ने अपनी सेना के कई भाग कर ग्वालियर को घेरना आरंभ कर दिया और सत्रह जून को युद्ध आरम्भ हो गया। जैसे ही अंग्रेजी सेना रानी की तोपों के आगे आयी रानी ने अपने गोलंदाजों को संकेत किया। भयंकर गोलाबारी हुयी जिससे अंग्रेजी सेना को पीछे हटना पड़ा। स्मिथ ने वुद्धि चातुर्य से कार्य लेते हुये अपनी सेना को पीछे हटाया तथा रानी की सेना को आगे बढ़ने का अवसर दिया। ऐसा होते ही उसने कई दिशाओं से आक्रमण किया। घमासान युद्ध हुआ। तलवारों के बार से सैनिक हताहत होने लगे। रानी ने अपने सैनिकों का उत्साह बढ़ाया। अंग्रेजी सैनिक अधिक उत्साह और वीरता से युद्ध कर रहे थे। रानी की सेना ने न्यून होने पर भी अपने धैर्य एवं पराक्रम से अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये।

18 जून 1858 का दिन रानी का रणकौशल देख अंग्रेज थर्रा रहे थे। जूही की तोपें अपना कौशल दिखा रही थी। सवार बढ़ते गिरते और मरते जा रहे थे। अंग्रेजी सेना बढ़ती गयी और पेशवाई सेना को घेरती गयी जूही मारी गयी। रानी की रक्षा हेतु सैनिक भयहीन होकर अटूट धैर्य और पराक्रम दिखाने लगे। रानी दक्षिण दिशा की ओर जाने लगी जहां उन्हें लगाम मुंह में दबाये दोंनों हांथो में तलवार लेकर गुरूण्ड सेना पर प्रहार करने लगी। रानी अंग्रेजो को मारती काटती आगे निकल जाने का प्रयास करती इससे पहले ही उन पर एक प्रहार हुआ वह घायल हो गयी फिर भी वीरताके साथ वह घायलावस्था में

भी अपनी सुरक्षा करते हुये युद्ध करती रहीं। राम चन्द्र देशमुख घायलावस्था में उन्हें बाबा गंगादास की कुटी में ले गये। जहां उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। इस तरह अपने रण कौशल, शौर्य एवं पराक्रम का परिचय देते हुये ग्वालियर के अन्तिम युद्ध में 18 जून 1858 को महारानी लक्ष्मीबाई ने स्वातान्त्रय युद्ध में जीवन की अन्तिम आहुति देकर स्वातान्त्रय के लिये बलिदान का अमर संदेश दिया।–

अष्टादशाह खलपुड़गव जूनमासे रोद्यामहे न च दशाह विलोक्यते नः ।

नास्या अभावि तव तुष्टय ईर्मकोषैर्देदीयते हृदयघातशतानि यन्नः।। झा. च. 20/123

वसुपुराणाख्य

हेशाब्देदं दिनं दधत् ।

उपदां विपदामेतां

ददन्नो धिङ्, न लज्जितः।। झां च0 20/124

दुर्गेव शौर्यण जगाम ख्यातिम मै लिखा है –

सा त्रयोविशंति (23) वत्सराणाम् आयुष विमुच्य दूरं

पार्थिवं वपुः यशः शरीरेण प्रस्तुता संसारे, पंचदशोत्तरैकोन-

विंशति शततमे विकमाब्दे (1915 वि0) कतिपयेडनुगामिनः

अविशिस्त्स्तृष गुल्मैः अस्याः शवमाच्छाद्य दाहयामासुः।

दुर्गेव शौर्येण जगाम् ख्यातिम्

आचार्यः बलराम मिश्रः शास्त्री।

"महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से कथावस्तु का पल्लवन" महाकाव्य का विशिष्ट लक्षण है– किसी काव्य के महत् होने में उसका आकार कारण नहीं हैं बल्कि उसका गुण हैं। महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से एक महाकाव्य में जो गुण होने चाहिये वे इस प्रकार वतलाये गये हैं–

महाकाव्य सर्ग वद्ध हो। उसका नायक कोई महत्वपूर्ण देवतां या धीरोदात्त नायक या कोई महापुरूष उच्च कुलीन राजा हो। श्रंगार, वीर और शान्त में से किसी एक रस की प्रधानता हो तथा अन्य रस गौण रूप में हमारे समक्ष आयें। इसमें नाटक की सभी सन्धियाँ उपस्थित हों। यद्यपि महाकाव्य में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरूषार्थो का निरूपण किया जाता है परन्तु बल फल के रूप में किसी एक को

स्वीकार किया गया हो। नमस्कार आशीर्वाद या वर्ण्यवस्तु के संकेत से महाकाव्य का आरम्भ हो। समस्त सर्ग की रचना एक ही प्रकार के छन्दों में हो तथा अन्त में छन्द परिवर्तन हो। कभी–2 कई छन्दों का एक ही सर्ग में समावेश किया जाता है। सर्ग आठ से अधिक होने चाहिये तथा न हीं अधिक लघु हों और न हीं अधिक विस्तृत। अनेक प्राकृतिक दृश्यों (सन्ध्या, प्रातः, रात्रि, चन्द्रमा, सूर्य, अन्धकार, दिवस, वन, ऋतु, समुद्र, पर्वत आदि) तथा मानसिक परिस्थितियों (मिलन, वियोग, यज्ञ, विवाह आदि) का सुन्दर समन्वय हो। मध्ये मध्ये श्रंगार का भी मिश्रण किया गया हो। वीर रस के प्रसंग में युद्ध, शत्रु पर चढ़ाई मन्त्रणा आदि का सांगोपांग वर्णन किया गया हो। काव्य का मुख्य उद्देश्य धर्म तथा न्याय की विजय तथा अधर्म और अन्याय का विनाश होना चाहिये। उसका शीर्षक, कवि का नाम, कविता का विषय उसका नायक या किसी आवश्यक तत्व पर आधारित हो। घटनाओं के अनुसार शीर्षक दिये जायें और सर्वप्रमुख उसका कथानक इतिहास प्रसिद्ध हो अथवा किसी सज्जन का चरित्र वर्णन किया गया हो। इस प्रकार इन गुणों से जो काव्य लक्षित हो वही महाकाव्य कहलाता है। आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट समस्त लक्षणों का समाहार हमें इस महाकाव्य में प्राप्त होता है।

महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से कथावस्तु का पल्लवन :-

महाकाव्य का विशिष्ट लक्षण है – किसी काव्य के महत् होने में उसका आकार कारण ही है बल्कि उसका गुण है।[1] किसी भी महाकाव्य में इन लक्षणों का अक्षरशः पालन करना शायद सम्भव नहीं तथापि महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से झांसीश्वरीचरितम् कथावस्तु के पल्लवन की परीक्षा इस प्रकार की जा सकती है –

महाकाव्य की कथा वस्तु कवि कल्पना प्रसूत न होकर किसी पौराणिक आख्यान अथवा ऐतिहासिक वृत्त के आधार पर होनी चाहिये।[2] ऐतिहासिक कथा महाकाव्य का प्रमुख अंग है। इस दृष्टि से झांसीश्वरी चरितम् की कथावस्तु सुप्रसिद्ध है तथा इसका कथानक इतिहास और कल्पना के मणिकांचन योग से निर्मित है। इतिहास वृत्त और कल्पना सूत्र की कड़ियां इतिहास पर आधारित है और इन कल्पनाओं तथा

---

1. दण्डी – काव्यादर्श – (परिच्छेद प्रथम 14 – 19 श्लोक)

विश्वनाथ कविराज – (साहित्यदर्पण – षष्ठपरिच्छेद 15–25)

2. इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्।। 3 सा0 दर्पण आ0 विश्वनाथ

अनुश्रुतियों का मेल इतिहास से मेल खाता हुआ चलता है। इसकी नायिका भारतीय ऐतिहासिक क्रान्ति की जन्मदात्री झांसी की रानी लक्ष्मीबाई है। रानी के जन्म से लेकर स्वतान्त्रय युद्ध में अपने प्राणों की आहुति देकर मृत्यु पर्यन्त की कथावस्तु का वर्णन अति रोचक तथा प्रभाव पूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। सम्पूर्ण कथानक लक्ष्मीबाई के जीवन सूत्र से बंधा हुया है महाकाव्य का नाम कवि के नाम पर अथवा कथावस्तु नायक या अन्य पात्र के नाम पर आधारित हो इस लक्षण का[1] अक्षरशः पालन करते हुये पन्त जी ने इस महाकाव्य की नायिका झांसी की रानी के नाम पर झांसीश्वरी चरितम् रखा। यह नायिका प्रधा-न महाकाव्य है इसकी नायिका कार्य कुशल कुलीन, लक्ष्मी, रूपयौवन, उत्साह, तेज, प्रेम एवं श्रद्धा, चातुर्य, सुशील आदि दुर्लभ मानवीय सद्गुणों से अभिमण्डित है।

कथावस्तु में युद्ध वर्णन तो कवि की अद्भुत प्रतिभा को प्रदर्शित करता है। सेना की शस्त्र सज्जा, अस्त्र–शस्त्रों के कुशल प्रयोग, वीरों की हुंकार आदि कौशल पूर्ण यौद्धिक वर्णन किये गये हैं। महाकाव्य की कथावस्तु में विविध विषयों का संगोपांग वर्णन करना आवश्यक तत्व माना गया है।[2] डा० सुबोध चन्द्र पन्त जी ने संध्या, सूर्य, वन, पर्वत, चन्द्रमा, रात्रि आदि का वर्णन अति मनोरमता के साथ किया है। द्वितीय सर्ग में आपने प्रकृति के ऐसे मनोरम चित्र हमारे नेत्रों के समक्ष प्रस्तुत किये है जिन्हें पढ़कर हमारा हृदय एक पक्षी की भांति इस प्रकृति में स्वच्छन्द उड़ने को चंचल हो उठता है। प्रकृति का वर्णन देखिये :–

उडुगण व्यलसंल्ललिताक्षरैरूपरि हीरकखण्डशतोपमाः ।

निपतितैश्च सुमैरमंरापगासलिलमध्यविकीर्णरमैः समाः ।। 2/2 झां०च०

इस प्रकार ऐसे अनेकों वर्णनों यथा विवाह, नगर, युद्ध वर्णन आदि से झांसीश्वरीचरितम् की कथावस्तु में अविच्छिन्न प्रवाह बना रहा है। इस प्रकार महाकाव्य के लिये आवश्यक प्राकृतिक वर्णन इसमें मुक्त रूप से पाये जाते है। लक्ष्मीबाई एक देवी शक्ति के रूप में हमारे समक्ष प्रकट होती है।

महाकाव्य का एक और मुख्य लक्षण है कि आगे के कथानक की सूचना सर्ग के अन्त[3] में मिलनी

---

1. कवेर्वृत्त्स्य वा नाम्ना नायकस्येतरस्य वा।

नामास्य सर्गोपादेय कथया सर्ग नाम तु ।। 10 सा0 दर्पणकार पं. विश्वनाथ

2. सन्ध्या सूर्येन्दुरजनीप्रदोषध्वान्तवासराः ।। 7 सा0 दर्पणकार पं. विश्वनाथ

3. सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्। 7 सा0 दर्पण आ0 विश्वनाथ

चाहिये। इस दृष्टि से भी इस महाकाव्य की कथावस्तु सुरक्षित रही है। इसकी कथावस्तु में प्रवाह रोचकता तथा घटनाओं में पारम्परिक सम्बन्ध बना हुआ है। हां आपने कथानक में कुछ कल्पनाओं का समन्वय अवश्य किया है किन्तु उनसे काव्य की ऐतिहासिकता पर कोई आंच नहीं आ पायी है। किसी भी महाकवि की मौलिकता किंवा प्रतिभा का मूल्याड़.कन इसी बात से होता हैं कि उसने प्राचीन कथावस्तु को अपनी प्रतिभा से किस प्रकार नये परिवेश में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है या उसके प्रस्तुतिकरण में कितनी नवीनता और चमत्कारिता विद्यमान हैं।

इस महाकाव्य का फल अँग्रेजों जैसे कूर , अत्याचारी शत्रुओं का वध करके अपने देश से निकाल स्वतन्त्रता का आवाहन करना हैं। कथावस्तु सर्गों में समान रूप से विभाजित होकर विकसित हुयी हैं।

महाकाव्य के अन्त में महत्कार्य का अवसान होता है जिसे समाप्ति कहा जाता है, वह फलागम है भारतीय महाकाव्य में यह परम्परा रही है कि नायक की पराजय या दुर्दशा के वर्णन में समाप्ति नहीं होती। भारतीय दृष्टि से यह पूर्ण सफल काव्य नहीं कहा जा सकता किन्तु भारत का पतन एक महान ऐतिहासिक घटना है उस ऐतिहासिक घटना को प्रकारान्तर से इस काव्य में स्थान मिला है।

इस प्रकार कथानक की ऐतिहासिकता आदि सर्व दृष्टि से कवि सर्वथा सुरक्षित है तथा संस्कृत आचार्यो ने महाकाव्य के जो लक्षण परिगणित किये हैं उनमें से अधिकांश झांसीश्वरीचरितम् में परिलक्षित होते हैं। अतः रचना विधान की दृष्टि से इस महाकाव्य की कथावस्तु सर्वगुणों से युक्त होती हुयी उपयुक्त है इतिहास के अतिरिक्त इसमें वे सब गुण विद्यमान है जो एक महाकाव्य के लिये अपेक्षित हैं। कवित्व के रहते हुये भी इसमें ऐतिहासिक तथ्य अक्षुण्ण बने हुये हैं।

इस प्रकार पन्त जी ने महाकाव्य में प्रतिपाद्य कथावस्तु को उपयुक्त विकसित रूप प्रदान करने का समीचीन प्रयत्न किया है। कथानक के विकास में कवि प्रतिभा एवं स्वाभाविकता सर्व प्रतीत होती है। आपने समुचित परिवर्तन से सम्यक रूप से कथावस्तु को अलंकृत किया है।

नायिका एवं अन्य पात्रों का चरित्राकंन-

काव्य महान बनता है कथावस्तु की महानता से और कथावस्तु की महानता निर्भर करती हैं चरित्रों की महानता पर झाँसीश्वरीचरितम् एक ऐतिहासिक महाकाव्य है और ऐतिहासिक पात्रों के चरित्र चित्रण में तो मानो कवि के हाथ बंध से जाते हैं तथापि पन्त जी ने अपने

महाकाव्य में कथावस्तु के साथ ही साथ चरित्र चित्रण कुशलता का सम्यक परिचय दिया हैं। पन्त जी ने इस महाकाव्य में काव्योचित पात्रों की अवतारणा की हैं।

1– नायिका–रानी लक्ष्मी बाई–

झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई झाँसीश्वरी चरितम् महाकाव्य की नायिका तथा कथानक में केन्द्रबिन्दु हैं। इनके चरित्र को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं–

1– पूर्व चरित्र – विवाह से पूर्व

2– उत्तर चरित्र – विवाह के पश्चात्

1– पूर्व चरित्र– महारानी लक्ष्मी बाई ने काशी के महाराष्ट्र कुल में विप्र मोरोपन्त के घर जन्म लिया इनकी माता का नाम भागीरथी बाई था।[1] बचपन में ही इनकी माता भागीरथी बाई का देहावसान हो गया अतः– इनका लालन पालन इनके पिता ने ही किया जो कि काशी छोड़ कर पेशवा वाजीराव द्वितीय के पास चले गये। रानी के बचपन का नाम मनू है।

सा मनूरिति वभूव ललास सद्म सद्म मनूमन्वितिपूर्णम्।

अधिमुक्तिरलसत्प्रतिचित्तं व्याधिमुक्तिरलसत्प्रति देहम्।।

इनका बचपन वाजीराव के गोद लिये पुत्र नाना साहब और राव साहब के साथ खेलकूद में बीता[2]–

---

1. रानी लक्ष्मीबाई के माता पिता का यही नाम झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बुन्देलखण्ड का इतिहास आदि अनेक ऐतिहासिक ग्रंथों के साथ ही कृष्ण दत्त शर्मा रचित राज्ञी शतकम् से भी प्राप्त होता है। –

पन्तान्त मोरो इति नाम धेयो, मही सुरो ब्रह्मकुलाभिमानी ।

वाक्यैरनेकैर्मृदुलै र्मनोज्ञैः सन्तोषयामास सुतां मनूख्याम् ।। 8

श्री पन्त पत्नि पति भक्तिरक्ता भागीरथीति श्रुतुनामधेया।

असूत कन्यामतुल प्रभावाम् तस्या पिता नाम मनू चकार।। 13

2. राज्ञी शतकम् में इस तरह का उल्लेख मिलता है –

श्री पेशवादत्तक पुत्रकाभ्यां सार्ध मन चापि वभूव पुष्टा।

शस्त्र शास्त्र संचालन युद्ध विद्यां जग्राह कन्या ह्यसिचालनं च ।। 14 कृष्ण दत्त शर्मा कृत 'राज्ञी शतकम्'

प्रयाव काश्या अयि लालिते द्राक् कीडिस्यसि त्वं सह तत्र नाना।

दक्षा भविष्यस्यधिगत्य रीतिं बाला च रावेण समं सभायाः।।

मनू का शक्ति के रूप में जन्म हुआ–

तान्येव लक्ष्मीरिति जन्म लेभे लक्ष्म्याश्च चण्डयाश्च विमिश्रितं या ।

युद्धं मुनिप्राणवसुड्डुपारव्य ईशाब्द ऐते प्रसिता वभूव ।।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के महाकाव्य की नायिका मनू बचपन से ही अधिक चंचल और सुन्दर हैं। वह रूपवान एवं गुणवान होने के साथ साथ वीर एवं साहसी है मनू का सौन्दर्य दिव्य सौन्दर्य से ओत प्रोत हैं। उसके नेत्र खंजन पक्षी की भाँति हैं–

प्रातः काले जनन्यत्र योसावायाति खञ्जनः ।

शोभां तल्लोचने अड्क्त एतस्या नेत्र सन्निभाम् ।।3/8 झां0 च0

मनू के अधिक चंचल होने के कारण वाजीराव उसे छबीली नाम से पुकारते थे–

आकायत्तां क्षितिपः स बाजीरावश्छबीलीति सर्वात्समान्तः ।

प्रेम्णोदरे कोपकषायिता साप्यकूर्दतामुस्य बलेन कन्या ।।[1] *5/7 झां0 च0*

कवि ने मनु की भौहों को धनुराकृति तथा होठों को पल्लव के समान और उसके हास को शम्पा विजली की भाँति बताया हैं–

हरिणावरुणावोस्ठौ बिम्बपल्लव सञ्चयौ ।

हासाभान्यत्र शम्पाया हिमस्योन्मेषणैः समाः ।। 3/32 झां0 च0

मनू सौन्दर्य में रम्भा को भी लज्जित करती हैं।[2] उसकी ग्रीवा मक्खन के समान कोमल , नासिका तोते की चोंच के समान है[3] तथा उसका तेज पार्वती के तेज के समान हैं–

---

1. *राज्ञी शतकम् में भी छवीली नाम का उल्लेख है –*

   याऽभून्मनू नामधरा सुकन्या, सा चैव लोके मणिकर्णिकाऽसीत।

   पञ्चादशौ चारुतया 'छबीली' विज्ञापिताऽभून्नितरां प्रशस्या ।। 18

   झांसी की रानी लक्ष्मीबाई – पृ0 29 पर छबीली नाम का उल्लेख है।

2. *झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 3 श्लोक 38*

3. *झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 3 श्लोक 35*

स्मरसि प्रेक्षितां रम्यां भवानीं तां भवालये ।

तादृगेव स्फूरद्रूपा राज्ञीयं भविता द्रुतमः ।। 3/2 झां० च०

वह सौन्दर्य में अनुपमा होने के साथ साथ कुलीन संस्कारों से युक्त हैं। मलखम्भ , कुश्ती, तलवार , बन्दूक चलाना , अश्वारोहण , धार्मिक ग्रंथो का अध्ययन करना, पढ़ना, लिखना आदि में मनू को विशेष अभिरूचि हैं। शस्त्र शास्त्रादि का अभ्यास उसे अधिक भाता हैं–

शौर्य क्रिया सड.ःगतिमाप्त बद्रद्रागौचित्य पूर्णत्वमितो विकासः ।

साम्यासमारेभ उदात्तचित्ता शस्त्रस्य शास्त्रस्य च कौशलेन ।। झां० च० 5/8

शौर्य एवं वीरता से पूर्ण महापुरूषों के चारितों को सुनना तथा बहुधा स्वप्न में उनकी वीरता को मनू देखती है।[1] वह प्रायः अपने पिता और वाजीराव से रामायण, महाभारत, गीता आदि को सुनती तथा घुड़सवारी, शस्त्र विद्या, शिकार की शिक्षा प्राप्त करतीं है। इस प्रकार आरम्भ से ही उनमें स्वस्थ धार्मिकता के साथ साथ शौर्य जैसे गुण भी पैदा हो गये। मनू निडर एवं साहसी है। वह शिकार के लिये घने जंगलों में विल्कुल निडर हो जाती है।[2] उस भयाकान्त वातावरण में भी वह कदापि भयभीत नहीं होती।

मनू का व्यक्तित्व निखरा हुआ उज्जवल एवं सौम्यता का प्रतीक है। उनमें अपार शौर्य तथा तेज स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है –

न तिष्ठ भल्लस्व रिपुं प्रकामं भटेति भल्लस्य वचः सुतीक्ष्णम्।

यशांसि शौर्यकर पालय त्वं सदेति वादी करपाल उग्रः ।। 6/1 झां चं०

मनू के व्यक्तित्व में आलौकिक दिव्य शक्ति का आभास प्रतीत होता है। उसके व्यक्तित्व में दुर्गा जैसा तेज है तथा वह साक्षात् दुर्गा के समान असुरों (अंग्रेजों) का बध करने के लिये अवतरित हुयी प्रतीत होती है। उनके व्यक्तित्व का वर्णन छठवें सर्ग में कवि ने अति सुन्दर शब्दों में किया है।[3] मनू

---

1. *झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 5 श्लोक 10, सर्ग 15 श्लोक 16*
2. *कदाचिदुदरामरूचिः सनानारावाटवीमैन्मृगयोत्सुका सा।*
   मार्गा अशेषा नगरे षभूवुः सदर्शकाली क्षणतोरणास्ते।। 5/33 झां० च०
3. *मुकुन्द आप्ते वृषभानु पुत्र्या समेषु कुञ्जेषु भवेत्प्रहर्षः।*
   नरेतथोरङ्गमकन्यया स्यान्महोत्सवः क्षोणितले तथाप्सु।। 6/22
   झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 6 श्लोक 24

का व्यक्तित्व आरम्भ से ही विवश या दयनीय नहीं रहा। धीरता भी उनके गुणों मे से एक गुण है।[1] यह तो था महारानी लक्ष्मी बाई का पूर्व चरित्र । अब हम उनके विवाह के पश्चात् के चरित्र का वर्णन करते है।

उत्तर चरित्र –

रानी लक्ष्मी बाई को अपने उत्तर चरित्र में ही अर्थात विवाहोपरांत ही प्रसिद्धि प्राप्त हुयी अतः आपके चरित्र का यह द्वितीयांश अति महत्वपूर्ण है। मनू का झांसी के राजा गंगाधरराव के साथ विवाह हुआ। विवाह के पश्चात् मनू के रूप के अनुसार ही उनका नाम लक्ष्मी रखा गया –

सम्पन्ने कौतुके तस्मिन् महाराष्ट्रविधानतः ।

स्वानुरूपं मनूनमि लक्ष्मीरित्याप नूतनम ।। 7/51 झां च0

मनू का नाम विवाहोपरांत लक्ष्मी रखा गया इसकी पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, राज्ञी शतकम्, स्वातांत्रय गाथा आदि से भी होती है।[2] कुछ समय पश्चात् राजा का देहावसान हो जाता है और महारानी लक्ष्मी बाई पर वज्राघात होता है। जब वियोग का समय आता है तब आत्मीयता अधिक सजग हो उठती है। रानी करूणा में डूब जाती है। इस समय हमें दिवंगत पति के प्रति रानी की भक्ति के दर्शन होते है–

एकान्ते स्वमिचित्रं प्रति निहित दृशा सा प्रमत्ता जगाद।

मर्त्तुं नेच्छामि कर्त्तुं बत बहलतरं मे बिलोके समक्षम् ।।

क्रान्तेर्व्याक्षिप्यते किं जनगणसुखदा योजना निर्मिता सा

लक्ष्मीरेषा कदापि प्रविचलति पदं बुद्बुदध्वंसतो नो ।। 10/66 झा0 च0

आदर्श पतीत्व उनके चरित्र की विशेषता है। इन समस्त गुणों के साथ ही उनके चरित्र की मुख्य विशेषता है उनका स्वाभिमान और उनका शौर्य और इनके परिचायक है उनका आत्मोत्सर्ग, निःस्वार्थ

---

1. झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 12 श्लोक 22

2. झांसी रानी लक्ष्मीबाई – वृन्दावनलाल वर्मा – पृ0 70

राज्ञी शतकम् – आसीद् यदा सा नितरामबोधा, ददर्श वै सप्त वसन्तमात्रम।

झाँसी महीपस्य वभूव जाया, लेभे सुलक्ष्मीरिति नाम धेयम्।। 26

स्वातांत्र्य गाथा – झांसीश्वरी किञ्च जनेश्वरी वा, लक्ष्मीः स्वरूपेण च नाम धेया।

अधापि सूर्यस्य प्रभवे लोके चरास्ति या शौर्य परम्परेव ।। 34

त्याग, उच्चलक्ष्य और लोकोपकार की भावना। उनका चरित्र आदर्श वीरांगना की कसौटी पर खरा उतरता है।

गोडसे ने लिखा है कि "रनिवास में ताला और पहरे में वे रहती थी और झांसी आकर उनकी तमाम गतिविधियों पर विराम लग गया था जो उन्होने विठूर में अर्जित की थी।" किन्तु राजा गंगाधर राव के देहावसान के बाद उन्होने पुनः अपनी उन समस्त कलाओं को अर्जित करना आरंभ कर दिया जिन पर उन्हें रोक लगानी पड़ी थी। क्योंकि अंग्रेजों के प्रति प्रतिशोध उनके हृदय में दहक रहा था। रानी अपनी शक्तियों का संचय कर झांसी की नारियों का उत्साह वर्धन करती है। तथा उनके वल और उनकी शक्ति का उन्हें आभास दिलाती है।

वदन्ति नारीमबलां यां न स तथेत्यस्ति दृढ़ंमतं मम्।

भवस्य शक्ति पुरुषार्धमुन्नतं कदापि मा गादबलत्व हीनताम्।। 9/18

महारानी लक्ष्मीबाई अपनी सेविकाओं को सेविका नहीं बल्कि अपनी सखी जैसा व्यवहार करती है। राज्ञी शतकम् से भी इस का उल्लेख मिलता है।[1] वैधव्य का पवित्र तेज उनके मुख मण्डल पर है उनमें सज्जनता नम्रता के साथ अपूर्व योग्यता है। राज्य शासन में वह जैसी योग्य है वैसी धर्म परायण भी है

प्रातः नित्य तीन बजे पुरूष वेश में या स्त्रीवेश में वह दरबार में आती है। उनके पैरों में पजामा, शरीर पर अंगरखा सिर पर साफा, दुपट्टा और कमर में तलवार लटकती है। इस वेश में उनकी सुन्दरता द्विगुणित हो जाती है। वैधव्य में वह गले में कण्ठा, हांथो में एक हीरे की अंगूठी ही पहनती है। केश खुले हुये। इस वीर वेश में वह साक्षात् दुर्गा या गौरी मालूम होती है वह हमेशा परदे के अन्दर रहती है। उनके दर्शन दुर्लभ थे।[2]

---

1. नास्त्यत्र काचिन्नृपतेः सुराज्ञी, न कोऽपि दासी न च सेविका वा।
सर्वाःसमानाः वयमत्र सख्यः, सखीस्वभावेन सदा वसेत ।। 30,कृष्णदत्त शर्मा कृत राज्ञी शतकम्
2. कहा जाता है कि जानलैंग नामक एक अंग्रेज ने उन्हें एकबार देखा था तब भारत के इतिहास में उससे महारानी की आकृति बयान हुयी –

" She was woman of middle size rather stout but not too stout. Her face must have been handsome when she was younger eld even now it has many charms though according to my Idea of beauty it was too round. the expression was also very good and very intelligent. The eyes were perticularly fine, and the nose very delicatly shaped. She was not very fair, though she was for from black. She wore no ornament strange to say upon her person, exept a pair of gold ear rings. Her dress was a plain white muslin so fine in texture and drawn about her in such a way and so tightly that the out line of her figure was plainly decernable and K. Rimark ably fine figure she had. what Spoilt her, was he voice which was something between a wine and a crock."

महारानी लक्ष्मीबाई ने प्रथम स्वाधीनता क्रान्ति का बीज प्रस्फुटित किया। अंग्रेजों से असंतुष्ट लोगों में विद्रोह की ज्वाला भड़काई तथा क्रांति की ज्वाला को सजग कर अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह करने की निश्चित योजना बनाने में वह अपनी वुद्धिमत्ता का परिचय देती हैं। रानी स्वयं सेना का निर्माण कर पूर्ण कुशलता से उसका संचालन करती है। जिससे एक कुशल संचालिका के रूप में उनका चरित्र हमारे समक्ष आता है। वह स्त्री सेना का निर्माण करती है। जो कि उनका आश्चर्यजनक कार्य है। वह सैनिकों में जोश उत्साह और चेतना का प्रसार करती है। इस समय उनका चरित्र हमारे समक्ष एक ऐसे नेता के रूप में आता है जिसमें नेतृत्वके समस्त गुण विद्यमान है। रानी का व्यक्तित्व निखरा हुआ उज्जवल एवं सौम्य है लेकिन उनमें शौर्य तथा तेज कूट–कूट कर भरा हुआ है। वह अधिकार और अधिकारी की बात लेकर किसी से भी नहीं डरती और समस्त जनता को उत्साहित करती है कि प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि वह स्वप्न के लिये लड़े। जब झांसी का ऐतिहासिक युद्ध आरंभ होता है। तब वह अपनी वीरता का परिचय देते हुये खुले रूप से अंग्रेजी सेना का सामना करती है तथा अपनी तलवार के वार से अंग्रेजों के छक्के छुड़ा देती हैं। दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध होता है।[1] युद्ध के समय वह अति धैर्य एवं वुद्धिमत्ता से काम लेती है। इन कठिन परिस्थियों में वह किंकर्तव्यविमूढ़ न हुयी। वह आपत्ति में कभी घबराती नहीं है, तथा कठिन परिस्थियों में भी धैर्य एवं अपनी कुशाग्र वुद्धि का परिचय देती है। वह अपने पुत्र दामोदर राव को अपनी पीठ पर बांध कर[2] दोनो हांथों में तलवार लेकर लगाम मुंह में दबाकर ग्वालियर युद्ध में अंग्रेजों से युद्ध करती है। तथा स्वतंत्रता का बीज प्रस्फुटित करती है। उनका पीछा करते हुये अंग्रेज बोकर को भी वह घायल कर बड़ी बुद्धिमानी से झांसी से निकल जाती है। वह सुनिश्चित योजनानुसार ग्वालियर पर आक्रमण कर विजय प्राप्त करती है। वह अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुन अंग्रेजों से प्रतिशोध का दृढ़ निश्चय करती है –

ज्वालारङ्ग क्रीड़ां समरज्वालावलौ करिष्यामि।

दास्त्वाड़कं घोरं त्यागाब्धौ मज्जयिष्यामि ।। 18/44 झां0 च0

कृत्रिममग्नेश्चूर्ण किं मेहं नैव तत्प्रयोक्ष्यामि।

अस्यार्चिस्तापेरीन् क्वाथत्वं साद्य नेष्यामि ।। 18/46 झां0 च0

---

1. झां0 च0 सर्ग 14 श्लोक 18

2. झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 6 श्लोक 51

अंग्रेज शत्रु उनका पीछा नहीं छोड़ते है सेनापति सरह्यू रोज ग्वालियर पर आक्रमण करता है जहां दोनो सेनाओं में भयंकर युद्ध होता है। यहां रानी की वीरता के पुनः दर्शन होते है। और देश हेतु अपने प्राणों को न्यौछावर करके वह समस्त जन समूह को उच्चादर्श, एवं स्वतंत्रता के लिये बलिदान का अमर संदेश दे जाती है –

सहसा नृपपत्न्यहिक्कत द्विरितो धूतरजश्चयाः पुनः ।

अश्रु पक्षिण आशुलीनतां गतवन्तोह विदीर्ण पुष्कराः ।। 21/53

रानी लक्ष्मी बाई के रोम रोम में स्व राज्य के लिये प्रेम, आत्माभिमान की गहरी सूझ और पूर्वजों का योग्य अभिमान हमें दिखलाई पड़ता है।

रानी लक्ष्मी बाई का उज्ज्वल चरित्र राष्ट्र प्रेम और राष्ट्र निर्माण की भावनाओं से ओत प्रोत है। उनके प्रेरक चरित्र एवं आत्म बलिदान ने देश में नये जागरण की लहर उत्पन्न की।

रानी की आसाधारण बुद्धि का मुंहतोड़ तर्क, मानवी मन के अत्यंत गूढ़ भावों के गुण दोषों का सूक्ष्म ज्ञान और असाधारण व्यक्ति में होने वाला साहस आदि सभी लोकोत्तर गुणों के सुंदर मिश्रण से बनता है महारानी लक्ष्मी बाई का व्यक्तित्व।

इस प्रकार इस विशाल कथानक में महारानी लक्ष्मी बाई लक्ष्मीबाई का चरित्र केन्द्र बिन्दु है। उनके चरित्र में सर्वप्रथम विशेषता उनकी वीरता एवं बलिदान है। वह अपने देश की स्वतंत्रता के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करती है। वह एक आदर्श वीरांगना है उनका वलिदान आदर्श है विवशता नहीं। शुभ कल्याण हेतु वह अपने प्राणों का उत्सर्ग करती है।

पन्त ज़ी रानी के चरित्र को हमारे समक्ष कुशलता पूर्वक चित्रित करने में सफल हुये है। वास्तव में उनका चरित्र अनुकरणीय रूप में हमारे समक्ष पन्त द्वारा प्रस्तुत किया गया।

अन्य पात्रों का चरित्र चित्रण –

महारानी लक्ष्मीबाई के अतिरिक्त डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने अन्य नारी पात्रों का चरित्र चित्रण प्रसंगानुसार पूर्ण सजगता के साथ किया है। महारानी लक्ष्मीबाई की सखी सुन्दर, मुन्दर, काशी, नृत्यांगना मोतीबाई, जूही आदि नारी पात्रों के नाम भी इस महाकाव्य में अंकित किये गये है। जिनके चरित्र का अति विस्तृत तो नहीं किन्तु समुचित वर्णन हमें अवश्य दृष्टि गोचर होता है –

अन्य नारी पात्र :–

सुन्दर :–

रानी के शुभ विवाह के समय जिन तीन सेविकाओं से रानी की भेंट होती है उनमें से एक है सुन्दर।[1] रानी के पास आकर जब अपना परिचय उनकी सेविका के रूप में देती है। तो रानी उन्हें अपनी सेविका न मानकर सखी कहती है। सुन्दर रानी के इस व्यवहार पर बहुत ही प्रसन्न होती है। सुन्दर की उम्र 16 वर्ष है तथा यह कुणभी जाति की है।[2] सुन्दर घोड़े पर चढ़ना तो कम लेकिन दौड़ना अच्छी तरह जानती है। रानी से वह घुड़सवारी, तलवार चलाना, मलखम्भ आदि बड़ी ही अभिरूचि के साथ सीखती है। उसके हृदय में देश भक्ति राज्य भक्ति एवं रानी के प्रति भक्ति का समावेश है।

वह रानी की परम भक्त है तथा रानी का हर क्षण साथ देती है। उसे रानी से अति अनुराग है। गंगाधर राव की मृत्यु पर रानी पर हुये वज्राधात से अति दुःखी हो जाती है तथा कुररी पक्षी की भांति रो पड़ती है।–

सुन्दरी सुन्दरीशाद्य जाता हा कुररीसमा।

मुन्दरीष्टे न पातारं भग्नपोता वराङ्गना।। 10/56

वह परम देशभक्त है अतः अंग्रेजों के अत्याचार को वह सहन नहीं करती तथा रानी का सहयोग कर झांसी की रक्षा करना अपना परम कर्तव्य समझती है। रानी के सानिध्य से उसमें भी वीरता एवं साहस और अंग्रेजों से प्रतिशोध का संचार हो जाता है। वह अपनी वीरता का परिचय अंग्रेजों से हुये युद्ध में देती है।

झांसी के युद्ध के समय दुर्ग के मुख्य द्वार पर रहकर वह अपनी प्रतिभा का परिचय देती है। जब दूल्हाजू विश्वास घात कर दुर्ग का द्वार खोल देता है तब वह चण्डी की तरह उस पर टूट पड़ती है।[3] वह अपनी तलवार के वार से अनेक अंग्रेजों को मौत के घाट उतारती है। इस समय वह अपनी वीरता, साहस, शौर्य एवं पराक्रम का परिचय देते हुये देश तथा अपनी रानी के लिये अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देती है।

---

1. झांसीश्वरीचरिचम् सर्ग 9 श्लोक 5

2. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई में लिखा है कि सुन्दर मुन्दर और काशी तीनों बहिनें थी जो कोदेलकर नामक मराठा से उत्पन्न थी। प्रस्तावना पृ0 3 पर

3. झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 14 श्लोक 54

इस प्रकार रानी की ही भांति सुन्दर का चरित्र भी मनोहर, सच्ची सेविका एवं सखी, देशभक्त, रानी के प्रति अनुरागी, एवं एक वीरांगना के रूप में हमारे नेत्र पटल के समक्ष प्रस्तुत होता है।

2.मुन्दर :–

मुन्दर का चरित्र भी रानी की सेविका के रूप में चित्रित किया गया है। सुन्दर की भांति मुन्दर भी एक सेविका के रूप में रानी के समक्ष उपस्थित होती है। यह भी अपने को कुणभी जाती की बतलाती है।

मुन्दर रानी से अनेक कलाओं जैसे तलवार चलाना, घुड़सवारी, मलखाम्भ इत्यादि का अभ्यास कर इसमें पारंगत हो जाती है। वह रानी से अति स्नेह करती है। तथा रानी एवं झांसी के लिये वह अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिये तत्पर रहती है।

डाकू सागर सिंह से हुये युद्ध के समय वह रानी के साथ जाती है, तथा उनका सहयोग करती हैं उसकी वीरता से डाकुओं को पराजयका सामना करना पड़ता है। डाकू सागर सिंह को पकड़ने में वह रानी का पूर्ण सहयोग करती है।

मध्ये निधाय सपदि स्वकरौ खलं

तं विध्युत्समं कृतवती विफलप्रयत्नम्।

मुन्दरस्तथान्यत उपेत्य बबन्ध गाढ़ं तं

वज्रपाशमनुकृत्य जनेशपत्न्याः ।। 12/67 झां0 च0

अपिच –

दस्युस्तु मुन्दरमुपैतुमलं वभूव व्यावृत्य तावदवधानसुरक्षितात्मा।

खड्गं न्यपातयत मुन्दरमुं परं तु स्वेनासिना कृतवती विफलप्रयासम्।। 12/64 झां0च0

झांसी युद्ध के समय वह एक वीर रमणी की भांति गुरूण्ड सेना का सामना करती है। वह रानी का अन्तिम समय तक साथ देती है। पीछा करतें हुये अंग्रेजों से वह रानी की रक्षा करती हुयी तलवार लेकर उन पर टूट पड़ती है। तथा उन्हें मृत्यु शय्या पर सुलाते हुये रानी के साथ झांसी से निकल जाती है।

ग्वालियर युद्ध में वह वीरता से लड़ते हुये रानी के प्राणों की रक्षा करते हुये सच्चे देश भक्त तथा राज्य भक्ति का परिचय देते हुये अपने प्राणों का वलिदान करती हैं–

प्रयामि हे देव्यपुनर्निवृत्तये नतिं गृहाणेत्यथ शुश्रुवे ध्वनिः ।

नृपा व्यलोकिष्ट यथा सखी गता विहाय मुन्दर्गुलिकाक्षताधिका ।।20।।02

इस प्रकार मुन्दर भी ऐतिहासिक समर में अपने प्राणों की चिन्ता न करते हुये अपनी झाँसी,अपनी रानी ,देश तथा स्वत्व के लिये अपने प्राणों की आहुति देती हैं।

4. काशी– काशी कुणभी जाति की 15 वर्षीय कन्या हैं। सुन्दर और मुन्दर के साथ रानी की तीन सेविकाओं में एक यह भी उपस्थित होती हैं। यह रानी की वीरता , पराकम , शौर्य , बुद्धि चातुर्य तथा उनकी मनोहर छवि पर अपना सर्वस्व त्यागने के लिये हमेशा आगे रहती हैं।

रानी से भेंट होने पर जब रानी इससे तलवार ,अश्वारोहण आदि सीखने का प्रस्ताव रखती हैं तब यह थोड़ा सकुचाती है किन्तु फिर स्वीकार कर इन सबका अति उत्साह एवं परिश्रम के साथ अभ्यास करने लगती हैं तथा हरक्षण रानी के साथ उनकी छाया की भाँति उनकी सेवा में अपना समय व्यतीत करती हैं।

काशी रानी के अवसाद और हर्ष में समान रूपेण साथ रहती हैं। राजा गंगाधर राव की मृत्यु पर शोकाकुल हो उठती हैं।

युद्ध के समय वह रानी का पूर्ण सहयोग कर अपने प्राणों का देश के लिये बलिदान करती हैं।

5. मोतीबाई :–

मोतीबाई का चरित्र सर्वप्रथम एक नृत्यांगना के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होता है। जो कि कला प्रेमी है। राजागंगाधर राव कला प्रेमी थें। नाटक आदि में उन्हें अधिक अभिरूचि थी और उनके नाटकों की नायिका मोतीबाई ही है।

मोती बाई नाट्य शाला की कुशल नृत्यांगना एवं अभिनेत्री है। कम आयु में ही मोती बाई ने नृत्य प्रदर्शन से सफलता प्राप्त की। वह अति सुन्दर एवं चंचल एवं मनमोहिनी है। झांसी के दर्शक उसके नृत्य की भूरि–भूरि प्रशंसा करते है। झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य में मोतीबाई का नामोल्लेख सर्वप्रथम राजा गंगाधर राव की मृत्यु के समय हुआ है –

श्रृणोमि हन्त मोती सा मुह्यत्यध मुहुर्मुहुः।

हा कलागुरू देवेति ब्रुवाणाश्रुपरा तथा ।। 10/34 झां0 च0

मोती बाई को राजा गंगाधर राव के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई का आश्रय प्राप्त हुआ। वह रानी की

वीरता तथा स्नेह से आकर्षित हो उनकी आज्ञाकारिणी बन जाती है तथा उनके आदेशानुसार उनका कार्य करती है। वह मोती जो कभी नृत्य कला से झांसी के जन समुदाय को आकर्षित करती थी शनैः शनैः तलवार चलाना, तोप चलाना, घुड़सवारी करना आदि में पारंगत हो रानी की स्त्री सेना में भर्ती होकर गुप्तचर विभाग का कार्य भार संभालती है।

वह युद्ध कौशल में पूर्ण पारंगत होकर डाकू सागर सिंह से हुये युद्ध में रानी के साथ जाती है।–

श्री मुन्दरा प्रचलिताश्वनुगम्यमाना मोर्ती विसृज्य पृतनापतिसान्त्वनार्यै।

क्रोशान दशावहदहो हरिणोह्यमाना साह्याय चाप खिसिनीमधिपा सुरम्याम्।। 12/56 झां0 च0

इत्थं वचः सुवदना सुदृढ़ं वदन्ती सारूह्य वाहमगमद बहिरिन्दराभा ।

नृत्यं प्रदर्शयितुमाशु सखीजनानां खड्गोवभूव चपलो विवरान्निरेतुम्।। 12/24 झां0च0

झांसी पर जब आक्रमण होता है तब मोतीबाई पूर्ण वीरता तथा धैर्य एवं साहस का परिचय देते हुये अपनी तोपों के वार से अंग्रेजों का अभिमान चूर करती है, तथा एक नृत्यांगना होकर भी युद्ध में अपना पूर्ण जौहर दिखलाती है तथा प्राणोत्सर्ग करके वुन्देलखण्ड के इतिहास में अपना नाम अमर कर जाती है।

6. जूही :-

जूही का भी इस महाकाव्य में सर्वप्रथम नाटकशाला की एक मनमोहक एवं सुन्दर नृत्यांगना के रूप में चित्रांकन किया गया है। अल्पवयस्क जूही अभिनय की अपेक्षा नृत्य एवं गायन में अधिक पारंगत है। जूही का सर्वप्रथम नामोल्लेख दशम सर्ग में किया गया है।

जूह्याश्चरणयोराप्तं कम्प नृत्यमनन्तताम्।

चातुर्भिर्या शतेनापिनानृत्यत् सुभगा क्वचित् ।। 10/37 झां0 च0

जूही ग्वालियर युद्ध में रानी का सहयोग करती है। जूही रानी के गुप्तचर विभाग में प्रविष्ट हो अंगेजी सैनिकों के शिविरों में जाकर वहां से अंग्रेजों की योजनाओं आदि की जानकारियों को प्राप्त कर रानी को सब समाचार देती है। ग्वालियर युद्ध में उसके सहयोग का विवरण इन श्लोकों से प्राप्त होता है –

जगाम जूही सममेव सज्जितुं मिमेल मुन्दश्च तया ज्वलन्मुखा।

प्रभुदभरं या ददृशुमृतेरपि रणस्य ता एव मधुत्वमाप्नुवन ।। 20/51

अपिच –

नृपालिका जूह्यथ मुन्दरद्रवन समाह्वयन्तैक भटान् सहस्त्रम् ।

विकासमापत्करपालवारिणि स्मितालयो वक्त्रकुशेशत्रयी।। 20/58 झां0 च0

इस प्रकार जूही बिना किसी भय के मुस्करातें हुये पूर्ण सेवा भाव से अपने कर्तव्य को करती हुयी, देशवासियों को स्वत्व एवं अमरत्व का संदेश देती है।

7. झलकारी बाई –

इन स्त्रीपात्रों के अतिरिक्त झलकारी का नामेल्लेख दसवें सर्ग के तैतालिसवें श्लोक में किया गया है। सम्पूर्ण महाकाव्य में झलकारी बाई का विस्तृत चित्रण दृष्टि गोचर नहीं होता। किन्तु उसके जीवन चरित्र को सूक्ष्म रूप में ही अति कुशलता से उभारा हैं। सर्वप्रथम जिस श्लोक में झलकारी का नामोल्लेख है वह दृष्टव्य है –

स्नुषेयमिति यत्त्वं तामूचे तत्र दिने प्रभो।

तत्स्मृत्वा झलकारीयं शिरस्ताडेन रोदिति।। 10/43झां0 च0

जब रानी लक्ष्मीबाई झांसी छोड़कर जाती है। तब झलकारी रानी लक्ष्मीबाई जैसा रूप धारण कर अंग्रेजों के पास जाती है ताकि अंग्रेज उसे रानी समझ कर रानी लक्ष्मीबाई का पीछा न कर सकें –

अक्षिणीबहिरुपागते अहो फेणकं बहु मुखान्निरगच्छत ।

खेद् भूतविकृतानन भङ्गया कोपयन्निव रिपूनति मात्रम् ।। 16/75

उसका उद्देश्य अंग्रेजों को भ्रम में डालकर उन्हें उलझाये रखना था ताकि रानी लक्ष्मी बाई बिना किसी व्यवधान के कालपी सकुशल पहुँच जायें। अंग्रेजों पर भेद खुलजाने पर वह रानी की रक्षा हेतु अपने प्राणों का त्याग करती हैं।

पुरूष पात्र–

8 .खुदावख्श– खुदावख्श राजा गंगाधर राव का मित्र हैं। वह रानी की पैदल सेना का कर्नल है तथा एक अच्छा तोपची हैं। सर्वप्रथम उसका नामोल्लेख दसवें सर्ग में किया गया है–

शक्नोति भविंतु हन्त खुदावख्शो न जीवितः ।

त्वय्येवास्त्यनुरक्तोलं निगृहीतोपि स ह्यहो ।। 10/36

खुदावख्श रानी की सेना का वीर सैनिक तथा रानी का परम भक्त है वह रानी के प्रति अटूट भक्ति

भाव रखता हैं। रानी को अपने इस वीर जवान पर पूर्ण विश्वास हैं। वह सागर सिंह से युद्ध के लिये सर्वप्रथम ख़ुदावख्श को ही भेजती हैं। खुदावख्श एक शूर वीर की भाँति डाकू सागर सिंह पर आक्रमण हेतु निकल पड़ता हैं–

ऊचे वचांस्यवनिपालकलत्रमेवं वख्शोपि हन्त जिततां गतवान ख़ुदादिः।

श्री निर्धनोभवदहो अधुनातिवीरः श्रीतोतिधीर उद्गाच्युततां बलेशः।। 12/2

अपिच –

शूरः स केवलमसि स्वकरे निधाय शस्त्रास्त्रसंहतिमुदीर्णशिखां रुणद्धि।

दानावगाढ़करटातिभयंकरेण संघट्टते करटिनापि मृगेन्द्रवद्यः ।। झां0 च0

खुदाबख्श उत्साहित हो रानी की सेवा करके मर मिटने को तैयार है वह तोप चलाने में अति निपुण है। रानी को उसके कौशल पर पूर्ण विश्वास है तथा ऐसे सिपाहियों के होते हुये उन्हें विजय प्राप्ति में कदापि सन्देह नहीं है –

तूर्ष्णीं शतघ्नीं कुरुवारयात्मनः श्रान्तिं खुदाबख्श जितं त्वया त्वितः।

सन्देहमन्दो विजयः कदापि नो गोलोस्त्यमोघो हि गुलाम गौस ते।। 14/32 झा0 च0

युद्ध में खुदाबख्श शतघ्नी तोप को संभाल अनेक अंग्रेजी सैनिकों के प्राणों के लिये घातक सिद्ध होता है। उसका चरित्र एक सफल तोपची, अपने देश एवं रानी के प्रति पूर्ण निष्ठावान शूरवीर के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होता है।

झांसी युद्ध के समय वह पूर्ण निष्ठा के साथ अपनी अन्तिम श्वांस तक झांसी तथा झांसीश्वरी की रक्षा करता है तथा अपनी राज भक्ति का परिचय देते हुये प्राणोत्सर्ग कर देता है। रानी अपनी मृत्यु के समय घायलावस्था में खुदाबख्श जैसे वीर का स्मरण इन शब्दों में करती है–

आगच्छ चात्रोपविश व्रणत्किं पीडा

खुदावख्श गता न किञ्चित्।। 21/46 झां0 च0

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने खुदाबख्श के चरित्र को उज्ज्वल रूप में हमारे नेत्र युग्म के समक्ष प्रस्तुत किया है।

9. गुलाम गौस खां –

गुलाम गौस खां झांसी के तोपखाने का प्रधान है। यह एक पठान है। इनका नाम भी दसवें

सर्ग में ही सर्वप्रथम प्राप्त होता है –

उदासितास्ति गौसोदन्नखालिखि केसरी ।

हन्त लक्ष्मणरावोयमाशालक्ष्म दधाति नो ।। 10/50 झां0 च0

वह एक कुशल तोपची है जिसके रहते रानी को विजय में कदापि संदेह नहीं –

संदेहमन्दो कदापि नो गोलो स्त्यमोघो हि गुलाम गौस ते ।। 14/32

युद्ध के समय गुलाम गौस़ खां पूर्ण मनोयोग के साथ अपने कार्य में जुट जाता है। वह तोप को संभालता है तथा अपनी तोप के गोलों के अंगारों से अंग्रेजी सेना को निरन्तर हतोत्साहित करता रहता है। वह अपने बुद्धि चातुर्य से शत्रु दल को हताहत करता है। वह रानी के आदेशानुसार घनगर्जन करती तोपों से लक्ष्य साधकर ऐसे गोलों की वर्षा करता है कि अंगेजों के छक्के छूट जाते है। तोप की मार से अनेक अंग्रेज घायल हो जाते है। वह अंग्रेजी लेफ्टिनेण्ट को बुरी तरह पराजित करता है–

दौ लेफ्टिनेण्टौ पततः स्म दोलायमानवधिरोहिणीगतौ।

ओकारमेवा भणतां पुनः पुनः कालश्च दंष्ट्राविषयत्वमानयत्।। झां0च0 ।५।५५

रानी घायलावस्था में इस वीर सिपाही का स्मरण करती है–

मा शाम्य है गौस पलैः शतघ्नी वान्ताग्निना नश्यतु शत्रुतूलम्।। 21/46 झां0च0

इससे-रानी के लिये गुलाम गौस खां महत्वपूर्ण था इसका स्पष्टीकरण होता है। वह रानी के प्रति भक्तिभाव, श्रृद्धा भाव रखते हुये एक निष्ठावान सैनिक के रूप में स्वातान्त्रय समर में रानी का साथ देता है तथा अंग्रेजों के लिये अत्यधिक घातक सिद्ध होता है। अन्ततोगत्वा लड़ते लड़ते वह स्वतंत्रता की ज्वाला लोगों के ह्रदय में भड़काकर प्राणोत्सर्ग कर शहीद हो जाता है।

10. तात्या टोपे –

तात्या एक महाराष्ट्र ब्राह्मण था। इसका जन्म अहमद नगर में हुआ था। तात्या विठूर में बाला गुरू के अखाड़े का प्रधान था। यही तात्या आगे चलकर तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसका गठा हुआ विशाल शरीर, उन्नत मस्तक, गौरवर्ण, तेजस्वी मुखमण्डल उसकी वीरता का परिचायक है। तात्या टोपे साहसी बलिष्ठ एवं वीर है। यह नाना साहब के प्रधान मंत्रियों में से था। यह रानी के पास आया जाता करता है तथा समस्त प्रान्तों के समाचार उन्हें देता है इससे इसकी राजनैतिक पटुता हमें देखने को मिलती है। वह कुशाग्र बुद्धि तथा अपने राजा रावसाहब का परम भक्त है। जब विठूर मिटगया

तब तात्या ने अंग्रेजों पर कालपी के आस पास से अनेकों आक्रमण किये तथा उन्हें भयभीत करता रहा। अपने स्वामी के कार्य में उसने अत्यन्त विश्वस्तता का परिचय दिया।

कालपी के युद्ध के समय वह रानी की सहायता करता है। तथा झांसी के समय वह रानी की सहायता के लिये आता है तथा अत्यन्त निर्भीकता के साथ शत्रु दल के समीप पहुंचता है–

तात्या भटा ये प्रबला नितान्तं विधाय लीलाभुवमाजिभूमिम्।

उपागमत् शत्रुदलस्य तस्य हृत्वा स्वमन्यत्र चिरन्तनं तत् ।। 13/56 झां0 च0

कालपी युद्ध के समय भी भालों और तलवारों से भयंकर युद्ध होता है–

कोलाहलं स्याद् घननाद घोरं शत्रुव्रजेसुव्यसनं भवेद द्राक्।

पश्याथ तात्या सुसमीप एवं पश्याथ कुन्तान् स्फुरतंश्च खड्गान्।। 13/28

रानी को तात्या जैसे वीर पर अधिक विश्वास है वह कहती है कि जब तात्या विजय को प्राप्त करेगा तो शत्रु प्रलय को प्राप्त हो जायेगा –

अल्पीयसापि प्रबलो बलेन प्राप्नोति तात्या विजयंयदायम्।

सर्वाधिकेनापि तदा कथं नो नयेत शत्रुं प्रलयं क्षणेन।। 13/43 झां0 च0

तात्या टोपे शहर शहर जाकर वहां की राजनैतिक गतिविधियों पर नजर रखता तथा सारी जानकारियां प्राप्त कर रानी तक पहुंचाता है।

तात्या टोपे ग्वालियर की प्रसिद्ध सेना का सेनापति बनता है। वह तीन हजार सिपाही 20 तोपों से कालपी की रक्षा करता है।युद्ध करने से पूर्व वह रास्तों के नक्शे तैयार करता है तथा ऐसी व्यूह रचना तैयार करता है जिससे अंग्रेजों की रसद आदि व्यवस्थायें नष्ट हो जाती है।

युद्ध के समय तात्या टोपे की तोप अंगेजों के रक्त से अपनी पिपासा शान्त करने के लिये उन पर काल की तरह पड़ने लगती है –

हा हन्त तात्या प्रबलाः शतघ्न्यः कालं रिपौ रक्तमपातयन् याः।

व्यावर्त्तमाना निजमेव सैन्यं ता आपदो हावकिरन्त्यभीक्ष्णम्।। 13/68 झां0च0

तात्या जैसा वीर कभी हार नहीं मानता है। उसका चरित्र उच्चादर्शो से युक्त शूरवीर के रूप में प्रस्तुत होता है। वह एक कुशल संचालक के रूप में सेना का नेतृत्व करता है।

ग्वालियर युद्ध के समय तात्या का पराक्रम देखते ही बनता है किन्तु वह इसी समय युद्ध में रानी

से अलग हो जाता है तथा पकड़े जाने पर अंग्रेजों द्वारा फांसी पर चढ़ा दिया जाता है

रानी इस वीर का भी स्मरण इन शब्दों में करती है –

तात्या अहो हा किमिदं करोषि मत्तोपि बन्धो विमुखोसि हन्त।

क्रन्‌दस्यहो तव किमिदं द्रढ़ीयन्नेचुम न त्वय्युपद्यते हा ।। 21/ 6 झां० च०

इस तरह इस वीर मरहटा ने स्वातान्त्रय समर में प्रमुख रूप से सहयोग कर अपनी अलौकिक वीरता एवं रण कौशल से इतिहास के अमर पुरूषों में अपना नाम अंकित करा जाता है। तात्या का मरण उसके जीवन से भी ज्वलन्त होता है।

11. दूल्हाजू –

दूल्हाजू का चरित्र एक देश द्रोही के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत होता है। वह झांसी की सेना का ही एक सैनिक है जो वीर तो है किन्तु उसके ह्रदय में छिपे उसके विश्वासघाती रहस्य को कोई नहीं जानता। झांसी युद्ध के समय उसको दक्षिण दिशा का पर कार्य भार सौपां जाता है[1] सुन्दर उसके साथ उसी स्थान पर कार्य कर रही है। दूल्हाजू अंग्रेज सेना से मिलजाता है तथा दुर्ग का मुख्य द्वार खोल देता है–

पार्पी पतित्वारिविलोभदुर्गतौ भक्त्वा तडत्कायुतं स तालकम्।

स्वाधीनताडिम्भममायन्नों ग्रीवां निपीडयामितनिघृणेश्वरः ।। 14/52 झां०च०

दूल्हाजू के विश्वासघात का दुष्परिणाम झांसी का सर्वनाश होता है। अंग्रेजी सेना किले के अन्दर प्रवेश कर जाती है तथा भयंकर मारकाट कर झांसी के सैनिकों को मौत के घाट उतारती है

इस प्रकार दूल्हाजू का चरित्र एक ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत होता है जो विश्वासघाती है तथा जिसे अपने राष्ट्र देश तथा राज्य एवं मातृभूमि के प्रति कोई श्रृद्धाभाव नहीं अतः उसका चरित्र विश्वासघाती के रूप में चित्रित किया गया है।

12. डाकू सागर सिंह –

सागर सिंह का चरित्र एक डाकू के रूप में प्रस्तुत होता है। बरूआसागर तथा उसके आस

---

1. स्थानाद्‌दूरे सरदार सञ्ज्ञकात् सामन्तपाशो नृपया नियोजितः ।

दुर्ग प्रतीहारमवन् स दक्षिणं स्वानेव हा नाशयितुं समुद्ययौ ।। 14/51 झां० च०

-पास डाकू सागर सिंह का आतंक व्याप्त है। सागर के पतन हेतु रानी लक्ष्मी बाई वर्षा के समय वेतवा की धार पुंज को चीरती हुयी उस पर आक्रमण कर युद्ध में उसे पराजित करती है। रानी की वीरता तथा रण कौशल को देख सागर सिंह आश्चर्यचकित होता है तथा उनका परम सेवक बन कर जीवन पर्यन्त उनका साथ देने की प्रतिज्ञा करता है। रानी उसे कुंवर की उपाधि से विभूषित करती हैं तथा वह पूर्व निष्ठा से झांसी तथा अपनी साम्राज्ञी की रक्षा हेतु युद्ध में अपने प्राणों का बलिदान देकर अनन्त गौरव को प्राप्त होता है।

13. रामचन्द्र देश मुख –

रामचन्द्र देशमुख प्रधानमंत्री है जो कि गंगाधर राव के समय से लेकर रानी के जीवन पर्यन्त उनका सहयोग करता है। इनका नामोल्लेख दसवें सर्ग मे किया गया है–

शोथोदेशमुखस्यास्ये रोदनेन दृशोः परः।

मुखाब्जे रामचन्द्रस्ययासीद् भास्तं जगाम सा।।10।48झा0 च0

रामचन्द्र देशमुख ग्वालियर युद्ध के समय रानी के साथ रहता है तथा अंग्रेजो से हुयी मुठभेंड़ में जब रानी घायल होती है तब उन्हें रामचन्द्रदेशमुख ही बाबा गड्.गादास की कुटी तक ले जाता है

दासेन रामेण निरीक्ष्यमाणा राज्ञी विंसज्ञा पतिता शयान्तः।

चित्रैश्चलद्भिः स्फुरितान्तरात्मा स्वप्नायमाना निजगाद सेत्थम्।।21।।झा0च0

यह वीर पुरूष इस समर मे रानी का सहयोग कर अपनी वीरता और निष्ठा का परिचय देता है।

14. नानासाहब–

महाराष्ट्र के अन्तिम पेशवा वाजीराव के उत्तराधिकारी नाना साहब धोंडूपन्त है।वाजीराव के कोई सन्तान नहीं होती है और वह नानासाहब को गोद लेते है। नानासाहब तीन भाई है–नानासाहब, रावसाहब,बालासाहब।[1] बालासाहब का झाँसीश्वरी चरितम् में विस्तृत उल्लेख नहीं मिलता है।नाना साहब का बचपन रानी के बचपन के साथ व्यतीत हुआ। वह साथ साथ खेले हैं–

प्रयाव काश्या अयि लालिते द्राक् कीडिस्यसिं त्वं सह तत्र नाना।

दक्षा भविष्यस्यधिगत्य रीतिंबालां च रावेण समं सभायाः।। 5/2 झां0च0

---

1. गदर का इतिहास में नाना साहब के भाईयों का नाम बालाराव तथा बाबाभट्ट मिलता है तथा राव साहब भतीजे बताये गये है।

यौवन की कार्यपटुता और आलस्य हीनता उनमें पूर्व रूपेण विद्यमान है। वे दूरदर्शी एवं अनुभवी है पर वह प्रत्येक कार्य के लिये दूसरों पर अवलम्बित है। अजीमुल्ला खां उनका मंत्री है तथा तात्या टोपे इसका प्रमुख सलाहकार।

क्रान्ति की योजनायें रानी के साथ मिलकर नाना साहब ने भी तैयार की। 1857 की क्रांति के बीज के उद्‌भव में यह रानी का पूर्ण सहयोग करते हैं। मृत्यु के समय रानी का नाना साहब के स्मरण से ज्ञात होता है कि नाना साहब रानी को अपनी बहिन मानते है–

किं बूह्यये कानपुरं प्रयामि नानाजिनः सम्प्रति गेहमिद्‌धम्।

सन्देश मेतं नयं तात रक्षासूत्रं बधान प्रहितं भगिन्या।। 21/14 झां0 च0

इस प्रकार क्रांति के इस महासमर में नाना साहब ने भी सहयोग कर अपना पूर्ण योगदान दिया। अन्त में नाना साहब का कुछ पता न चला।

15. राव साहब –

राव साहब नाना साहब के भाई है तथा क्रांति समर में एक सहायक के रूप में हमारे समक्ष अन्य पात्रों की भांति ही उपस्थित होते है। ग्वालियर पर आक्रमण के समय वह रानी का साथ देते है। तथा विजय प्राप्त कर ग्वालियर का राज कार्य संभालते है तथा अपनी विजय से प्रसन्न हो हर्ष में इतना डूब जाते है कि आगे भी उन्हें कुछ करना है ये विस्मृत कर देते है। उनकी इस अनभिज्ञता का अनुभव रानी उन्हें कराती है तथा उत्सव आदि से रोकती है लेकिन क्षणिक विजय रूपी अज्ञान उनके मानस पटल पर छाया रहता है और उसका दुष्परिणाम यह होता है कि अंग्रेजों का आक्रमण, उसमें पराजय का उन्हें सामना करना पड़ता है

इस प्रकार इनका चरित्र एक ऐसे व्यक्ति के रूप में आता है जो वीर तो है किन्तु धैर्यवान नहीं थोड़ी सी ही प्रसन्नता को प्राप्त कर वह अपना उद्‌देश्य भूलकर अंग्रेजों को विजय का अवसर प्रदान करता है।

16. मोरोपन्त –

मोरोपन्त रानी लक्ष्मी बाई के पिता है। वह राजनीति से पूर्ण परिचित है तथा रानी को समय–समय पर उचित राजनैतिक ज्ञान से अवगत कराते रहते है झांसी युद्ध के समय वह रानी के साथ होते है और वहां भागते समय वह रानी से विलग हो दतिया पहुंचते है। उनका दतिया जाना अंग्रेजों को ज्ञात होता है और वह उन्हें पकड़कर फाँसी दे देते है। इस तरह श्री मोरोपन्त भी अपनी मातृभूमि

की रक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग करते है।

17. श्री गंगाधर राव –

श्री गंगाधर राव झांसी के राजा तथा महारानी लक्ष्मीबाई के पति है वह कलाप्रेमी हैं तथा नाटक आदि कलाओं में विशेष अभिरूचि रखते है। वह इन कलाओं में इतने डूबे है कि उन्हें अंग्रेजों के साथ रहते हुये भी इनकी कूटनीति का आभास नहीं होता है। उन्होंने एक विशाल पुस्तकालय का निर्माण कराया जिसमें वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि अनेंकों धार्मिक ग्रंथ एकत्र हैं।

विवाहेपरान्त रानी उन्हें अंग्रेजों की कूटनीति का आभास कराती है। जिससे उनका झुकाव कुछ अपनी मातृभूमि की ओर होता है किन्तु विवाह के कुछ समय पश्चात रानी को पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है और दो तीन महीने में ही उसके कालकवलित हो जाने पर राजा इस आघात को सहन नहीं कर पाते है तथा अस्वस्थ हो कुछ समय बाद ही उनका स्वर्गवास हो जाता है।

इन पुरूष पात्रों के अतिरिक्त वाजीराव, तात्या दीक्षित, कवि ह्रदयेश, पजनेश, वैद्यराज प्रताप, चित्रकार सुखलाल, न्यायाधीश, भोपटकर, जवाहर सिंह, रघुनाथ सिंह, राजा मर्दन सिंह, बांदा के नबाब आदि के नामोल्लेख हैं जिनके चरित्र को अति विस्तृत तो नहीं किन्तु इनमें से कुछ चरित्रों को क्रांतिकारियों के रूप में ही उभारा गया है।

इनके अतिरिक्त प्रतिनायकों में सरहूरोज, लार्डकैनिंग, स्मिथ, बोकर, फिलिप्स, एन्थोनी, मिकिल जांन आदि नाम भी दृष्टव्य होते है जिसमें सरहू रोज, स्मिथ, बोकर आदि के चरित्रों को अति कुशलता से उभारा गया है।

1. सरह्यू रोज –

एक प्रतिनायक के रूप में जिस चरित्र को चित्रित किया गया है वह है सरह्यू रोज जो अंग्रेजी सेना का प्रमुख नायक है। सरह्यू रोज अंग्रेजी सेना का सर्वश्रेष्ठ जनरल अंग्रेज है। यह अति बुद्धिमान तथा युद्ध कौशल में पारंगत है। रानी के समक्ष वह अडिग, निडर एवं पूर्ण साहसी के रूप में उपस्थित होता है इसे झांसी को अधिकार में लेने के लिये नियुक्त किया गया है। इसी बीच इसे लार्ड कैनिंग का आदेश मिलता है कि वह चरखारी के राजा को तात्या के आक्रमण से बचाये लेकिन सरह्यूरोज वुद्धिमान है वह झांसी के महत्व को जानता है अतः वह लार्ड कैनिंग के आदेश का उल्लंघन करता है।[1] तथा झांसी

1. झांसीश्वरीचरितम् सर्ग 13 श्लोक 93

पर अधिकार करने का प्रयास करता है इससे उसकी बुद्धि कौशल का परिचय मिलता है। वह युद्ध में कुशल दावपेंचो का उच्चज्ञाता है। वह अपने चातुर्य का परिचय देता हुआ झांसी पर आक्रमण की तैयारियाँ करता है।

वह सैन्य व्यूह रचना में अति कुशल है। युद्ध से पूर्व वह शत्रु की शक्ति का अवलोकन करता है। वह अपनी पैदल और अश्व सेना की सहायता से वह शहर एवं किले को घेर अति चातुर्य से रात्रि में आक्रमण करता है। वह युद्ध के लिये सजग हो युद्ध भूमि में आता है–

द्राग् ह्यूगरोजं नय कालगेहमिहाग्रमिह्मग्र मुदीर्णशौर्यम्।

स्वातन्त्रयपद्मं बत भक्षकोयं कीटः खलो मर्दय मर्दयैनम्।। 13/45 झां0च0

वह कोंच युद्ध के समय अवसर देखकर रानी के कमजोर हिस्से पर अपनी ऊँट सेना से आक्रमण करता है जिससे रानी को पराजय का सामना करना पड़ता है।[1]

रोज जैसा योग्य सेनापति है उसकी सेना भी उतनी ही हिंसामय तथा उसके पदचिन्हों पर चलने वाली एवं अनुभवी है। झांसी युद्ध के समय वह आक्रमण और रक्षा के स्थानों पर सेना की टुकड़ियाँ और तोपें लगाता है। शहर के जिन रास्तों से सहायता या रसद मिल सकती है। उन्हें अपने अधीन करता है। अन्त में सरह्यू रोज झांसी पर क्रूर अत्याचार कर झांसी को अधिकार में लेने के अपने स्वप्न को साकार करता है।

सरहू रोज का चरित्र एक ऐसे प्रतिनायक के रूप में चित्रित किया गया है जो बुद्धिमान रणकुशल नीतिज्ञ, कुशल संचालक, उत्तम सेनानायक एवं वीर और बलवान है।

विग्रेडियर स्मिथ –

विग्रेडियर स्मिथ का चरित्र ग्वालियर युद्ध के समय उभर कर आता है। रोज अपनी सेना के कई भाग कर कोटे की सराय की ओर विग्रेडियर स्मिथ को भेजता है। यह एक अनुभवी अफसर है। यह ग्वालियर पर आक्रमण करता है। घमासान युद्ध होता है स्मिथ रानी के पूरे बल को काट डालता है तथा रानी की तलवार को भी काट डालता है लोग सर्प और विच्छू के डसे की तरह तड़प उठते है –

स्मिथस्य चिच्छेद बलं नृपाल्यसि परश्वधश्छेत्ति शितो यथा क्षुपम ।

स वृश्चिकोभूदथ मारूताशनो मृताश्च दष्ट्वा व्यलपंश्च शत्रवः ।। 20/70झां0च0

---

1. 19/52 झांसीश्वरीचरिचम् पृ0 125

स्मिथ अपने को शत्रुओं से बलवान मानता है तथा विजय प्राप्त करना चाहता है –

स्मिथेन युद्धयेतभटेन तेन कः परं तु तस्यापि निमज्जितं यशः।

अमन्यत स्वं बलवत्तरा रिपोर्वाञ्छ चैकैव विजेतुमाशु तम्।। 20/60 झां0 च0

इस तरह रानी और स्मिथ के मध्य भयावह एवं अन्तिम युद्ध होता है यह रानी को घायल कर रण कौशल का परिचय देते हुये विजय प्राप्त करता है।

बोकर –

यह गुरूण्ड सेना का लैफ्टिनेण्ट है जब रानी झांसी से भागती है तब सरह्यूरोज बोकर को उनका पीछा करने के लिये भेजता है। बोकर रानी का पीछा करता है तथा दोनों सेनाओं में युद्ध होता है। किन्तु बोकर रानी से युद्ध करने में असमर्थ रहता है। अतः पराजित होकर घायलावस्था में लौट जाता है–

बोकरोनिकरोद्भटो झटित्या पतन्नृपजनीं तदन्तरे।

स स्पृशञ्छिशुरिव क्षणप्रभां बालिशोलभत सुन्दरं फलम्।। 16/65

धूयमान उद्गाद् बत काली भ्रूविलास इव सच्छवेरसिः।

शिक्षितोपि सुतरां स बोकरघोटको निपतितः क्षितिपृष्ठे।। 16/66 झां0 च0

लार्ड कैनिंग –

लार्ड कैनिंग अंग्रेज गवर्नर जनरल है। वह समदर्शी और उदार प्रकृति का व्यक्ति है। अपराध के समय वह गोरे काले में भेद नहीं रखता है। वह झांसी को अधिकार में करना अति महत्व पूर्ण संमझता है अतः वह सरह्यू रोज जैसे व्यक्ति को झांसी के लिये नियुक्त करता है।

इसका चरित्र एक वुद्धिमान कुशल अंग्रेज अफसर के रूप में चित्रित किया गया है।

ऐतिहासिकता की दृष्टि से नायिका सहित पात्रों के चित्रण में कथावस्तु की समीक्षा :-

झांसीश्वरी चरितम् के अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि इस महाकाव्य का कथा विधान अपने मूलरूप में ऐतिहासिक है जिसे कल्पना के प्रयोग से अति मनोहर रूप प्रदान किया गया है। इसकी कथावस्तु को महाकाव्यों के आवश्यक सभी उपांगो से सजाया गया है।

महाकाव्य में वर्णित सभी पात्र ऐतिहासिक है। सर्वप्रथम इस महाकाव्य की नायिका भारतीय ऐतिहासिक क्रांति की जन्मदात्री वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई हैं जो इतिहास प्रसिद्ध हैं तथा इनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद है। रानी के चरित्र एवं व्यक्तित्व के विषय में इतिहास लेखक सुन्दरलाल ने लिखा

है– "निःसन्देह महारानी लक्ष्मीबाई का समस्त जीवन जितना पवित्र और निर्मल तथा निष्कलंक था उनकी मृत्यु उतनी ही वीरोचित थी, संसार के इतिहास में कदाचित् विरले ही उदाहरण इस तरह की स्त्रियों के मिलेंगे जिन्होंने अपनी इतनी छोटी आयु में इस प्रकार पवित्र जीवन व्यतीत करने के बाद लक्ष्मीबाई की सी अलौकिक वीरता और असाधारण युद्ध कौशल के साथ किसी भी देश की स्वाधीनता के लिये युद्ध किया हो अथवा इस प्रकार अपने अधिकार के लिये लड़ते–लड़ते प्राण दिये हों।[1]

रानी लक्ष्मीबाई की सेविकाओं तथा सखियों के रूप में वर्णित सुन्दर मुन्दर जो कि परम साहसी तथा वीर है। इनका ऐतिहासिक युद्ध में महारानी का सहयोग कर इनके बलिदान की गाथा समस्त ऐतिहासिक ग्रंथो में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुये है। इन पात्रों की ऐतिहासिकता, झांसी की रानी, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बुन्देलखण्ड का इतिहास, स्वातान्त्रय समर, गदर का इतिहास आदि अनेक ऐतिहासिक ग्रंथो से प्रमाणित होती है मोतीबाई ऐतिहासिक है इस बात का उल्लेख झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के परिचय में पृष्ठ तीन पर विशेष रूप से उल्लिखित है।

जूही, तात्या टोपे, नानासाहब, राव साहब, तोपची गुलाम गौस खां, खुदाबख्श, रामचन्द्र देश मुख जो कि रानी की मृत्यु के समय उनके साथ थे इनकी ऐतिहासिकता की पुष्टि भी उपर्युक्त ऐतिहासिक ग्रंथो से हो जाती है।

प्रति नायकों में सरहूरोज, प्रधान सेनापति सर कॉलिन कैम्पवेल, लार्ड कैनिंग, विग्रेडियर स्मिथ, बोकर आदि के नाम भी अनेंको एतिहासिक ग्रंथो में वर्णित है सरह्यू रोज ने तो रानी की प्रशंसा इन शब्दों में की थी –

She was the best and bravest of them all.[2]

इस प्रकार अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर महाकाव्य में वर्णित पात्रों की ऐतिहासिकता प्रमाणित होती है। हां आवश्यकतानुसार डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने इन पात्रों के चरित्रों को कुछ अपनी कल्पना के मणिकांचन योग से सजाया संवारा अवश्य है किन्तु इससे उनकी ऐतिहासिकता पर कोई आंच नहीं आ पाई है। प्रत्येक पात्र जीवन के कर्म क्षेत्र में प्रवृत्त हैं उनमें कर्म की धुन है।

---

1. भारत में अंग्रेजी राज्य, तीसरी जिल्द पृ0 16-18-19

2. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई - पृ0 468 परिशिष्ट - वृन्दावन लाल वर्मा।

अस्तु झांसीश्वरी चरितम् ऐसा महाकाव्य है जिसकी ऐतिहासिकता अक्षुण्ण है स्त्रीपात्र स्वराज्य की भावना से ओतप्रोत है। इसमें महाकाव्य विषयक, परम्परागत लक्षणों का सामान्यतया निर्वाह दृष्टि गोचर होता है।
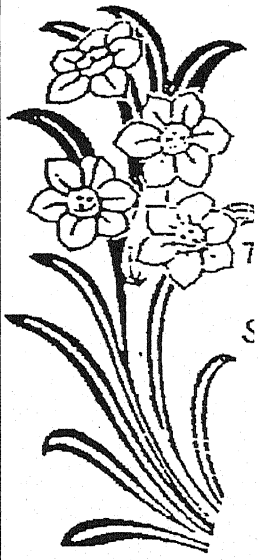
चतुर्थ अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् का साहित्यिक सौष्ठव।
कलापक्ष-भाषाशैली, काव्यरीति, पदलालित्य छन्दोअलंकार योजना
भावपक्ष-रसनिष्पत्ति, प्रकृति चित्रण बिम्बविधान आदि की समीक्षा।
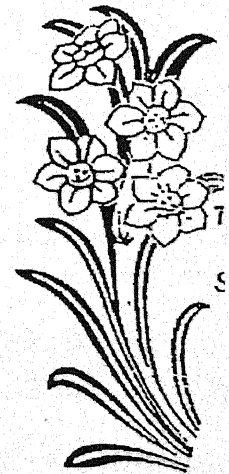
झांसीश्वरी चरितम् का साहित्यिक सौष्ठव

1- कला पक्ष

भाषा शैली -

मानव एक सामाजिक तथा विचार शील प्राणी है आत्माभिव्यक्ति की उसकी इच्छा (Desire of self expression) बड़ी ही सहज है। वह अपनी बात दूसरों तक पहुँचाना चाहता है तथा दूसरों की बात सुनना चाहता है। वह चाहता है कि उसके हृदय स्थित भावों को वह दूसरों के समक्ष प्रकट कर सके। अपनी आत्मा के भावों को प्रकट करने की इसी सहजेच्छा में विचार-विनिमय (Communication of thought) के सर्वाधिक सशक्त माध्यम भाषा को जन्म दिया। सम्पूर्ण सृष्टि में एक मानव ही ऐसा प्राणी है जो भाव प्रकाशन अथवा परस्पर विचारों के आदान प्रदान के लिये वाणी का उपयोग करता है। भाषा वाणी का सम्प्रेषण स्वरूप है।

वर्तमान के सभ्य समाज की भाषा बड़ी ही सशक्त एवं समर्थ है मनुष्य ज्यों-ज्यों प्रगति करता गया विचार विनिमय के इस माध्यम भाषा का भी विकास होता गया। वैसे तो अपने विचार और भावों की अभिव्यक्ति के लिये अनेक साधन हैं जैसे गूँगा इशारों द्वारा अपनी बात कह ही देता है, चुटकी या ताली बजाकर भी हांथो के इशारों से भी अपनी बात कह सकते हैं पशुपक्षी भी अपनी भाषा में भावाभिव्यक्ति कर ही देते है किन्तु इन समस्त माध्यमों में सर्वाधिक सशक्त एवं प्रभावशाली माध्यम भाषा ही है। मानव के सामाजिक प्राणी होने के कारण उसे सर्वदा परस्पर विचारों का आदान प्रदान करना ही पड़ता है अतः हम इन माध्यमों को भाषा के अन्तर्गत नहीं ले सकते जिनके द्वारा विचारों को इशारों द्वारा व्यक्त करते है, और न उसे लिया जा सकता हे जिसके द्वारा हम सोचते हैं। सहीं अर्थो में तो भाषा उसे कहते है जो बोली और सुनी जा सके किन्तु पशुपक्षियों या गूगों का बोलना नहीं, केवल बोल सकने वाले मनुष्यों का बोलना । भाषा की उपयोगिता को वह व्यक्ति भलीभांति समझ सकते है जो इसका प्रयोग करते है। वस्तुतः भाषा सर्वदा ही मानव के विकास में सहायक रही है। हमें हमारे शास्त्रों से जो लाभ होता है वह भाषा का ही परिणाम है हमारे पूर्व पुरूषों के अनुभव हमें भाषा द्वारा ही प्राप्त हुये हैं। संस्कृत साहित्य के महाकवि दण्डी ने भाषा के महत्व को काव्यादर्श [1] में अति सुन्दर

---

1. *इदमन्दधन्तमः कृत्स्नं जायेत् भुवनत्रयम् ।*

यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरा संसारं न दीप्यते ।। काव्यादर्श 1/4

शब्दों में व्यक्त किया है।

सच है कि भाषा न होने की कल्पना ही एक विचित्रता को जन्म देती है। सचमुच ही यदि भाषा न होती तो आज हमारी क्या दशा होती। इस प्रकार की कल्पना ही अधिक दुरूह प्रतीत होती है। इतना सब कुछ सोचते हुये भी पग–पग पर भाषा का प्रयोग करने पर भी भाषा शब्द का अर्थ बतलाना उतना सरल नहीं है फिर भी दण्डी के कथनानुसार भाषा के न होने पर हमारी विचित्र दशा का आभास होता है। वस्तुतः हमारी लोक यात्रा बाग्देवी की कृपा से ही संभव हो पाती है–

वाचामेव प्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते ।। काव्यादर्श 1/3

बास्तम में वाणी ही हमारा आभूषण है। वाणी का संयम ही सर्वातिशायी है।[1]

भाषा शब्द संस्कृत की भाष् धातु तथा 'अ' प्रत्यय लगाकर बना है जिसका अर्थ व्यक्त वाक् 'व्यक्तायां वाचि' से निष्पन्न है। सामान्य रूप से भाषा का अर्थ है बोलना या कहना कहा भी गया है– "भाषणाद हि भाषा" अर्थात भाषा वह है जिसे बोला जाये। मनुष्य द्वारा वाणी से उच्चारित, ध्वनि संकेतों संगठित शब्दमयी भाषा ही वस्तुतः भाषा है क्योकि उसमें स्पष्टता असदिंग्धता तथा सुगमता है– भाषा की परिभाषा के सम्बन्ध में प्लेटों, स्वीट, ए.एच., गार्डिनर, आचार्य किशोरी दास वाजपेयी, ब्लॉक तथा ट्रेगर, स्त्रुत्वां बाबूराम सक्सेना इत्यादि विद्वानों ने अपने समीचीन विचार व्यक्त किये हैं। प्लेटो ने सोफिष्ट में विचार और भाषा के सम्बन्ध में कहा है– कि " विचार और भाषा में थेड़ा ही अन्तर है। विचार आत्मा की मूल या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होंठो पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा कहते है। "

स्वीट के अनुसार – "ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।

A.H. Gardiner महोदय ने लिखा है –

" The Common deffination of speech is the use

---

1. केयूरा नं विभूषयन्ति पुरूषं हारा न चन्द्रोज्वला।
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमनालंकृता मूर्द्धजाः।।
वाक्येका समलंकरोति पुरूषं या संस्कृता धार्यते।
क्षीयन्ते खलुभूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम् ।। (नीतिशतक)

of articulate sound symbols for the expression of thought."

आचार्य किशोरी दास वाजपेयी लिखते है– "विभिन्न अर्थो में संकेतिक शब्द समूह ही भाषा है जिसके द्वारा हम अपने मनोभाव दूसरों के प्रति सरलता से प्रकट करते हैं।

ब्लॉक तथा ट्रेगर –

" A language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a society group Co-Operates."

स्त्रुत्वां –

A language is a system of arbitoary vocal symbols by means of which members of a social Group Co-operate and intract. "

दो अन्य परिभाषायें –

Language is purely haman and non-instinctive method of Communicating ideas, emotions and desisers by means of voluntarily produced symbols 'सपीर'

I will Consider a language to be a set finite or infinite of sentences, each finite in length and constructed out of a finite set of elements "चॉम्स्की"

इनमें सपीर में असहजवृत्तिक (Non instinctive) शब्द ध्यान देने योग्य है मानवेतर भाषायें प्रायः सहज – वृत्तिक (instinctive) होती है।

इन विद्वानों के इन समीचीन विचारों से स्पष्ट होता है कि मानव का भाषा के साथ धनिष्ठ संबंध है। भाषा नामक तत्व मानव जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिये भाषा के अतिरिक्त अन्य माध्यम मात्र भ्रामक तथा संशयोत्पादक है क्योंकि मानव जीवन के सम्पूर्ण विचारों एवं प्रवृत्तियों का स्पष्टीकरण भाषा के अतिरिक्त अन्य साधनों द्वारा असंभव है।

साहित्य समाज का दर्पण हैं। उसके कोष में मानव जीवन का रहस्य उसकी गतिविधि और उसकी आकांक्षायें निहित हैं। किसी की जाति के साहित्य में उस जाति के अतीत की छाया, वर्तमान की झांकी और भविष्य के स्वप्न चित्रित होते है। साहित्य का सृजन भाषा के बिना नहीं हो सकता। हर

साहित्य की अपनी एक भाषा होती है या यों कहिये कि एक विशेष भाषा में विशेष साहित्य का सृजन होता है इस प्रकार भाषा वह उपकरण है जिसके अभाव में साहित्य का सृजन नहीं हो सकता। साहित्य ही ऐसा साधन है जिसमें किसी समाज के युग–युग का इतिहास छिपा होता है। इस प्रकार एक युग की सभ्यता संस्कृति को सुरक्षित रखने के कारण साहित्य का महत्व महान हो जाता है। अतः भाषा के अभाव में साहित्य की रचना नहीं हो सकती । भाषा के महत्व को सच्चा साहित्यकार, साहित्य मर्म को समझने वाला ही समझ सकता है।

अनेक महान साहित्यिक ग्रंथ संस्कृत भाषा में रचित है। संस्कृत साहित्य के विषय में भ्रान्तिया है कि संस्कृत कभी भी जन भाषा नहीं रहीं है। वह तो केवल शिक्षित समाज की साहित्य भाषा रही है यह सत्य नहीं । संस्कृत की साहित्यिक भाषा बनने के पूर्व एक समय जब भाषा ही थी और सर्व साधारण के दैनिक व्यवहार में प्रचलित थी।

यह सत्य है कि भाषा कोई भी हो किन्तु इसके अभाव मे कोई भी साहित्यकार या कवि अपने हृदय स्थित भावों की अभिव्यक्ति नहीं कर सकता। यदि भाषा का अभाव होता तो कवि के हृदय स्थित सुन्दर एवं सुदृढ़ भावों की अभिव्यक्ति असम्भव थी। अतः भाषा रूपी ज्योति का प्रकाश अत्यन्त आवश्यक था वह भी सुन्दर, सुदृढ़, सुकोमल, सरस एवं प्रभावपूर्ण भाषा. क्योंकि भाषा जितनी मधुर एवं सुन्दर होगी कवि के विचार उतनी ही तीव्रता एवं सरसता से अध्येता के मानस पटल पर प्रवेश कर सकेगें।

डा0 सुबोधचन्द्र पंत जी भी ऐसी ही भाषा के धनी है । आपका संस्कृत ही नहीं वरन हिन्दी और बंगाली पर भी पूर्ण अधिकार रहा है। आपकी भाषा सौन्दर्य से परिपूर्ण है तथा अपने अति सुन्दर शब्दों में अपने काव्य 'झांसीश्वरी चरितम्' को सुशोभित किया है।

सत्य तो यह है कि भाषा कोई भी हो परन्तु विचार यदि सुन्दर हैं तो काव्य भी सुन्दर बन पड़ता है। परन्तु यदि अपनी बात सजा संवार कर प्रस्तुत की जाये तो कुछ शीघ्र ही उसका प्रभाव पड़ता है।

यद्यपि आज मुख्य रूप से संस्कृत भाषा का प्रयोग नहीं होता है तथापि समृद्ध संस्कृत साहित्य अपनी विविध विद्याओं की कालजयी कृतियों में भारत राष्ट्र की भास्कर संस्कृति सभ्यता के साथ ही युगयुगीन अमर महापुरूषों की उज्ज्वल गौरव गाथा एवं चारूचरित्र को चमत्कारी रूप में चित्रित करता है यह एक ऐसी अमृत सरिता के समान है जो शाश्वत रूप में बहते हुये मानव जीवन को कृतार्थ

करती रहेगी। संस्कृत की काव्य धारा कभी मुरझा नहीं सकती भले ही कम हो जाये। आज भी ऐसे कई महान कवि है जो इस काव्य सरिता के प्रवाह को वेग दे रहे है।

संस्कृत भाषा हमेशा एक समृद्ध काव्य भाषा रही है जिसमें आज तक अक्षुण्य काव्य प्रवाह बना हुआ है।

डा0 पन्त जी संस्कृत भाषा के सुकवि है हिन्दी और बंगाली में लिखने के साथ ही संस्कृत भाषा पर आपका आश्चर्यजनक अधिकार है। आपकी कविता वनिता कला और भाव दोंनो ही पक्षों से समलंकृत है

संस्कृत भाषा में झांसीश्वरी चरितम्' आपका महाकाव्य है यह एक सुमधुर ऐतिहासिक महाकाव्य है। इसके पठन पाठन से ही ज्ञात होता है कि इसका एक एक छन्द कितना सुन्दर बन पड़ता है तथा कवि का कितना अच्छा अधिकार अपनी भाषा पर हैं आपके लिये इतिहास ही प्रधान है। आपकी भाषा अलंकृत परिस्कृत, सरस, प्रांजल, प्रौढ़ एवं कहीं कहीं पर प्रसाद गुण तथ माधुर्य गुण से युक्त होती हुयी ओजगुणमयी है । उनकी सरल भाषा का सुन्दर उदाहारण देखिये–

वेद्मि नो सप्रयत्नोपि कज्जलं वक्त्रभूषणम्।

कज्जलाभूषणं वक्त्रं यद्धोभे भूस्यभूषणे ।। 3/30

पन्त जी ने अति सरलता के साथ अपने भावों को व्यक्त किया है। उनकी सरल भाषा के ऐसे कई उदाहारण हमारे समक्ष आते हैं जिससे ज्ञात होता है कि आपका भाषा पर पूर्ण अधिकार रहा है कहीं कहीं तो आपके ऐसे शब्दों का प्रयोग कर कुछ नवीनता का प्रदर्शन किया है जो संस्कृत के नहीं है अपितु हिन्दी वर्ण होने के साथ–साथ लोकप्रचलित है। जैसे मशहरी,[1] घास,[2] पेशवा[3] इत्यादि। लोक

---

1. *क्षितिभृतां शिखरेषु शिरस्कतामधिजगाम मृगांकरावली।*

   मशहरीसदृशी ह्रदिनींह्रदाप्समुदये शयनत्वमुपेयुषि ।। 2/17

2. *धान्यकूट मददात्सकलेभ्यः सूचितस्वह्रदयाहित हर्षा।*

   धारिताभिनवघाससमूहा रोम हर्षणमदर्शयदंगे।। 4/25

3. *कल्पते स्म न विलोभयितुं यं पेशवा पदमपि प्रथितं तत्।*

   धीरताजितजगत्त्रय आसीद् हर्ष निर्भरमना हि चिमाः सः।। 4/28

प्रचलित शब्दों के प्रयोग का अति सुन्दर प्रयोग हमें इस श्लोक में देखने को मिलता है।–

शरासनं चैव शरं भुशुण्डीं सदा शतघ्नीं गुलिकायुधं च ।

जानन्त्यजानन्त्यथवा प्रवीरा चर्चातिथीकर्तुमभूद महोत्कां ।। 3/20

भुशुण्डी, शरासन, शतघ्नी सभी लोकप्रचलित शब्द हैं जोकि उस समय प्रयोग में लाये जाते थे। आपकी भाषा सरल भावानुकूल होने के साथ–साथ उसमें कलात्मकला तथा अति मनोहर समन्वय देखने को मिलता है–

दीप पर्व दिन पूर्वमुपेतं क्षिप्रकारि मनसा समवृत्ति ।

रेजिरेलमजिरेजिर आशुदीपकावलय आत्तम हाभाः।। 4/3

सारगर्भित भाषा, कोमलकान्त पदावली, लालित्य तथा व्यंजन आदि भी पन्त जी के अपरिमित पाण्डित्य के सूचक है। महाकाव्य झांसीश्वरी चरितम् के प्रथम सर्ग में शक्ति के दुर्गा,[1] काली,[2] शाकम्भरी[3] आदि रूपों की स्तुति में शब्द पर शब्द इस प्रकार जुड़े हुये है कि मानो शब्द का सागर आपके पास है। निश्चय ही ये श्लोक कवि के अपरिमित शब्द भण्डार और वाक्य विन्यास के स्पष्ट प्रमाण हैं गणेश स्तुति का एक उदाहारण द्रस्टव्य है –

या चण्डमुण्डौ विनिहत्य कुण्डौ चामुण्डया ख्यातिमियाय नाम्ना।

पापद्विदन्तस्य विसार शुण्डां सत्ताविलोपाय सदा चकर्ते।। 1/7 झां0 च0

शब्दों का अपरिमित भण्डार ही नहीं, उनकी अनुप्रासिकता, ओज, सौष्ठव, शुद्वता और अर्थ स्वारस्य पन्त जी को अनुपमेय कलाकार और सिद्ध कवीश्वर प्रमाणित कर रहे है। युद्ध वर्णन में आपकी भाषा ओजस्वनी एवं कठोर है किन्तु श्रंगार करूण आदि स्थलों की भाषा में कोमलता मधुरता तथा

---

1. *यस्याः कृपाया महिषासुरस्य यातोभिमानः प्रलयं क्षणेन ।*

   उद्याम्य सा रक्तकणान् समन्ताद् दैत्यावलीनां हृदयं विभिन्द।। 1/6

2. *या रक्त बीजेन कृतां कथंचिदुद्दण्डतां सोदुमपारयन्न ।*

   भूत्वा महाकाल समा कराला काली जहाराधसमुच्चयं तम् ।। 1/9

3. *या कीलितीं कृत्य जवेन केससर्पस्वभूवृत्तम दान्मनोज्ञम् ।*

   शार्केजगत्पालनकृत्य लग्ना शाकम्भरीनाम वभौ दयाल्वीं।। 1/10

सरलता मिलती है। भाषा सशक्त और प्रवाह युक्त होने से पाठक उसे विना किसी बाधा के अन्त तक सरिता के प्रवाह की भांति पढ़ता चला जाता है

इन श्लोकों के पठन पाठन से प्रतीत होता है कि पन्त जी ने अपने महाकाव्य में अत्यन्त सरस सजीव और स्वभाविक वर्णन प्रस्तुत किये है। सुन्दर एवं नवीन वर्णों के प्रयोग के साथ ही भाषा सुन्दरी को चमत्कारी ढंग से संजोया गया है। कहीं कहीं अप्रचलित और कठिन शब्दों का प्रयोग होने पर क्लिष्टता भी देखने को मिलती है।

भाषा की विशेषता है कि वह सर्वत्र पात्रानुकूल एवं वातावरण अनुकूल है। एक जगह आपने गोपालपुर को ग्वालपुर अभिहित किया है[1] पन्त जी ने रमणीयता के साथ अपने इस श्लोक में भी संस्कृत शब्द क्रीड़ा का प्रयोग न करके 'खेल' शब्द का प्रयोग किया है–

खेलनोपकरणानि सहेलं मानसान्निपतितानि यदा सा।

प्राक्षि पद् हठभरेण कुमार प्राप्य मन्दिर जनोदित तस्यै।। . 4/39 झां0च0

और अन्य शब्दों में आपने ग्वालियर[2] शब्द का प्रयोग किया है।

आपके शब्दों की योजना अनंप्रासिक होने के साथ–साथ सार्थक तथा भाषानुकूल[3] भी है।

अनुप्रासिक भाषा का सुन्दर प्रयोग झांसीश्वरी चरितम् के 18 वे सर्ग के 49 वें श्लोक में दृष्टव्य होता है।[4] कहीं कहीं तो आपने सुगम शब्द मैत्री द्वारा रमणीयता का संचार किया है। वास्तव में शब्दों

---

1. *ग्वाल्यारम्भं चलत नगरं तद् यरं द्राग् विमुक्ति, दीपंदीप्रं ज्वलयितुमलं स्याम तत्रैव वीराः।*
   ईशोनश्चेद भवति सा पदं तर्ह्यनाद्या अनन्ताः, प्रासिष्यामः पुनरपि दास्योक्त्र सयत्नम्।।
   19/55

2. *गद्गद् ध्वनि भरं वदितुं सा मातरारभत तात तथैव ।*
   मन्दिर बहिरथोल्लसितस्य जागरं गतवती नवला भा ।। 4/45

3. *जगाम स ग्वालियरं ममाज्ञया विवर्द्धयन्मुक्तिशिखां बलेश्वरः ।*
   रणेष्ट दीक्षां विपरीष्यति द्रुतं प्रसारयिष्यत्युदयं भटे भटे ।। 20/8

4. *मध्ये मध्ये गगनमामि मे प्रेषयिस्यामि दृष्टिं, भूत्वा नेत्रातिथिरतितरां तर्पयिस्यस्यमूं त्वम्।*
   चन्द्रश्चञ्चूचुलुकमचलं चक्रनाम्नो यथैव, चन्द्रञ्चान्द्रयां चतुरचतुरस्यर्पयत्यात्म भासा ।। 18/49

और अक्षरों की मैत्री का अनूठा उदाहारण 20वे सर्ग के 50वे श्लोक में देखने को मिलता है।[2]

पन्त जी की भाषा में अपूर्ण समाहार शक्ति है। पन्त जी ने अपने वर्णन कौशल का पूर्ण परिचय दिया है आपकी प्राञ्जल, परिमार्जित तथा परिस्कृत भाषा का अतिसुन्दर उदाहारण दृष्टव्य है-

मान्धं गतं झणझणयितमाशु झांस्यां तत्कङ्कणोत्थमथ किङ्किकणिकाप्रसूतम् ।

अधातजातमपि कन्दुकजातमापत्तद्धिस्मृतिं खणखणयितमाप शास्त्रम् ।। 9/37

इसी तरह आपने अपने अनेक श्लोकों में अपनी भाषा शैली पर पूर्ण अधिकार तथा भाषा में शब्दों की अनुप्रासिकता एवं योजना का 20वें सर्ग के श्लोक नं0 19/17, 20/104, 14/65 में परिचय दिया है।[3] पन्त जी ने अपनी भाषा को रस, छन्द, अलंकार रीति गुण आदि से सुशोभित किया है।

गुण -

पन्त जी प्रसंगानुकूल पदावली के प्रयोग में सिद्धहस्त प्रतीत होते है आपकी शैली में सर्वत्र प्रासादिकता, ओजस्विता एवं मधुरता के साथ-साथ ध्वन्यात्मकता तथा वर्णन कुशलता भी देखी जाती है। कवि पन्त जी ने अपने महाकाव्य में रस एवं भाव के अनुरूप ओजगुण, प्रसाद गुण तथा माधुर्यगुण का भी प्रयोग किया है वीर और शैद्र रसों के अभिव्यंजन में ओजोगुण का प्रचुर प्रयोग किया है। महारानी लक्ष्मीबाई के बचपन के वर्णन में प्रसाद गुण तथा करूण और श्रंगार में कहीं कहीं माधुर्य गुण का प्रयोग किया है। काव्य की श्रेष्ठता का मापदण्ड रस है इसीलिये रस को काव्य की आत्मा कहा गया है जिस प्रकार वीरता, उदारता, त्याग, सहानुभूति आदि गुणों से मानव की आत्मा का उत्कर्ष प्रकट होता है, उसी

---

1. भटाबभूवः परमालसाश्चला महाकुलाः सन्त इतस्ततोद्रवन्।

असित्सरूं राज्ञधरत्करेण सा दृढ़ं चचालार्जयितुं यशोभरम् ।। 20/50 झां0 च0

2. ततस्तडित्ताद्वित तुल्यमीरयन्त्यसिं नृपाकालपुरं निनाय तम्।

शशाम यद्यप्यणु वैरशोधनात् सखीस्मृतिस्त्वाश्वतनोदधीरताम् ।। 20/104 झां0 च0

कलकल उद्भूद द्रागृष्टयः कोषमुक्ता वियदसमय एवायोजयन् विद्युदाल्या।

झणिति खणिति रावं युद्धवाद्यानि कृत्वा सुरपुरमहिलोकं व्याप्तवन्ति प्रकामम् ।। 19/17 झां0च0

धर्मश्च कर्माभवतां विलुण्ठिते देशश्च वेशोभवतां विलुण्ठितौ।

लज्जा च सज्जाभवतां विलुण्ठिते रंगश्च संगोभवतां विलुण्ठितौ।। 14/65 झां0च0

प्रकार माधुर्य ओज आदि गुणों से काव्य की आत्मा अर्थात् रस का उत्कर्ष होता है। इसीलिये गुण को रस का धर्म माना गया है। अस्तु रस के साथ गुणों का होना आवश्यक है। गुणों की स्थिति सरस काव्य में ही होती हैं नीरस काव्य में नहीं। गुण काव्य के अनिवार्य तत्व है। मनुष्य की भाँति काव्य के सौन्दर्य का भी मूल्यांकन गुणों के आधार पर किया जाता है। आचार्य मम्मट ने माधुर्य ओज, तथा प्रसाद ये तीन गुण माने है।[1] चित्त के द्रवीभाव का कारण, श्रंगार रस में रहने वाला आह्लाद स्वरुप गुण माधुर्य गुण कहलाते है।[2] श्री पन्त जी का काव्य भी इन समस्त गुणों से विभूषित हुआ हैं। वैसे तो सम्पूर्ण काव्य ओजोगुणमय ही है तथापि यत्र तत्र माधुर्य एवं प्रसाद गुणों से युक्त उनका काव्य धारा प्रवाह से प्रभावित होता हैं।

माधुर्य गुण -

करूण रस में माधुर्य गुण का समन्वय अति कुशलता से किया हैं। भाषा में कितना माधुर्य हैं। हृदय मयूर इस माधुर्य की वर्षा से नर्तन करने लगता हैं। राजा गंगाधर की मृत्यू के समय समस्त झाँसी जन का शोक में डूब जाना, रंगों, ग्रंथागार तथा आकाश और कूप के भी रोने का पन्त जी ने मधुर चित्र पृष्ठ पर उकेरा हैं–

रङ्गोरोदितिहन्ताद्य ग्रन्थागारं च रोदिति।

रोदित्युर्वी नभो रोदित्य कूपारश्च रोदिति।। 10/66

भावुकता की कितनी कोमल व करूण अभिव्यक्ति है। माधुर्य से परिपूर्ण चित्त का द्रवीभूत कर देने वाला यह श्लोक पन्त जी की उत्कृष्ट भाषा का अनुपम उदाहारण है। यह माधुर्य केवल श्रंगार में ही नहीं रहता अपितु करूण विप्रलम्भ तथा शान्त रस में भी रहता है।[3] माधुर्य गुण से युक्त और अन्य उदाहारण दृष्टव्य है –

गम्भानहृदयं भेदं भेदं जना व्यलपन्बहु।

वसन निवहं छेदं छेदं हताः प्रतिरोम ते।

---

1. *माधुर्यौजः प्रसादाख्यास्त्रयस्ते न पुनर्दश। काव्य प्रकाश का0 नं0 89*
2. *आह्लादकत्वं माधुर्य श्रंगारे द्रुति कारणम् । काव्यप्रकाश का0नं0 90*
3. *करूणे विप्रलम्भे तच्छान्ते चातिशयान्वितम् । काव्य प्रकाश - 91*

परविलकतां तां योपश्यत्स एवं जनो मनाक्

पुलकममितं कुर्वाणां तां व्यथां कथयेत्पराम् ।। झां0 15/4

आपकी मधुर शैली मनुष्य को आकर्षित करती है। अपने सहज प्रवाह में वर्णित विषय का सुन्दर चित्रण अंकित करती है। माधुर्य युक्त श्रंगार में भी पन्त जी ने मनु के भौहों, नासिका, नेत्रों आदि का चित्रण अति मधुर भाषा में चित्रित किया है। वाणी के वर्णन में तो पन्त जी ने मानो मधुरता को समेंट ही लिया है–

वाणी लोचनयोः स्याच्चेद् वाण्या लोचन युक्तया

तदा वर्णयितुं किञ्चित् पारयेत्कश्चनानुजाम् ।। 3/41

इस प्रकार झांसीश्वरी चरितम् में ऐसे कई उदाहारण मिलते है जो सरसता, मधुरता, को अपने अंक में समेटे हुये है।

ओजगुण –

भाषा में सरलता और सुबोधता के अतिरिक्त ओज का होना अति आवश्यक है। भाषा में सरलता और ओज सोने पे सुहागा का काम करते है। पन्त जी की शैली ओज पूर्ण है और वीर रस की व्यंजना के लिये सर्वथा उपयुक्त है अतः आपकी शैली को वीर रस की ओजपूर्ण शैली कहा जा सकता है। ओजगुण की परिभाषा करते हुये आचार्य मम्मट ने अपने काव्य प्रकाश में कहा है– "वीररस में रहने वाला, चित्त के विस्तार के हेतु, अर्थात चित्त को उत्तेजित करने वाला ओज गुण कहलाता है।[1] क्रमशः वीररस से वीभत्स में तथा वीभत्स से रौद्र में ओजगुण वढ़कर होता है।[2] भावों की सुन्दरता तथा भावों की मधुरता एवं गुणों के कारण पन्त जी का काव्य आकर्षक एवं महारानी लक्ष्मी बाई के उत्साह एवं वीरता से परिपूर्ण वाक्य ओजोगुणमयी भाषा के उत्कृष्टतम् प्रतीक है। झांसीश्वरी महारानी लक्ष्मी बाई का वीरता से भरा हुआ यह वाक्य पाठक गण के मन में भी उत्साह का संचार कर देता है –

जाज्वल्यमानाग्निशिखासमानि स्मरामि कुन्त्या वचनानि तानि।

क्षत्रस्य पत्नी तु सुता ममास्मा एवाह् न आर्ति सहते प्रसूतेः ।। 5/133

---

1. *दीप्त्यात्मविस्तृतेर्हेतु रोजो वीररस स्थितिः । काव्य प्रकाश का0 नं0 92*

2. *वीमत्सरौद्रसयोस्तस्याधिक्यं क्रमेण च । काव्य प्रकाश का0 नं0 93*

एक और अन्य उदाहारण में महारानी लक्ष्मीबाई की वीरता का परिचय हमें प्राप्त होता है। आठ वर्ष की उम्र में ही घोड़े पर सवार होकर, दृढ़ात्मा का परिचय मिलता है।[1] एक गुफा में प्रवेश करना तथा सिंह की दहाड़ से भयाक्रान्त वातावरण में भी किसी भी प्रकार से भयभीत न होना[2] वीरता के मनोहर उदाहरण है जो ओज गुण से ओत प्रोत है। वास्तव में पन्त जी की भाषा गुणों से युक्त अलंकारों से अलंकृत तथा विविध भावों से युक्त है। जिनके प्रयोग से आपकी भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता प्रभावपूर्ण होनी ही है। वीरता, ओज से परिपूर्ण एक और अन्य उदाहारण दृष्टव्य है –

खड्गं श्रृगं पूर्ण ज्वालारङ्गेण संविधास्यामि।

भरत क्षितिशिखि चूर्ण शत्रुभ्यो दर्शयिष्यामि ।।

सम्पूर्ण महाकाव्य में झांसी की अधीश्वरी महारानी लक्ष्मीबाई की वीरता का मनोमुगधकारी चित्रण किया है इस वीर रस प्रधान महाकाव्य की गुणमयी शैली पाठकों के चित्त चंचरीक को अनायास ही अपनी और आकर्षित कर लेती है भयानक रस में भी ओजपूर्ण शैली प्रयुक्त होती है जैसे –

आवर्त्तघात समुदायमदर्शयत्सा कल्लोल विक्रममथोच्चतमं ततान।

तीरप्रहार मदितां च तदुत्थरावनिर्भर्त्सनामविरलं प्रकटी चकार।। 12/32

वीररस प्रधान काव्य होने से ओज युक्त ऐसे अनेक उदाहरण मिलते है जो पन्त जी के उत्कृष्ट ओजमयी शैली के विशिष्ट परिचायक है। कुवंर सागर सिंह से हुये युद्ध में भी झांसीश्वरी की वीरता पर समुज्ज्वल प्रकाश पड़ता है। रानी जिस वीरता से युद्ध करती हुयी सागर सिंह को अपनी सेना में सेनापति पद प्रदान करती है उससे पन्त जी की ओजमयी भाषा पर अधिकार का पूर्णपरिचय मिलता है वास्तव में पन्त जी ने युद्ध का सजीव वातावरण प्रस्तुत किया है।

ओजगुण से युक्त वीरता का एक उदाहरण दृष्टव्य है

वीराग्रणीस्त्वरितमङ्गणं या

---

1. *वीराष्टवर्षा प्रबला किशोरी मनुरधिस्थाय हृयं दृढ़ात्मा ।*

   तं धावितुं शीध्रममोचयत्सा समुधतान्तर्मृगयाक्रियार्थम् ।। झांसीश्वरी चरितम् 5/53

2. *जगर्जसिंहो न तथा प्रचण्डो महाभयापूरितकाननान्तः।*

   यथा तदीयः सः गुहाप्रविष्टः प्रति ध्वनिर्भीषिणता सदेहा। झांसीश्वरी चरितम् 5/52

चक्रे रणाङ्गणमनल्पमुदग्र मूर्तिः ।

तस्या जयध्वनिरभूतिक्षति पाङ्गनाया।

आसादयज्जनगणो गरिमाणमुच्चैः ।।

इस ओज के प्रभाव से पाठक का हृदय कड़क उठता है। आपकी वर्णन शैली इतनी सजीव है कि वर्णन नेत्रों के समक्ष नृत्य करता प्रतीत होता है। यहाँ ओज युक्त युद्ध का वर्णन आपने इतनी सजीवता से किया है कि नेत्रयुग्म के समक्ष यह वर्णन सजीव हो उठता है वीररस के अनुकूल कथन झांसीश्वरी चरितम् में ऐसी सशक्त और ओज युक्त भाषा मे व्यक्त किये है कि उसका प्रभाव हृदय पर पड़ता है। रौद्र रस से युक्त ओजमयी भाषा के 14वे सर्ग का यह उदाहरण सशक्त बन पड़ा है–

तन्वत्युदग्रं रूचिमण्डलं परं क्रोधेन वाष्पाविललोचनाम्बुजा ।

सा चिन्तयामास महाछ्लं नृपा तत्कल्पना हा सकलैव चूर्णिता।।14|69

दूल्हाजू के विश्वासघात करने पर सुन्दर का तलवार लेकर चण्डी की तरह उस पर वार करना[1] ओज गुण के अनुपम उदाहरण हैं। यह वाक्य–देशद्रोही, नरक के कीड़े तू अंग्रेजो से कुछ नहीं पावेगा।[2] सुन्दर ओजयुक्त होने के साथ–साथ उसकी देशभक्ति भी इसमें है।

प्रसाद गुण –

कला की सर्वश्रेष्ठ सार्थकता यही है कि इसका रहस्य तो पारदर्शी जनों को ज्ञात हो किन्तु उनका सामान्य आनन्द सर्वसुलभ बन जाये इस कथा के आधार पर यदि झांसीश्वरी चरितम् की परीक्षा की जाये तो यह काव्य इस परीक्षा में खरा उतरता है।

पन्त जी ने माधुर्य एवं ओज गुण के अतिरिक्त कहीं–कहीं प्रसाद गुण का भी प्रयोग किया। आचार्य मम्मट ने काव्यप्रकाश में प्रसाद गुण की परिभाषा इस प्रकार दी है– "जिस प्रकार सूखे ईंधन में अग्नि तथा स्वच्छ (वस्त्र) में जल सहसा व्याप्त हो जाता है। इसी प्रकार जो गुण सहसा ही अन्य अर्थात

---

1. *खड्गं पर खण्डितमेव चण्डिका दीप्तं दधत्यैत फलदित्युरुद्धरम् ।*

   भीत्या वहन् नर्तित तारकां दृशं दूल्हा अनृत्यन्मदमत्त सन्निभः।।

2. *झांसी की रानी , वृन्दावनलाल वर्मा 207 14/54*

चित्त में व्याप्त होता है वह प्रसाद गुण है वह समस्त रसों तथा रचनाओं में विद्यमान रहता है[1] कविराज विश्वनाथ ने भी प्रसाद गुण का लक्षण कुछ इस प्रकार दिया है।[2] वीर, रौद्र आदि में प्रसाद गुण चित्त में शुष्क ईंधन में अग्नि तथा श्रृंगार और करूण आदि में स्वच्छ वस्त्र में जल के समान व्याप्त हो जाता है वैसे यह समस्त रसों में पाया जाता है। महाकवि पं0 श्री सुबोध चन्द्र पन्त जी ने वीर रस के साथ–2 अनेक रसों का भी प्रयोग किया है अतः यत्र तत्र ओज और माधुर्य के साथ–साथ प्रसाद गुण भी दृष्टव्य होता है। जिस तरह से अंगूर का रस बाहर से झलकता है उसी तरह प्रसाद गुण युक्त काव्य का भावार्थ शब्दों में झलकता है। यथा– महारानी लक्ष्मी बाई के बचपन के कुछ उदाहरणों में भी प्रसाद गुण हमारे समक्ष आता है। बचपन के कुछ उदाहरण प्रसादयुक्त अच्छे बन पड़ते है –

रोदित्येषा नहिक्वापि हसतीव सदा पटुः ।

वीक्ष्यैवातितरां मेस्याः स्पृहत्यम्ब दृग्द्वयम् ।। झांसी॰ 3/8

चतुर्थ सर्ग के 37, 38 वे श्लोक में कवि ने महारानी लक्ष्मीबाई के शैशव काल का अति मनमोहक चित्र अंकित किया है जो कि प्रसादमयी भाषा का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। –

उद्दधार करपल्लवयुग्मं नामितांगुलियुगं शितिनेत्री।

आजुहाव जननीं रूचियुक्तं सा यदैव गतमाशु वहन्ती ।। ५|३७

प्रस्तुत श्लोक में भाव को पाठक सरलता से हृदयंगम कर लेता है अतः इसमें प्रसाद गुण है।

वात्सल्य रस में प्रसाद गुण की मोहक झलक हमारे नेत्रो को ममता से ओतप्रोत करती हुयी पन्त जी का भाषा पर पूर्णाधिकार तथा लालित्यमय शैली पर भी प्रकाश डालती है। पन्त जी ने रानी लक्ष्मी बाई के शिशुकाल का अतिसूक्ष्म किन्तु सुन्दर चित्रण किया है बाललीला का अति मनोमुग्धकारी चित्रण श्लोक में भी देखने को मिलता है –

---

1. *शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहसैव यः।*

   व्याप्नोव्यन्यत्प्रसादोऽसौ सर्वत्र विहितस्थितिः ।। काव्य प्रकाश का0 नं0 94

2. *चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केनधनमिवानलः ।*

   स प्रासादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च ।। साहित्यदर्पण कविराज विश्वनाथ

कृष्णएव कृत बालक लीलो बालिकात्मधिगन्तुमतीहः।

लीलया क्षितितलेधृतमौरौपुत्रि का तनुखातरदत्र ।। 4/66

कुछ अन्य श्लोकों में वाणी[2] एवं चपलता[3] के वर्णन में भी पन्त जी सफल हुये है। शिल्पी की भाँति शब्दों का निर्माण करते है यही है कवि की भाषा की कुशलता, उनकी दक्षता।

वास्तव में सुबोध पन्त जी की भाषा शैली सर्वत्र मीठी मुस्कान लिये हुये, भावों से गम्भीर गुणों के गुणमयी, सौन्दर्य एवं माधुर्य से युक्त पाठकों को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। आपने भाषा को क्लिष्ट बनाकर चमत्कार प्रदर्शन का कोई प्रयास नहीं किया है। पन्त जी का भाषा पर पूर्ण अधिकार है तभी तो आपकी भाषा शैली इतनी उत्कृष्ट बन गयी है नहीं तो भाषा पर पूर्ण अधिकार के अभाव में यह कदापि सम्भव नहीं था। भाव, भाषा और शैली का सुन्दर सामंजस्य महाकाव्य झांसीश्वरी चरितम् में दृष्टि गोचर होता है। विषयानुकूल शब्दावली का प्रयोग किया गया है। वीररस का काव्य होने के कारण इस में सर्वत्र मधुरता तथा सरसता मिलना सम्भव नहीं है फिर भी अपूर्ण वर्णन शक्ति के प्रयोग में पन्त जी ने अपना कौशल दिखलाया है।

काव्य रीति -

पन्त जी का काव्य जहाँ एक ओर रस भाव एंव ध्वनि से आप्यायित होकर उल्लसित हो रहा है वहीं दूसरी ओर उसके विभिन्न अंग अलंकार, छंद एंव रीति रुपी पुष्पों से विकसित हो रहा है। गुण विशिष्ट रचना का नाम रीति है अतः स्पष्ट है कि इसमें गुणों का अत्यधिक महत्व है। रीतिसम्प्रदाय को गुण सम्प्रदाय भी कहा जाता है। रीति शब्द का अर्थ है– गति, मार्ग या प्रस्थान। इस सम्प्रदाय के एकमात्र संस्थापक आचार्य वामन थे। उन्होंने रीति को काव्य की आत्मा माना है– 'रीतिरात्मा काव्यस्य' और

---

1. *हर्षणाम्बुधिरूदैद् धृतवेला वृद्धि मग्जिम विसार उदग्रः*

   तं जना गृहगता अवगाढा नूत्नतां चययितुं शतवारम् ।। 4/38

2. *कोकिलं मधु विडम्बयतिस्म साकुद्दध्वनि भरं विदधाना।*

   चंचला छलयति स्म जनित्रीं सापवार्य विहितौतुविरावा।। 4/65

3. *वीक्ष्य भृंगमुत चित्रपतंगतं कदाचिदपि सानुबबन्ध।*

   निष्कुटस्य चपला क्वचनापि वाहिनीकृतवती मृगपोतम्।। 4/60

"विशिष्ट पद रचना" को रीति कहा है।[1] काव्यादर्श के प्रणेता आचार्य दण्डी भी रीति को काव्य की आत्मा स्वीकार करते। आचार्य वामन ने तीन रीतियां स्वीकार की है– वैदर्भी, गौड़ी, पाञ्चाली।[2] सरस्वती कण्ठाभरण में भोजराज ने रीति की इस प्रकार परिभाषा की है–

वैदर्भादिकृतः पन्थाः काव्ये मार्ग इति स्मृतः।

रीड़ गताविति धातोंः सा व्युत्पत्तया रीतिरुच्यते।।

आचार्य वामन ने वैदर्भी रीति में, समस्त दान गुणों का समावेश कर गौड़ी के लिये ओज और कान्ति, तथा पाञ्चाली के लिये माधुर्य एंव प्रसाद गुण ही[2] आवश्यक बतलाये हैं।[3] इस प्रकार आचार्य वामन ने काव्य शोभाकारक शब्द और अर्थ के धर्मों से युक्त पद रचना को रीति कहा है। तथा रीति का लक्षण इस प्रकार किया है–

अस्पृस्टा दोषमात्राभिः समग्रगुण गुम्फिता।

विपञ्चीस्वर सौभाग्या वैदर्भी रीति रिष्यते।।

आचार्य वामन के उपरान्त आचार्य आनन्द वर्धन,[4] आचार्य राजशेखर,[5] आचार्य भोजराज[6] (आपने छैः रीतियाँ मानी है) तथा आचार्य विश्वनाथ[7] ने भिन्न–2 प्रकार से रीति स्वरूप का निरुपण किया है। आचार्य कुन्तक[8] ने तीन रीतियाँ स्वीकार की है।

---

1. *विशिष्ट पदरचना रीतिः । 'वामन' काव्यालंकार सूत्रम् 2–7–8*
2. *विशेषो गुणात्मा सात्रिधा – वैदर्भी गौड़िया पांचाली च । वामन*
3. *समग्रगुणा वैदर्भी ओजः कान्तिमती गौडीया माधुर्य सौकुमार्योपपन्ना पांचाली ।।*
   काव्यालंकार वामन 2.11, 2.12, 2.13
4. *पदसंघटना भी रीति का ही परिष्कृतरूप है जो रस आदि को व्यक्त करती है–*
   'व्यनक्ति स रसादीन्' (ध्वन्यालोक 3.5)
5. *वचन विन्यास का क्रम ही रीति है – 'वचन विन्यासक्रमों रीतिः । राजशेखर*
6. *छैः रीति, वैदर्भी, पांचाली, गौडीया, आवन्तिका, लाटीया और मागधीः भोजराज।*
7. *पदसंघटना रीतिरंगसंस्था विशेषवत् उपकर्त्री रसादीनाम् । साहित्यदर्पण 9/1*
   वैदर्भी चाथ गौडी च पांचाली, लाटिका तथा।
8. *सम्प्रति तत्र ये मार्गाः कविप्रस्थान हेतवः ।*
   सुकुमारो विचित्रश्च मध्यमश्चोभयात्मकः ।। 'वक्रोक्तिजीवितम्'

आचार्य दण्डी ने भी काव्यादर्श में 'रीतिरात्मा काव्यस्य' कहते हुये चार रीतियों को स्वीकार किया है– (1) गौड़ी (2) वैदर्भी (3) पाञ्चाली और लाटी।–

"गौडी डम्बर वद्धा स्याद् वैदर्भी ललित क्रमा।

पाञ्चाली मिश्रभावेन लाटी तु मृदुभिः पदैः।। *काव्यादर्श*

इस प्रकार आडम्बर युक्त भाषा को गौडी, ललित पद विधान भाषा को वैदर्भी, गौडी और वैदर्भी रीति के मिश्रित स्वरूप को पाञ्चाली एंव कोमल पदविन्यास रचना को लाटी कहा है।

महाकाव्य पन्त जी ने अपने देदीप्यमान काव्य "झाँसीश्वरी चरितम्" में वैदर्भी रीति का अधिकतर प्रयोग किया है। अन्य रीतियों का भी समाश्रयण किया गया है। भाषा की भाँति शैली भी नैसर्गिक तथा सहृदयों के हृदयों को आकृष्ट करने वाली है। उदात्त एंव मधुर पदावली का सामंजस्य अति मनोहर रूप में पाठक गण के चक्षुओं को आप्यायित करता है। इन रीतियों का आपके काव्य में बड़ी ही कुशलता के साथ प्रयोग किया गया है। जिस प्रकार मनुष्य की शरीर रचना में कदाचित् कोई न्यूनता रह जाती है तो उसके शरीर में विकार के साथ–साथ उसका लावण्य का नाश हो जाता है उसी प्रकार पद संरचना के अभाव में, रीति के अभाव में काव्य के सौन्दर्य का विनाश होता है। अतः रीति या रसों के अभाव में वह काव्य रुचिर , मधुर , एंव सरस श्लक्ष्ण नहीं रहता है। अपितु नीरस , अरुचिकर , रुक्ष एंव कठोर बन जाता है। इस प्रकार रीति विचारों का परिधान हैं, प्रतिपाद्य विचारों के अनुकूल वाक्य , शब्द एंव वर्णों के विन्यास की योजना है।

पन्त जी ने अपने काव्य में अवसरानुकूल रीतियों का प्रयोग किया हैं। पन्त जी ने जिन रीतियों का प्रयोग किया है। उनका क्रमशः वर्णन अनुचित न होना।

(1) वैदर्भी रीति– जिस वृत्ति में माधुर्य गुण प्रधान श्रुति मधुर वर्णो की अधिकता होती हैं और सामासिक पदों या संयुक्त वर्णो का प्रयोग नहीं होता उसे उपनागरिका या वैदर्भी रीति कहते है , अर्थात् वैदर्भी रीति में माधुर्य व्यञ्जक शब्दों के द्वारा ऐसी ललित एवं कोमल पदावली की रचना होती है जिसमें समासों का अभाव हो तथा थोड़े से छोटे–छोटे समास हों। आचार्य रूद्रट ने श्रंगार और करूण रस में[1] वैदर्मी का संयोजन माना है। अतएव ऐसी रचना सरल सुबोध एवं मधुर होती है वहां भाव और

---

1. असमस्तैकसमस्ता दशभिगुणैश्च वैदर्भी ।

वर्णद्वितीय बहुला स्वल्पप्राणाक्षरा च सुविधेया ।। *(रूद्रट)*

भाषा सभी स्पष्ट रहते है। वैदर्भीरीति की परिभाषा करते हुये कविराज विश्वनाथ इस प्रकार लिखते है।

माधुर्यव्यंजकैर्वर्णे रचना ललितात्मिका ।

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते ।।

अर्थात वैदर्भी रीति में उन्हीं वर्णो का प्रयोग किया जाता है जो सरल, कोमल एवं मधुर हैं। जिनके फलस्वरूप पदावली लालित्य पूर्ण एवं कर्ण कटु शब्दों रहित होती है। सर्वत्र प्रासादिकता अभिव्यंजित होती है। वैदर्भी रीति की प्रशंसा में श्री हर्ष[1] एवं महाकवि विल्हण[2] ने भी अपने विचारों को व्यक्त किया है। दण्डी ने " समग्रगुणोपेता वैदर्भी " इस प्रकार कहा है।

पन्त जी को वैदर्भी के प्रयोग में अत्यधिक सफलता मिली है पन्त जी की काव्य शैली में नवीनता, प्रौढ़ता, मधुरता एवं निर्दोषता का सुन्दर समन्वय है। प्रसादगुणोपेता वैदर्भी रीति विभूषित निम्नलिखित श्लोक का अवलोकन करें –

ऐव्प्रभातमथ रम्यमम्बरे प्रासरद्दिनमुखस्य रक्तिमा ।

मंजिमोपरि च निम्नतो द्रवन् व्याप वेग ब्लितस्त्रिजगत्सः ।। 16/1झां0च0

पन्त जी ने अति सरस एवं कोमल वर्णों के माध्यम से प्रभात का अति रमणीय वर्णन किया है। पन्तजी ने भाव के अनुकूल भाषा का संयोजन करने का सदैव ध्यान रखा है। जैसा कोमल या कठोर वर्णन करना हुआ उसी के अनुसार भाषा संयोजन किया। प्रतीत होता है कि पन्तजी प्राकृतिक तत्वों से अधिक प्रभावित है। यही कारण है कि आपके महाकाव्य में सांग्रामिक वर्णन अधिक रहते हुये भी प्रकृति की सुकुमारता अक्षुण्ण रूप में विद्यमान है यथा –

शोभिता पथि पथि द्रुमराजी राजिता दलतती द्रुमे द्रमे ।

मण्डितः खगदलो दले दले गानवृन्दमुदितं खगे –खगे ।। 16/5

पन्तजी ने प्रकृति सुन्दरी के विचरण के लिये अपने काव्य में सुन्दर आराम को प्रस्तुत किया

---

1. *धन्यासि वैदर्भि! गुणैरुदारैर्यया समाकृस्थत नैषधोऽपि ।*

इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदब्धिमप्युत्तरसी करोति।। श्री हर्ष

2. *अनभ्र वृष्टिः श्रवणामृतस्य सरस्वती विभ्रमजन्म भूमिः ।*

वैदर्भरीतिः कृतिनामुदेति सौभाग्यलाभप्रतिभूः पदानाम् ।। महाकवि विल्हण

है। इस तरह पन्त जी ने अपने काव्य को प्रसाद पूर्ण वैदर्भी रीति युक्त अनेक श्लोकों से विभूषित किया है। आपने अपने काव्य में जल,[1] पुष्प,[2] वृक्ष[3] आदि प्राकृतिक उपादानों का बड़ी ही कुशलता से वर्णन किया है। श्रंगार वर्णन में भी कवि वैदर्भी रीति के प्रयोग में सफल हुआ है। मनु के सौन्दर्य वर्णन में सरसता, सरलता एवं लालित्यपुर्ण शैली के प्रयोग में कवि ने अपनी प्रतिभा का समुचित प्रयोग किया है यथा –

हरिणावस्णावोष्टौ बिम्बपल्लव संचयौ ।

हासा भान्त्यत्र शम्पाया हिमस्योन्मेषणैः समाः ।। 3/32

लघु समास शैली अत्यन्त भाव पूर्ण और मार्मिक हैं। उसमें अभिव्यक्ति की स्पष्टता और सूक्ष्मता निहित है। वैदर्भी शैली में कवि इतिहास लेखन के साथ कवित्व निर्वाह में भी सफल हुआ है रस अलंकार आदि का भी सुन्दर परिपाक इस काव्य में हुआ है।

यह श्लोक देखें –

चन्द्रो वेत्यम्बुजं वेति वेत्तुकामाथवानमम् ।

स्थेमानं दधती शीर्षदुर्गेल्याल्य हिनोच्चरम् ।। 3/29

यह श्लोक देखें –

नूटनमाप्नोति सम्मानमस्या नित्यं नवं मुखम् ।

नित्यनूत्नं हि लोकेत्र नितरामभिनन्द्यते ।। 3/21 झां0 च0

---

1. *जलस्य शोभा नवतामुवाह कुशेशयानां निचयश्चकास।*

   विशाल उल्लोच इवास्तृतोभूत् तथा व्यसारीद्रजसां समूहः ।। 5/40

2. *फुल्लतानि कुसुमानि सपर्णान्यास्थितानि विटपोत्तमासने ।*

   पुङ्खितानि निशिलीलया श्लथान्यायुधानि मदनस्य निषंगे ।। 16/11

3. *वृक्षका विलसिताः शिशुतुल्या मुग्धमाप्य सुमनोमुखं प्रियम् ।*

   तत्र कज्जलविभां रसलुब्धाः षटपदारततंरा वितेनिरे ।। 16/12

2 – गौड़ी रीति –

पदावलियों का प्रयोग वर्ण्य–विषय के अनुकूल होना चाहिये। एक ही विद्या प्रत्येक वर्णन को प्रवाहमय नहीं बना सकती। ऐतिहासिक महाकाव्य झांसीश्वरी चरितम् में उचित शब्दावलियों का प्रयोग, अर्थपूर्ण वाक्य विन्यास तथा अवसर के अनुकूल कोमल तथा कठोर वर्णो के प्रयोग में पन्त जी सिद्धहस्त रहे है। युद्ध वर्णन और वीररसाभिव्यक्ति में गौड़ीरीति का आश्रयण स्वाभाविक एवं रसानुकूल है।

जिस वृत्ति में ओजगुण वाले, कर्ण कटु शब्द तथा सामासिक पदों वाली क्लिष्ट रचना की जाती हैं उसे गौड़ी रीति कहते है। इसमें रौद्र वीर और भयानक रसों का वर्णन होता है।

गौड़ी रीति का लक्षण इस प्रकार है –

" ओजः प्रकाशकैर्वर्णैर्बन्ध आडम्बरः पुनः

समास बहुला गौड़ी ।।

झांसीश्वरी चरितम् में ललित रचनायुक्त वैदर्भी रीति का सुन्दर प्रयोग अवश्य किया गया है किन्तु सम्पूर्ण महाकाव्य वैदर्भी रीति की कोमल, लघुसमास पदावली की कसौटी पर खरा नहीं उतरता क्योंकि सम्पूर्ण महाकाव्य में भावों की कोमलता संभव नहीं है यह एक ऐतिहासिक महाकाव्य है और वीररस प्रधान है तो स्वभाविक है कि युद्ध वर्णन में ललित भावों का प्रस्तुतीकरण संभव नहीं, अतएव प्रसंगानुकूल एवं अवसरानुकूल ओजो गुण की व्यंजना के लिये गौड़ी रीति का प्रयोग किया गया है ओजोगुण युक्त गौड़ीरीति का अवलोकन निम्नलिखित उदाहारण द्वारा प्रस्तुत है –

श्रुत्वैव भूमिपतिपत्न्यमिधाक्षराणि सर्वः स दस्युनिकरोभजतातिभीतिम् ।

लोके सदा मरणनिश्चितता हि तूर्णं वीराग्रगण्यमपि कर्षति विह्वलत्वम् ।। 12/60

डकैतों से युद्ध करतीं हुयी रानी की वीरता का अति ओजगुणमयी वर्णन किया गया है। चित्रण की सजीवता तथा प्रभावशालिता के लिये समास बहुल ओजोगुण से मण्डित शैली अत्यधिक आकर्षक बन गयी है।

दूल्हाजू के विश्वासघात करने पर "सुन्दर" का वीरता तथा क्रोध से परिपूर्ण यह श्लोक ओजयुक्त एवं कर्णकटु शब्दों से युक्त गौड़ीरीति का सुन्दर तथा प्रभावशाली उदाहरण द्रष्टव्य है–

पापीपतित्वारिविलोभ दुर्गतौ भक्त्वा तड़त्कारयुतं स तालकम् ।

स्वाधीनता डिम्भममारयन्नो ग्रीवां निपीडयामितनिर्घृण्णेश्वरः ।। 14/52

आपके संवाद बड़े ही ओज़पूर्ण है किस कटुता के साथ सुन्दर दूल्हाजू के विश्वासघात पर अपना क्रोध व्यक्त करती है। वास्तव में झांसीश्वरी चरितम् एक ऐसे बगीचे के समान है जिसके प्रत्येक अवयव प्रत्येक वस्तु को कवि के द्वारा खूब संजोया संवारा गया है। आपकी ओजमयी मनोहर शैली पाठक के हृदय को बलात् खींच लेती है।

पन्त जी जहां सुकुमार तथा कोमल श्रांगारिक एवं कारूणिक भावों के चित्रण करने में सक्षम है उसी प्रकार वे कठोर सांग्रामिक वर्णनों में भी पूर्णतया सिद्धहस्त है। ओजोगुण युक्त गौड़ी रीति के ऐसे अनेक उदाहारण हैं जो आपकी अप्रतिम प्रतिभा के परिचायक है।

झांसी की प्रजा को रानी की वीरता पर विश्वास है वह जानते है कि वह अकेली ही अंग्रेजों के लिये पर्याप्त है और वास्तव में अंग्रजो से हुये युद्ध के समय महारानी की वीरता के साक्षात् दर्शन होते है –

खड्गकर्त्तरिकया नृपांगना लूनशत्रुदलजंगलावनि :।

आत्म सैन्य सहिता कुशलात्मा पारमाप सरितो मुदाधिका ।। झां0च016/56

अंग्रेजों से हुयी मुठभेड. में रानी दुर्गा के समान शत्रुओं का नाश करती है। रौद्ररस से परिपूर्ण इस ओजयुक्त श्लोक का अवलोकन करें –

तन्वत्युदग्रं रूचिमण्डलं परं क्रोधेन वाष्पाविललोचनाम्बुजा ।

सा चिन्तयामास महाछ्लं नृपा तत्कल्पना हा सकलैव चूर्णिता ।।14/69

सामासिक पदों से युक्त ओज का परिपाक दसवें सर्ग के पश्चात् लगभग सर्व सर्गों में अधिक दिखाई पड़ता है उन्नीसवें सर्ग के इस श्लोक को देखिये सैनिकों सौन्दर्य में ओजगुण का कितना अच्छा परिपाक हुआ है –

तुमुलमुदभवद् द्राग् धाव धावेति घोरं मनसि भयमसीमं शात्रवाणां विवेश ।

मरणदृढ़मनस्कश्चैकतः पक्ष आसीत् प्रलयमुपगतो भूदेकतोसौ विपक्षः ।। 19/46

युद्ध के इस भयानक दृश्य में भी गौड़ी रीति का सुन्दर परिपाक हुआ है। ओज से परिपूर्ण रानी की वीरता का वर्णन देंखे –

गोलेषु भीषण तरेष्वहसं शतघ्नार्यश्चिक्रीड देवि गुलिकानिवहैर्भुशुण्डया ।

निस्त्रिंशकुन्तविशिखास्त्रशतशश्च सेहे वक्षस्यनागतभयं सहसा विमुच्य ।। 12/95

अपिच –

सङ्ग्रामसिंहस्य च राष्ट्रमेतत्प्रतापसिंहस्य च पुण्यभूमिः ।

वीराग्रगामी शिवराज एतद्रक्षां स्मरन् वै सुखवंचितो भूत् ।। 13/87

यह श्लोक देखें –

युद्ध्वा म्रियध्वं च दिनेशबिम्बं भित्वानुसन्धत्त च लोकमुच्चैः ।

शिष्टाश्च यावत्पतिताय तावद् दत्तारये क्रन्दनशोकमृत्यून् ।। 13/88

सैनिकों की संख्या न्यून होने पर भी रानी के चेहरे की प्रसन्नता कम न हुयी तथा वह वीरता के साथ तीव्र गति से निकलीं –

नृपानुगा पंचदशैव सादिनस्तदापि शिष्टाः स्मितमण्डिताननाः ।

अवार्यतां चक्रातस्य किं क्वचिद् गतामिमन्योरपि तादृशीं गतिः ।।20/97

पांचाली रीति –

विकटाक्षरवन्ध युक्त गौड़ी रीति और मधुर और सरस पंदावली से युक्त वैदर्भी रीति का समिश्रण ही पांचाली रीति है ' सरस्वती कण्ठाभरण '[1] में शब्द और अर्थ के अनुरूप शब्दों का गुम्फन हो वह पांचाली रीति है। आचार्य वामन[2] ने पांचाली के लिये माधुर्य एवं प्रसाद गुण ही आवश्यक माने है। तथा उसका लक्षण इस प्रकार दिया है –

अश्लिष्टश्लथ भावां तां पूरणच्छायया श्रिताम् ।

मधुरां सुकुमारां च पांचालीं कवयो विदुः ।। (काव्यालंकार)

पांचाली रीति के सम्बन्ध में आचार्य रूद्रट,[3] आचार्य भोजराज,[4] कविवर राजशेखर[5] ने भी भिन्न –

---

1. शब्दार्थयोः समो गुम्फः पांचालीरीतिरिस्यते ।। सरस्वती कण्ठाभरण
2. माधुर्यसौकुमार्योपपन्ना पांचाली ।। काव्यालंकार 2/13 वामन
3. वैदर्भीपांचाल्यौ प्रेयसि करुणे ।। रूद्रट काव्यालंकार
4. समस्तपंचषपदामोजः कान्तिसमन्विताम् ।
   मधुरां सुकुमारां च पांचालींकवयो विदुः ।। आचार्य भेजराज
5. वैदर्भी गौड़िया पांचाली चेति रीतियस्तिस्त्रः ।
   आसु च साक्षान्निवसति सरस्वती तेन लक्ष्यन्ते।। कर्पूरमंजरी राजशेखर

2 लक्षण तथा परिभाषायें दी हैं।

कविराज विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में पांचाली रीति का लक्षण इस प्रकार दिया है –

वर्णैः शेषैः पुनर्द्वयोः ।

समस्त पंचषपदों बन्धः पांचालिकमता ।। (साहित्यदर्पण 9/4)

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने अपने महाकाव्य में पांचाली रीति के गुण समिश्रण का भी आश्रय लिया जिससे यह महाकाव्य सर्वगुण युक्त होता हुआ आकर्षक बन गया है। पांचाली रीति का यह रूप द्रष्टव्य है–

भीष्मा घनाघनमटाः सहेसैव तत्र व्यापुर्नभःस्थलमुदग्रतमं पतन्तः ।

पश्चाद् गताः पुनरपि प्रययुस्तथाग्रे सक्ता मिथः क्वचिदतिस्थिरताम वापुः ।। 12/28

इसी तरह सत्ताइसवें श्लोक में पांचाली रीति के सुन्दर दर्शन द्रष्टव्य होते है यथा –

सख्यावपि द्रुतमनुव्रजिते पदाभ्यां सा संहतिः सरितमन्वकरोत्प्रकामम् ।

खड्गोर्भिनिश्च तनुसंभृतदीप्ति धारावृन्दैश्च वक्त्रजलजैश्च परं प्रकाशा ।।

यद्यपि वैसे पद्य की अपेक्षा गद्य में पांचाली रीति का अधिक प्रयोग किया जाता है तथापि सुबोध चन्द्र पन्त के पद्य में पांचाली रीति के अनेकों सुन्दर उदाहारण देखने को मिलते थे इस श्लोक को देखिये –

उत्पाटयन्ति हृदयं बहुवेग युक्तं शम्पायुधानि बहलं स्फुरणं वितेनुः ।

ध्वाना इव श्रुति मुपेयुरमुं बन्धान जह्वाशु तं गडगडायि ततः प्रकामम् ।। 12/29

पांचाली रीति से ओत प्रोत इस श्लोक का अवलोकन करें –

धाराशुगावलि रूदैद्वितता समन्तादापेन्द्रगोपरूधिरं वहदाशु वेगम् ।

वैरी वभूव गगनं धरणीतलस्य ब्रह्माण्ड मण्डलमभूद्व्रण भूस्वरूपम ।। 12/30

बारहवें सर्ग के ही इन श्लोकों को देखें

हिल्लोल संहतिरमज्जयदा शिरस्कं कर्णाननादिकरनं जलहासमाप ।

उत्पुप्लुवे जलचयस्तलतः प्रकामं झांड्कृत्य निर्झरशतं क्षरतिस्म वाढम्।। 12/42

पांचाली के माध्यम से डा0 सुबोध चन्द्र पन्त प्रकृति के इस भयंकर रूप को उभारने में अति सफल हुये है। और भी देखें –

दुद्राव तक्षक इवोर्मिगणोश्च सङ्घो दुद्राव शीध्रमनु तक्षक भक्षकामः ।

दुद्राव भूपति कलत्रमथ प्रजानां संरक्षकापमम सूंश्च पणीचकार ॥ 12/43

अपिच –

स्थित्वा क्षणं धृतवती वसानान्ताणि मेघान् क्षणं लघुतराननयद् दृगब्जम् ।

यस्ताः क्षणं च हरितासु मनोह्योपि रागं दधार तृणराजिषु दृष्टिगासु ॥ 12/46

बारहवें सर्ग की ही भांति चौदहवें सर्ग में भी पांचाली रीति के कुछ सुन्दरम् उदाहरण देखने को मिलते है। जिनसे प्रतीत होता है कि सुबोध चन्द्र पन्त गौड़ी, और वैदर्भी के साथ – 2 पांचाली रीति में भी कुशल रहे हैं। वैसे प्रमुखतः वैदर्भी रीति का ही प्रमुख रूप से प्रयोग हुआ है किन्तु गौड़ी तथा पांचाली रीति में भी पन्त की कुशलता दृष्टिगोचर होती है। चौदहवें सर्ग के पचहत्तर, उनहत्तर, चौरासी तथा सतासी इन श्लोकों को देखें।

घोरः कृपाणोनृपतीश्वरी करे भीष्माट्टहासेन समं महारयः ।

वर्षन्नदभ्रां विबभौ शिखावली शत्रून् विरक्ती कृतवान रणाङ्गणे ॥ 14/75

अपिच –

अत्राकरोद्धातमुदीर्णकम्पनं तत्राकरोद् धातमनल्पविप्लवम् ।

भागोभवन्नो समरस्य तादृशो यत्राकरोद्धातमहो न चंडिका ॥ 14/78

इस श्लोक को देखें –

जिह्वायझञ्झा क्षितिपालिनिरीयान्नागी ततश्च क्षितिपालिनीरयात्।

जग्लौ हरिस्त्री क्षितिपालिनीरयाच् छम्पा चकम्पे क्षितिपालिनीरयात्॥ 14/84

और भी –

द्विड्द्रोण सूनोरपहृत्य धाम वह्नाक्षिप्य राज्ञीद्रुपदात्माजातुषत्।

सन्तानहत्या प्रतिशोधतस्ततोरोषश्च भीष्मः शमनं मनाग्गतः॥ 14/87

एक श्लोक में सम्पूर्ण चित्र के खिंचने से वास्तव में इस महाकाव्य में चित्र की एकात्मकता ध्वनित होती रही है ऐसे चित्र युद्ध के समय मुख्य रूप से देखे जा सकते है।

इस तरह डा० सुबोध चन्द्र पन्त ने वैदर्भी रीति को विशेष रूप से अपनाते हुये गौड़ी तथा पांचाली को भी अपने महाकाव्य में अति रमणीय रूप में प्रश्रय दिया है।

पदलालित्य –

पदों मे परस्पर मैत्री से पदलालित्य उत्पन्न होता है। पद इतने नपेतुले एवं अडिग होते हैं. कि वे अपने स्थान से हटाये नहीं जा. सकते। केवल भाव ही नहीं भाषा भी कवि कौशल का निदर्शन है। सरल से सरल, सरस मधुर कोमल कान्त पदावलित भाषा में अभिव्यक्त भाव जितना प्रभावोत्पादक होगा, जितना अन्तस्तलस्पर्शी एवं सहृदयग्राही होता है, जितनी शीध्रतासे पाठक के मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ता है उतना कृत्रिम अलंकृत समासान्त क्लिष्ट पदावलीवलित भाषा में कदापि नहीं। कोमलकान्त पदावली के माध्यम से अभिव्यक्त भाव व रस ही सफल काव्य के उपकरण माने जाते है। अनुप्रास की छटा ऐसे स्थानों पर विशेष रूप से पाठकों को मनोरंजन कर झटिति हृदयग्राही बन जाती है शब्दों की संगीतात्मक एक रसता वीणा की झनकार की भांति हृदय को रसाप्लुत बना डालती है। रमणीक पदावली का अवलोकन करें –

चुलुकच्युतबिन्द्वाली यासीत् सैवर्क्षसञ्चयः ।

गर्त एव मृगांकस्थः सोऽङ्कनाम्ना प्रकीर्त्यत ।। 3/15

अनुप्रास पर आश्रित अनुष्टुप् की यह अनुपम छटा सुबोध चन्द्र पन्त जी के पदविन्यास की विशेषता है। मनु के सौन्दर्य का माधुर्य युक्त यह चित्रण देखिये –

चन्द्रो वेत्यम्बुजं वेति वेत्तुकामाथवाननम् ।

स्थेमानं दधती शीर्षदुर्गेल्याल्यहिनोच्चरम् ।। 3/29

शाब्दिक और आर्थिक चमत्कार के उत्पादक अलंकारो से सुसज्जित पदविन्यास ही सच्चे काव्य का निदर्शन है। पन्त जी ने अपने काव्य को एक गुलदस्ते की भांति विभिन्न रंग विरंगे पुष्पों के मंजुल मिश्रण से तैयार किया है जो विदग्ध जनों के, काव्य मर्मज्ञों के मनोविनोद की नयनाभिराम कलात्मक वस्तु होते है कवि में वस्तु के अन्तस्तल को परखने की अपूर्व क्षमता है तथा उन्हें रमणीय एवं आकर्षक शब्दों में प्रस्तुत करने की अद्भुत कला है। पन्त जी की रमणीय भावना का उदाहरण –

महिषहृदयभेत्री शान्तिदा सास्ति दुर्गा ।

नवविहसन दीप्ता कान्तिदा सास्ति लक्ष्मीः ।।

क्षितिधर पति पुत्री सौख्यदा सास्त्यपर्णा।

त्रिभुवननिहिता सा भातिसर्वा समृद्धिः ।।3/44

पदावली इतनी स्निग्ध है कि कहीं भी अनमेल शब्दों का प्रयोग नहीं दिखता है।

इसमें संदेह नहीं कि सुबोध चन्द्र पन्त जी ने ललित मनोरम शब्द योजना, वस्तुविन्यास चातुर्य और प्रस्तुतिकरण में अपनी अपूर्व क्षमता का परिचय दिया है।

आपने कुछ सर्गों में समास रहित कोमलकान्त पदावली का अति सुन्दर समन्वय कर पदलालित्य के क्षेत्र में सफलता प्राप्त की है।

दशम् सर्ग में कुछ कारूणिक उक्तियों में भी अपूर्व पदलालित्य दृष्टव्य होता है यथा –

मन्यमानस्तनूजं मां को निर्बन्धं सहिष्यते।

मद्वप्रे दास्यते को वा दर्शनं मानमात्मना ।। 10/23

इस प्रकार पदलालित्य की दृष्टि से ऐसे अनेक उदाहरण है जो उत्कृष्ट तथा चमत्कारपूर्ण है अतः पदविन्यास की दृष्टि से पन्त जी एक सफल कवि सिद्ध हुये है।

प्रकृति के चित्रण में एकाकी युक्त पदों के इस लालित्य का दर्शन करें/–

शेभिता पथि पथि द्रुमराजी राजिता दलतती द्रुमे द्रमे।

मण्डितः खगदलों दले दले गानवृन्दमदितं खगेखगे ।। 16/5

रानी के सौन्दर्य चित्रण में पदों की कोमलता, मनोहरता तथा रमणीयता दर्शनीय है –

हरिणावरूणा वोष्ठौ बिम्बपल्लव सञ्चयौ ।

हासा भान्त्यत्र शम्पाया हिमस्योन्मेषणैः समाः ।। 3/32

इस मालिनी छंद में पदों की मनोहरता देखिये –

जयतु जयतु रूद्रश्चकधारी विधाता, जयतु जयतु चण्डी भानुजा राष्ट्रमम्बा।

जयतु जयतु नानाराव उर्वीश पत्नीत्यंदित कलकलो द्राक् शत्रवे ध्वंसमुग्रम।। 19/39

रानी के सौन्दर्य के इस श्लोक का अवलोकन कीजिये –

वेद्मि नो सप्रयत्नोपि कज्जलं वक्त्रभूषणम् ।

कज्जलाभूषणं वक्त्रं यद्वोभे भूष्यभूषणे ।। 3/30

लालित्य से युक्त मनु के इस शिशु रूप को देखिये –

चांचल्यं नीतयोरक्ष्णोर्मंत्रिजम्नः सीभ लुप्यति ।

वालाजिमृगपोतस्य तदा योग्योपमाप्यते ।। 3/9

इन श्लोको में कोमल पदशय्या के प्रयोग से काव्य अति कोमल आह्लादक एवं सरस बन गया है।

छन्दः–

भारतीय और पाश्चात्य दोनों ही साहित्य मनीषियों ने काव्य कला के विभिन्न उपकरणों में छन्द योजना को पर्याप्त महत्व प्रदान किया है। वास्तव में कविता हमारे प्राणों का संगीत है। छंद हृप्कम्पन–कविता का स्वभाव ही छंद में लयमान हो जाना है। जिस प्रकार से नदी के तट अपने बंधन से धारा की गति को सुरक्षित रखते है, जिसके बिना वह अपनी ही बंधन हीनता में अपना प्रवाह खो बैठता है, उसी प्रकार छंद भी अपने नियंत्रण से राग को स्पंदन, कम्पन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दों के रागों में कोमल कलरव भरकर उन्हें सजीव बना देते है। वाणी की अनियंत्रित सांसे नियंत्रित और तालयुक्त हो जाती है, उन्हें स्वरों में प्राणायाम और रोओं में स्फूर्ति आ जाती है। राग की असम्बद्ध झंकारे एक वृत्त में बंध जाती हैं उनमें परिपूर्णता आ जाती है। हिन्दी कवि पन्त जी का यह कथन सर्वथा सत्य ही है। छंद प्रकृति की वाणी हैं मनुष्य ही नहीं वरनः पशु–पक्षी तक इसकी लय लहरियों में डूबने उतराने लगता है। छन्दोवद्धपद्यभाव मानव मस्तिष्क पर जितनी शीघ्रता से प्रभाव डालता है उतना गद्य नहीं। छन्दोंवद्ध रचना जहाँ आकर्षक, सुमधुर एंव चंमत्कारपूर्ण होती है वहाँ वह दीर्घजीवी भी हो जाती है। वेदों के अमर होने का कारण उनकी छन्दोमयता ही है। अतः छन्द जितना सरसता के लिये आवश्यक है उससे अधिक उपयोगिता की कविता को वर्ण, मात्रा , लय, गीत आदि नियमों से आबद्ध करने के लिये जिस शैली को अपनायाजाता है उसे समुचित शैली कहा जाता है यह शैली ही काव्य में छंद व्यवस्था करती है। समस्त विधाओं का मूल वेद है और छंदःशास्त्र वेदों के छैः अंङगो में से एक है। छंद नामक वेदाङ्ग को वेद पुरुष के दो पैर कहा जाता है–

" छन्दः पादौ तु वेदस्य।" *(पाणिनीय शिक्षा)*

यास्क ने 'छन्द' की व्युत्पत्ति 'छदि' धातु से की है। छन्द का ज्ञान मानव के लिये परमावश्यक है जिसप्रकार लोक में मनुष्य बिना पैर के पंगु है उसी भाँति बिना छन्दःशास्त्र के ज्ञान के काव्य लोक में मनुष्य पंगु के समान है। 'यास्क' तथा 'कात्यायन' ने कमशः छंद का लक्षण इस प्रकार दिया है–

" छंदासि छादनात्।" *(निरुक्त)*

' यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः ' *('सर्वानुकमणी ')*

वस्तुतः छन्द काव्य के संगीत धर्म है। कविता में जो ताल और लय की अभिवृद्धि होती है वह छंदों के ही माध्यम से हुआ करती है।

छन्द की परिभाषा –

छन्द उस रचना का नाम है जिसमें यति, गति, वर्ण या मात्रा आदि की गणना की गयी है। अर्थात जिसमें वर्णो और मात्राओं की संख्या निश्चित हो एवं स्वर साम्य के लिये, जिसमें यति गति आदि का निश्चित विद्यान हो। ऐसी ही रचना छन्द अथवा पद्य कहलाती है।

छंद के भेद –

वेदों एवं प्रतिशाख्य ग्रंथो के ही गुण में छंद विद्यान आरंभ हो गया था। सर्वप्रथम गायत्री, उष्णिक, त्रिष्टुप् आदि सात छंद थे। ये ही छंद विकास प्रवाह में बढ़ते हुये अनेक शब्दों के जन्म दाता बने। संस्कृत की इस विकास परंपरा में वर्णिक छंदो का निर्माण हुआ। प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य में मात्राकाल के नियमानुसार मात्रिक छंदो का विकास हुआ। अग्निपुराण चार चरण वाली रचना को पद्य कहता है। नियताक्षर संख्या को वृत्त और मात्रा गणना को जाति कहा गया है। यहीं से मार्मिक छंद का विकास प्रारम्भ होता है। छन्दो मंजरी[1] में इसी को मान्य किया गया है –

वृत्तरत्नाकर के अनुसार छंद के दो भेद–वैदिक और लौकिक किये गये है। लौकिक छंद के दो भेद किये गये है[2] –

1. वर्णिक – वृत्त – वर्ण की संख्या एवं लघु गुण का स्थान निश्चित हो।
2. मात्रिक – जाति – जिनमें वर्णो की विषमता होने पर भी मात्राओं की संख्या निश्चित रहती है।

छंद शास्त्र में वृत्त के तीन भेद किये है –

1. सम – जिसमें चारों चरणों में समान लक्षण लक्षित हों।
2. अर्द्धसम – प्रथम और तृतीय में समान तथा द्वितीय और चतुर्थ में समान अक्षर हो
3. विषम – चारों चरणों में एक दूसरे से भिन्न लक्षण लक्षित हों।

---

1. पद्यं चतृष्पदं तच्च वृत्तं जातिरिति द्विधा।
वृत्तमक्षरसंख्यातं जातिर्मात्राकृता भवेत् ।। ‘ छंदोमंजरी ’

2. पिंगलादिभिराचार्यैः यदुक्तं लौकिकं द्विधा ।
मात्रावर्ण विभेदेन छन्दस्तदिह कथ्यते ।। वृतारत्नाकर
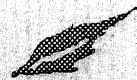
काव्य में नियमित छन्दों का होना आवश्यक है अथवा काव्य की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी संगीतात्मकता अक्षुण्ण न रह सकेगी । शास्त्रीय विधान का पालन करते हुये पन्त जी ने अपने ऐतिहासिक ग्रंथ 'झांसीश्वरी चरितम्' में प्रति सर्ग में एक ही वृत्त का श्लोक तथा अन्त में भिन्न वृत्त का श्लोक रखते हुये अपने काव्य में छन्दोमयता का पूर्ण परिचय दिया है। इस क्रम में कुछ शैथिल्य है। आपका काव्य छंद की स्वर लहरियों में तैरता हुआ पाठक को हठात् ही अपनी छन्दोमयगति में आवद्ध कर लेता है।

पन्त जी ने अपने काव्य में प्रथम सर्ग से अन्तिम सर्ग पर्यन्त इन्द्रवज्रा, द्रुतविलम्वित, वसन्ततिलका अनुष्टुप्, मालिनी, उपेन्द्रवज्रा, वंशस्थ, स्रग्धरा, हरिणी, वियोगिनी, रणोद्धता, शार्दूल विक्रीडति आदि छंदो का प्रयोग कर काव्य को पूर्णतः छन्दोमय बनाने का सफल प्रयास किया है उदाहारण सहित इनका परिचय द्रष्टव्य है –

1. अनुष्टुप् –

अनुष्टुप् छंद के प्रत्येक चरण में आठ अक्षर होते हैं। कुछ विद्वानों ने अनुष्टुप को पद्य[1] तथा श्लोक[2] भी माना है। इस छंद के प्रत्येक चरण में आठ अक्षर होते है। प्रत्येक चरण का छठां अक्षर गुरू और पांचवां अक्षर लघु होता है। द्वितीय और चतुर्थ चरण का सातवां अक्षर लघु तथा प्रथम एवं तृतीय चरण का सातवां गुरू होता है। शेष अक्षरों के लिये कोई नियम नहीं किया गया हैं।

अनुष्टुप छंद का प्रयोग वर्णन को रूचिर तथा शैली को मंजुल बनाने के लिये किया गया है।

देखिये –

मोरोर्विप्रस्य कन्यामैद् ,

द्रष्टुं सश्रद्धमालिभिः ।

दृशोः सफलतां मेने

---

1. पद्य का लक्षण – पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्विचतुर्थयोः ।

षष्ठं गुरू विजानीयादेतत्पद्यस्य लक्षणम् ।।

2. श्लोक का लक्षण – श्लोके षष्ठं गुरू ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमं ।

द्विचतुष्पादयेर्हस्वां सप्तमं द्विचतुर्थयोः ।।

ताभ्यां दत्त्वाग्रमौक्तिकम् ।। 3/47

महारानी लक्ष्मीबाई के जन्म का उदाहरण द्रष्टव्य है–

स्वसा जाता स्वसा जाता मम कीदृक प्रिय प्रिया।

एहिपश्य त्वमप्यत्र सर्वभिन्ने यमस्यहो।। 3/1

इस श्लोक के प्रत्येक चरण में आठ अक्षर हैं तथा प्रत्येक चरण का पांचवां लघु तथा छठां गुरु है तथा द्वितीय, चतुर्थ चरण का सांतवां लघु एंव प्रथम, तृतीय का सांतवां गुरु है।

पन्त जी ने छन्दों का प्रयोग कर संगीतात्मकता लाने का पूर्ण सफल प्रयास किया है। इस महाकाव्य के सप्तम सर्ग, अष्टम सर्ग, दशम सर्ग में अनुष्टुप् छंद प्रयुक्त हुआ है। सप्तम सर्ग का उदाहरण देखिये–

श्री ताप्यादीक्षितो भूपं गंड्गाधरमुपागतः।

आतिथेयस्य भाग्याय सर्व ईर्ष्याम्बिभूवं ना।। 7/1

इसी प्रकार इस सर्ग के श्लोक न0 21[1] , 22[2], 43[3] अनुष्टुप छंद के लिये पठनीय है।

अनुष्टुप छन्द कई सर्गों में प्रयुक्त हुआ है। अष्टम सर्ग में प्रयुक्त अनुष्टुप छंद का उदाहरण देखिये–

कृष्ण कौशेयकेशोयं मञ्जिजम्ना शोभते परम्।

वृता चीनांशुकेनालं भाति शीर्षसुमाल्यपि।। 8/9

दशम् सर्ग से –

हा राज्येन किमुर्व्या किं वन्धुभिः किं महाशय ।

सह त्वयैव भूता मे समाप्तिः सौख्यसन्ततेः ।। 10/3

---

1. *गेहरत्नं तनूजो वै तेनैवास्ति कुलोद्धृतिः।*
   पठ्यते भारते काव्ये सुतहीना कि पापिनः ।। 7/21.
2. *इति वृत्तं वदत्येव पुराणं चापि तन्मतम् ।*
   द्वित्वा सुकृति सन्तानं निरये पच्यतेसुतः ।। 7/22
3. *रत्नाकर समुत्थेव रमा प्रत्यग्रमन्थनात् ।*
   स्फुरन्तीव च रेजे सा चंचला मेघजालतः ।। 7/43

इसी प्रकार सर्ग आठ तथा दशम से निम्न श्लोक 2[1], 3[2], 1[3], 6[4] इत्यादि श्लोक भी अनुष्टुप् छंद से आच्छादित हो अच्छे बन पड़े हैं – वीसबें सर्ग का यह उदाहरण देखें –

वसुपुराणाख्य

हेशाब्देदं दिनं दधात् ।

उपदां विपदामेतां

ददन्नो धिङ्न लज्जितः ।। 20/124

2. इन्द्रवज्रा –

महाकाव्य के प्रथम सर्ग में पन्त जी ने इन्द्रवज्रा छंद प्रयुक्त किया है। जिसका लक्षण इस प्रकार दिया गया है। "इन्द्रवज्रा छंद के प्रत्येक चरण में 11 अक्षर होते है। तथा प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और अन्त में दो गुरू होते है।[5] उदाहरण –

शक्तिः समस्तस्य भवस्य सर्वा या वर्त्तते प्रत्यणु जीवसङ्घे ।

लब्धवैव यद्भास्वर भावमीषन्नेत्रद्वयं भास्वरतां तनोति ।। 1/1

इन श्लाकों में पन्त जी ने शक्ति के समस्त रूपों की स्तुति अति सुन्दर शब्दों में की है। पन्त जी ने परम्परागत छन्दों का प्रयोग किया है। छन्दों की दृष्टि से झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य बलरवाती नदी की भाँति प्रवाहित होता हुआ दृष्टि गोचर होता है। इन्द्रवज्रा का एक और अन्य उदाहरण दृष्टव्य है –

---

1. *विलोक्यत इतो लक्ष्वीं वरप्रकाखेष्टिता ।*

   श्रेष्ठव्यूह निबद्धेव राज सेना सुरक्षिता ।। 8/2

2. *कस्तूरीव जनानां ते स्वान्ते वसति विश्रुतिः ।*

   सर्वे श्रृद्धायुतास्त्वां प्रत्यत्र प्रान्ते नरीनराः ।। 8/3

3. *अयिस्वामिन् सहायो हा कोवशिष्टोद्य मामकः ।*

   दत्तवानसि मय्यद्य जीवनावधि रोदनम् ।। 10/1

4. *भविस्येहो क आगत्य सहायो भविता मम ।*

   अगच्छस्त्वं दिवं नाथ कृत्वानाथामतीव माम् ।। 10/6

5. *स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः । (वृत्तरात्नाकर) (छंदोमंजरी)*

ऊष्मा समेत्य प्रतिनाडि यस्या रक्तं सदा रेपयते समन्तात्।

लोकः समग्रो विततेषु मायापाशेषु यस्याः पततीहं तूर्णम्।।   1/2

प्रथम सर्ग से ही श्लोक न0 7[1], 23[2], 24[3] इत्यादि ऐसे अन्य उदाहरण हैं जो आपके काव्य में छन्द चातुर्य के प्रतीक है। त्रयोदश सर्ग में भी आपने इन्द्रवज्र छंद का प्रयोग किया है। जैसे–

शोकाम्बुधौ सा निममज्ज झाँसी क्षणं क्षणं हर्षणवारिधौ च।

जयो भवेदत्र पराजयो वेत्यक्षाम्यदन्तः करणं समेषाम्।।   13/1

इन छन्दोमय श्लाकों के पठन पाठन से ज्ञात होता है कि आपने अपने काव्य में अति सुन्दर छन्द विद्यान किया है। इक्कीसवीं सर्ग के प्रथम श्लोक का अवलोकन करें –

दासेन रामेण निरीक्ष्यमाणाराज्ञी विसंज्ञा पतितां शयान्तः ।

चित्रैश्चलदिभः स्फुरितान्तरात्मा स्वप्नायमाना निजगादं सेत्थम् ।।21/1

3. द्रुत विलम्बित –

महाकाव्य के आचार्यो द्वारा स्वीकार किये गये सर्ग के अन्त में भिन्न छंद के प्रयोग का इस महाकाव्य में सर्वथा पालन किया गया है। पन्त जी ने अपने प्रथम सर्ग के अन्तिम श्लोक को द्रुतविलम्बित छंद से सजाया है।

द्रुतविलम्बित छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, भगण, यगण और रगण होते है। इसके प्रत्येक चरण में 12 अक्षर होते है[4] उदाहरण –

---

1. *या चण्डमुण्डौ विनिहत्य कुण्डौ। चामुण्डया ख्यातिमियाय नाम्ना ।*
   पापद्विदन्तस्य विसारशुण्डां सत्ताविलोपाय सदा चकर्त्ते ।।   1/7
2. *नारीप्रभाबीजमुदेत्य जीजाबाई यदीयः किरणो रराज ।*
   यस्यास्तनूजः शिवराज एको यः पावयामास जगत्समग्रम् ।। 1/23
3. *दुर्गा महाराष्ट्रधरित्रिदुर्गा यद्रश्मिरेकः सुतया सहैव ।*
   मुक्त्येद्य उज्ज्वलायितुं पपात तूर्णं सजामातृकमिद्धहासम् ।।   1/24
4. *द्रुतबिलम्बित माह नभौ भरौ । (वृत्त. छन्दो.)*

उपचिनोषि सुनिर्मलतां सदा

यदभिधामभिगम्य सरस्वति ।

मम मनोतिथितां नय तां द्रुतं।

तनुभृतं शुभधाम पराक्रमम् ।। 1/30

द्वितीय सर्ग में भी द्रुतविलम्बित का मनोहर रूप हमारे समक्ष उपस्थित होता है – यथा–

सुमनसामनकुवदिवान्तरं विषयजालमति प्रसरं तथा।

मणिशिलाफलकोपममुत्तमं वियदसीमविभं विततं बभौ।। 2/1

एक और अन्य श्लोक आपकी प्रतिभा का सुन्दर उदाहरण है –

समसरन्नमिता द्युतयो हरित्स्वमरलोक इव प्रभवौ नमः ।

उपविवेश पराप्य सभापतिमुडुसभं शशिनः श्रियमम्बरे ।। 2/10

वास्तव में उपर्युक्त छंद ने प्रकृति को अति सुकुमार बना दिया है प्रकृति के चित्रण में कवि ने इस छंद का मनमोहक रूप प्रस्तुत किया है द्वितीय सर्ग के 7[1], 9[2], आदि श्लोक भी द्रुतविलम्बित छंद के प्रयोग से सुन्दर बन पड़े हैं।

4. वसन्ततिलका –

द्वितीय सर्ग के अन्तिम श्लोक में वसन्ततिलका छन्द का प्रयोग किया है। इसके प्रत्येक चरण में एक तगण एक भगण और अन्त में दो गुरू होते है। वसन्ततिलका के प्रत्येक चरण में 14 अक्षर होते है।[4] उदाहरण देखिये –

युग्मेविशद्विशदमुत्तममाशु तेजो

---

1. *उततमां परिधाय करैर्विधोरूड्डगणैः प्रसितैरूत शाटिकाम् ।*

   शशिमुखी रजनिर्जगतोधिकं सततमेव ननर्त्त सुखावहा ।। 2/7

2. *उत भविष्यति गौरतनूजुषां ध्र वमवेक्ष्य समाप्तमितः परम् ।*

   विचितानि समाधिशतान्यलं शुशुभिरे परमं सुर शिल्पिना ।। 2/9

3. *उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः । (वृत्तरत्नाकर)*

   ज्ञेयं वसन्त तिलकं तभजा जगौ गः ।। (छन्दोमंजरी)

हर्षस्य लोचनपथं न जगाम सीमा।

दिव्येन दुन्दुभिरवेण नमः पुपूरे

पुष्पोत्करेण धरणी च गतो विषादः ।। 2/60

सर्ग षष्ठ में वसन्ततिलका का उदाहरण –

दिव्यं स्वरूपमथ तन्मनसापि पश्यन्

दिव्यं प्रभाववलितत्वमुवाह विद्वान्।

दिव्यः प्रवाह उद्गाद् द्रुतमेव कश्चित्

तापत्रयं यत उवाह भवात्सुदूरम् ।। 6/50

वीररस युक्त वसन्ततिलका का उदाहरण हमें नवम सर्ग के 38[1] वें श्लोक में देखने को मिलता है। वीरता से युक्त यह छंद अपनी गति में पाठक के हृदय को वरवस ही अपनी ओर आकृष्ट कर उसे उत्साह से भरने में पूर्ण सक्षम है।

इसी भांति पंत जी ने अपने द्वादश सर्ग में 1[2], 10[3] तथा ऊनविशं सर्ग में 51[4] में भी वसन्ततिलका का प्रयोग छन्दों में वर्ण, मात्रा, ताल, लय, गति, यति आदि का विशेष ध्यान रखा है।

वीसवें सर्ग में पन्त जी ने महारानी लक्ष्मीबाई के मृत्यु श्लोक मे वसन्ततिलका का अति सुन्दर प्रयोग किया है। उदाहरण द्रष्टव्य है–

अष्टादशाह खलपुङ्.गव जूनमासे रोद्यामहे न चद्रशाह विलोक्यतेनः ।

नास्या अभावि तव तुष्टय ईर्मकोषैर्दैदीयते हृदयधात शतानि यन्नः ।। 20/23

---

1. *वीराग्रणीस्त्वरितमड.गमड.गणं या , चक्रे रणाड.गमनल्पमुदग्रमूर्तिः ।*
   तस्या जयध्वनिरभूत्क्षितिपाड.गनाया, आसादयज्जनगणो गरिमाणमुच्चैः ।। 9/38
2. *राज्ञ्येकदा गतरवोपविवेश गेहे दासीतती तनुमती रवहीनताग्रे ।*
   रेखागणो मुखशशिन्युदियाय चिन्तासंसूचको ग्रसनलग्न इवेंन्दुशत्रुः ।। 12/1
3. *झालाप्रताप शिवराजमुखस्य वीरव्यूहस्य तु प्रथितमस्ति यशोनवीनम् ।*
   तस्याधुनापि समरैकरसेन सर्वाः सौरभ्यसारलसिता भरताचलाशाः ।। 12/10
4. *क्लान्ता भटा भरतभूम्यवने नियुक्ताः शत्रुव्रजश्च नवशवित्तसमन्वितोभूत् ।*
   शोषापि सा प्रभवति स्म गुरुण्डसेना योद्धुंविचित्रगतिरस्ति सदा विधाता ।। 19/51

5. मालिनी –

इसके प्रत्येक चरण में दो नगण, एक मगण तथा दो यगण होते है। प्रत्येक चरन में 15 अक्षर होते है।[1] झांसीश्वरी चरितम् के तृतीय, ऊनविशं, सर्ग में मालिनी छंद का प्रयोग किया गया है। तृतीय सर्ग का उदाहरण –

महिषहृदयभेत्री शान्तिदा सास्ति दुर्गा ।
नवविहसनदीप्ता कान्तिदा सास्ति लक्ष्मीः ।।
क्षितिधर पतिपुत्री सौख्यदा सास्त्यपर्णा ।
त्रिभुवन निहिता सा भाति सर्वा समृद्धिः ।। 3/44

उन्नीसवें सर्ग में 49 वें श्लोक तक मालिनी छन्द ही प्रयुक्त हुआ है। जिसके कुछ ही उदाहरण देना संभव होगा –

व्यलपदतिचिरं सा निर्जनं प्राप्य राज्ञी,
नयनयुगमसीमं दाहमन्तः पराप ।
अभवदधिकशोथं सापि खिन्नातितान्ता,
शयनमगमदाशु प्राप निद्रापि सा ताम् ।। 19/1

अपिच –

शिखरि शिखर पृष्ठात्प्राभृतं रत्नपात्रं ललितमुपनयंस्तच्छीध्रमागात्प्रभातम् ।
अविशदधिधरं तद् नैजराष्ट्रद्वनवृन्दं स्वदुरितभरतान्तं दूयमानं नितान्तम् ।। 19/3

मालिनी छन्द से छन्दों बद्ध भाषा का अति सुन्दर उदाहरण हमें देखने को मिलते है यथा–
कलकल उदभूद्द्रागृष्ट्यः कोषमुक्ता वियदसमय एवायोजयन् विधुदाल्या ।
झणिति खणिति रावं युद्धवाद्यानि कृत्वा सुरपुरमहिलोकं व्याप्तवन्ति प्रकामम् ।। 19/17

पन्त जी ने इस सर्ग में 49 वें श्लोक तक मालिनी छंद का अति मनोहर प्रयोग किया है। जिनमें वीररस युंक्त कुछ श्लोक उन्तालीस[2], छयालीस[3] इत्यादि भी आपके छन्दों के पारखी होने का चूड़ान्त निदर्शन हैं। वास्तव में युद्ध वर्णन छंद लोमहर्षक तथा उत्तेजना पूर्ण हैं। इस श्लोक का अवलोकन करें।

---

1. *ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः । (वृत्त0 छन्दो0)*
2. *जयतु जयतु रूद्रश्चक्रधारी विधाता जयतु जयतु चण्डी भानुजाराष्ट्रमम्बा ।*
   जयतु जयतु नानाराव उर्वीशपत्नीत्यदित कलकलो द्राक् शत्रवे ध्वंसमुग्रम् ।। 19/39
3. *तुमुलमुदभवद् द्रागृधाव धावेति घोरं मनसि भयमसीमं शात्रवाणां विवेश ।*
   मरणदृणमनस्कश्चैकतः पक्ष आसीत् प्रलयमुपगतोभूदेकतोसौ विपक्षः ।। 19/46

मृतिमुपगतवन्तों मृत्युदूता अपीद्धा यमपुरगपतित्वं तत्छतद्दन्योसहायाः।

भरतधरणिवीरास्तेनिरे स्वाट्टहासं प्रतिरव उदगच्छद् हन्त तत्तोपि चण्डः ॥ 19/48

1. उपेन्द्रवज्रा। --

उपेन्द्रवज्रा के प्रत्येक चरण में 11 अक्षरों होते हैं तथा प्रत्येक चरण में एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गरू होते है।[1] झांसीश्वरीचरितम् के पांचवे छठवे सर्ग में यह छन्द प्रयुक्त हुआ है, कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है –

न तिष्ठ भल्लस्व रिपुं प्रकामं भटेति भल्लस्य वचः सुतीक्ष्णम्।

यशांसि शौर्याकर पालय त्वं सदेति वादी करपाल उग्रः ॥ 6/1

अपिच –

ग्रहा यथास्या बलिनस्तथैव बलीयसी वास्ति ततोपि वाणी ।

इयं स्वरूद्रं क्व धरातलेत्र लभेत रूद्राव्यसमप्रभावा ॥ 6/8

काव्य में छन्दों की स्थिति नदी के किनारों जैसी हैं। ये ही भावों की भाषा में व्यक्त होने पर सरस एवं सरल प्रवाह प्रदान करते है। छन्दों द्वारा भावों को सजाने का कार्य अति कुशलता से किया गया हैं – कुछ और उदाहरण प्रस्तुत है –

बुधस्य काश्या गणकस्य कीदृक् फलावलम्बी ग्रहगोचरोयम् ।

प्रतापिताकोकनंद च कीदृग्विकासमस्या गतमास्य वाप्याम् ॥ 6/9

इसी भांति उपेन्द्रवज्रा के 11[2], 14[3], 20[4] इत्यादि श्लोक अनुपम अदाहरण है। पंचम सर्ग से कुछ

---

1. ' उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ ' (वृत्त०)

" उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा " (छन्दो०)

2. समानधर्मा तु पराक्रमिण्या भवेत्स झांसीश्वर एव युक्तम् ।

स एव तेजोज्वलितान्तरीदृक् स एव दुःसाहस चण्डकर्मा ॥ 6/11

3. सभा तु जाता विकसन्मुखाब्जा प्रमुत्समेषां न ममौ मनःसुं ।

गतागतं शीध्रम भूत्प्रचारस्तदावरोधेपि महोत्सवस्य ॥ 6/14

4. रमा हरिं प्रात्य च रेवती सा पराप्य नीलाम्बरमुद्गत श्रीः ।

शिवं शिवा च प्रमदालसास्ति समस्तवाञ्छापरिपूरणेन ॥ 6/20

उदाहरण –

प्रयाव काश्या अयि लालिते द्राक् क्रीडष्यसि त्वं सह तत्र नाना ।

दक्षा भविष्यस्यधिगत्यं रीति बाला च रावेण सम सभायाः ।। 5/2

2. रथोद्धता –

रथोद्धता के प्रत्येक चरण में रगण, नगण, रगण लघु और गुरू होता है। इसके प्रत्येक चरण में 11 अक्षर होते है[1]।

इस काव्य में सोलह तथा अठारह सर्ग में रथोद्धता छन्द कवि के द्वारा प्रयुक्त हुआ है।

सोलहवें सर्ग से एक उदाहरण का अवलोकन करें–

ऐव्प्रभातमध रम्यमम्बरे प्रासद्दिनमुखास्य रक्तिमा ।

मंजिमोपरि च निम्नतो द्रवन् व्याप वेगवलितस्त्रिजगत्सः ।। 16/1

अपिच –

शर्वरीं तमिचरा इव कृत्वा राज्यमाशुं शुचिशुक्चयागताः ।

तामसाः सम उपद्रवा गता ईरितानि च गतानि पशूनाम् ।। 16/10

अष्टादश सर्ग से इस श्लोक का रथोद्धता के लिये अवलोकन करें।

चार आगत उवाच चाम्ब हा नूतना च घटनाशुभा च में।

साम्प्रतं स्वहृदयं पवीकुरू श्रोतुमेतदखिलं विपत्परम् ।। 18/1

अपिच –

नीतवान् स सित नायको द्रुतं नीचकर्मनिरतः पुरीं तव ।

उद्बबन्ध खलतां प्रदर्शयन् सद्मनः पुरतएव तस्य तम् ।। 18/6

3 वंशस्य –

जिसके प्रत्येक चरण में एक जगण, एक तगण, एक जगण और एक रगण हो उसे वंशस्य छन्द कहते है। इसके प्रत्येक चरण में 12 अक्षर होते है।[2]

---

1. " शन्नराविन्ह रथोद्धता लगौ " (वृत्त0)

" शत्परैर्नरलगैः रथोद्धता " (छन्दो0)

2. " जतौ तु वंशस्थ मुदीरितं जरौ " (वृत्त0)

" वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ " (छन्दो0)

वंशस्थ छन्द इस महाकाव्य में नवम् तथा एकादश, विशं सर्ग में प्रयुक्त किया गया है। नवम् सर्ग से इस श्लोक का अवलोकन करें –

शशांकमुख्या मुखमाप शोभितां सखीभिरेभिधृतिभक्तिरक्तिभिः ।

तथा प्रभां विन्दत ओषधाधिपो यथा कलाभिः सकलाभिरुज्ज्वलाम् ।। 9/3

अपिच

"कलावतीर्णाइव ता विरेजिरे महाकराल्या असुरप्रणाशने ।

सदैव लक्ष्म्या हृदये पुरीं प्रति प्रपुरयामासुरनल्पमादरम् ।। " 9/6

कुछ और अन्य श्लोक वंशस्थ छंद से युक्त सुन्दर बन पड़े हैं। नवम् सर्ग से ही नवां श्लोक,[2] चौदहवाँ श्लोक[3] इत्यादि वंशस्थ छंद की दृष्टि से पठनीय हैं तथा काव्य में उत्कृष्ट छन्दो विधान का पूर्ण परिचय देते हैं।

एकादश सर्ग में भी पन्त जी ने वंशस्थ छंद का मंजुल प्रयोग किया है। यथा –

परोपकारे च परेश पूजने, वभूव तज्जीवनमर्पितं सदा ।

सुप्ता स्वराष्ट्रार्थमजागरीत्तथा क्षणे क्षणे राष्ट्रदशामचिन्तयत् ।। 11/2

एकादश सर्ग से ही एक और अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है। –

चिन्तासमूहः प्रसभं महेश्वरी क्षयप्रभं क्षाययति स्म सर्वदा ।

आरोहणार्थ ज्वलितेव संचिता सोभर्तृकायाःकृत आजगाम हा।। 11/1

वीसवें सर्ग से –

" अहो स नानाः परमोस्ति सेवकः शिवस्य ताना उभयोरिदं मतम् ।

समस्त राष्ट्रार्थ उपर्यवस्थितो भवेन्निजार्थस्तु कदाप्यनागते ।। 20/10

अपिच – *समेप्यभूवन् स्वयमेव नायकाः परोपदेशो दुरितं परं तथा ।*

किमप्यमन्यन्त निजोपमायकं निदिष्टमन्यस्य तिरस्कृतत्वमैत् ।। 20/17

---

1. *सहैव राज्ञ्या विचचार सन्ततं सखीसमूहः प्रतिबिम्बसन्निभम् ।*

   आलौकिके भावसमुद्र उद्धरं प्रवाहयामास दिवानिशं सदा ।। 9/9

2. *इतीव चिन्ता बहुधा महीयसीमशान्तिमानीतवती तदन्तरम् ।*

   पदे पदे लौकिक बन्धनं च तां प्रसह्य नित्यं युयुजे स्वभंग्रजने ।। 9/14

4. हरिणी –

इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक नगण, एक सगण, एक मगण, एक रमण, एक सगण अन्त में एक लघु और एक गुरू होता है तथा 6, 4, 7 अक्षरों पर यति होती है तथा इसके प्रत्येक चरण में सत्रह अक्षर होते है।[1]

झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य के पंचदश सर्ग में हरिणी छन्द का प्रयोग किया गया है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं –

समधिकतां पीड़ां दत्त्वा ननाश पुरी परा।
सिततनुजुषो लग्ना ध्वंसे निरस्त्रजनस्य हा।
अभिभवयुता भूभृत्पन्त्या सुगुप्तकलेवरा ।
व्यधिषततरां पुर्यां तस्यां खला मृतिताण्डवम् ।। 15/1

अपिच –

दिशि दिशि महाज्वालैवासीत्तता क्षिति मण्डले।
नभ उपगता सूर्यस्यासावगादनुबन्धताम् ।
द्रुततरगताः सन्दीप्याग्निं शिखासु धरारुहां ।
भयदमपतन्निंगालाल्योटवाविव खाण्डवे ।। 15/5

सम्पुर्ण सर्ग हरिणी छन्द से ओत प्रोत है एक और अन्य उदाहरण द्रस्टव्य है –

कमलनयना दृष्ट्वा झांस्यां धगद्धगदुज्ज्वलद्
हुत वहशिखां सव्यामोहापतद् मथितान्तरा ।
अवददधिकोन्मत्ता धातं निपातय मय्यरे।
सरलसरलान् निर्दोषान् हंस्यहो अधिता रियो ।। 15/11

तेरह[2], उन्नीस[3], चालीस, इकतालीस सम्पूर्ण सर्ग में ही हरिणी छंद दिखाई पड़ता है।

---

1. *'न समरसलागः षड्वेदैर्हयैर्हरिणी मता ।' (छन्दो0)*
   ' रसयुगहयैर्न सौ म्नौ स्लो गौ यदा हरिणीतदा ।। ' (वृत्त0)
2. *रुदननिरतं शोभां काञ्चिद् दधार विलोचनं, करुण करुणं लोकं शत्रुं विलोक्य मुहुर्मुहुः । हिमकण इव श्वेताम्भोजे बभूव विराजितं, जलमिव जपापुष्पे गुत्से वभावतिमञ्जुलम्।।15/13*
3. *अहह मनुजः क्रूरः क्षित्यामियान भवितु क्षमः, स्फुटति हृदये तस्यैवं हा दन्द्भवताङ्कुरः। मरणवरणं चक्रूर्ये ते क्षते रहिता अहो, मृतिमुखगतास्ते लोके ये ह्यरिप्सत जीवितुम्।। 15/19*

चालीसवां श्लोक देखिये –

प्रचलतुपुरीं कालप्याख्यां मुदान्तपराक्रम

श्चिरतरमसौ रावः प्रत्युगमार्थमपेक्षते।

चलतु तनुतां मातस्तत्राप्यसीमसुगौरवं

जननि जगते दत्तां शिक्षामसेर्वरमुत्तमम् ।। 15/40

श्लोक 41 देखें– *प्रभवति न ते स्प्रष्टुं रोमाप्यरातिकरः क्वचित् ।*

किमुत जनने देहं पूतः सदा स भविष्यति ।

स्पृशति दुरितीी यावन्तं स क्षणप्रभया सम –

मयमुपगतस्तस्तावद्भग्नी करिष्यति तं जनः ।। 15/41

श्लोक 31 देखें– *महदपियथा कुर्वन् पापं स्वपालयितुः कृते ।*

भवति खगहा संसारेस्मिन् शशादन उद्धुरः।

भरतधरणी वासी तद्वद् बभूव स्वघातक ।

इदघमपि प्रेक्ष्याकस्मादं बभूव नमच्छिरः ।। 15/31

इस तरह सम्पूर्ण सर्ग है हरिणी से ओतप्रोत है।

5. वियोगिनी –

सत्रहवें सर्ग में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने वियोगिनी छन्द को अति रमणीय ढंग से प्रस्तुत किया है।वियोगिनी छंद का इस श्लोक में अवलोकन करें–

नियतो बत शोक एव मे शयनं हन्त मयास्ति दुर्लभम्।

नियतो मम शोक एव हा तदुदन्तस्तदवेक्षणं ध्रुवम्।।17/1

अपिच–

तडगं समीपवर्तिनंमृश –

त्रिशिशिरैः कठौश्च कमलैः समुद्धृतैः ।

प्रकृतिं मिनाय पवनोक्षमापि सा,

करणीयगौरवत उत्थिता नृपा ।। 17/43

यह श्लोक देखें –

रजसो निकरे पदात्थिये व्यलसस्तात चलंस्तथैव नो ।

असितस्य घनस्य मण्डले ह्यनागोम्बुजिनीयते र्यथा ।। 17/17

श्लोक नं0 4 देखें -

विदितं विदितं सदा मृतिर् ह्यविवादा मृतिरेव भूतले ।

असुधारणमस्ति केवलं क्षणजीवं मृतिसिद्धि पोषकम् ।। 17/4

वियोगिनी के माध्यम से व्यतिरेक अलंकार का सुन्दर वर्णन देखिये –

पवनं जवनेन लंघयन् ददृशे हन्त पदद्वयं भवान् ।

दधदन्तरधात्स्व रोहिणमतिदीनो गरूणोप्यमूद्यतः ।। 17/11

करूण रस में डूबे हुये वियोगिनी के इस रूप को देखिये –

प्रथमं सुत औरसो गतः कृतमर्मस्थलकृन्तनों बहुः ।

पतिशाप ततः परासुतां निहतिः सापि बभूव दुर्दमा ।। 17/33

इस तरह डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने अपने महाकाव्य में वियोगिनी को भी पूर्ण रूपेण उभारा है।

6. मन्दाक्रान्ता –

मन्दाक्रान्ता के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक भगण, एक नगण, दो तगण तथा अन्त में दो गुरू होते है। चार, छैः, सात पर यति होती है। तथा 17 अक्षर होते है। [1]

महाकाव्य के बाईसवें सर्ग में मन्दाक्रान्ता छंद का अति सुन्दर प्रयोग देखने को मिलता है – उदाहरण –

संसारेस्मिञ्जयतु नितरां गौरवोन्नीत भाला

गौरव्राते जयतु नितरां कालभूता कराला ।

दत्त्वा रक्तं तरुण मरुणं नाडिशृंगेभ्य इद्धं

रक्षित्री सा जयतु नितरां होलिकानव्यतायाः ।। 22/1

अपिच –

उप्ते बीजे प्रभवति यथा वृक्षकस्तूर्णमेव

---

1. *" मन्दाक्रान्ताम्बुन्धिरसनगैर्मो भनौ तौ गयुग्मम् " ।*

जन्म प्राप्ते मुकुल उपलोद्भासि पुष्पं यथा वा ।

तद्वत्क्षिप्तेनल समुदये पारतन्त्ये त्वयांग

देशेस्माकं व्यलसदमितं मुक्तिभूतिः समन्तात् ।।   22/4

अन्यच्च –

आदायोग्रं तरलतरलं साहसासिं स्वकीयं

कृत्वाखेटं जनविवशसीपाश्वानां समन्तात्।

विक्रान्तत्वं सिततनुभृतां कीर्त्तिमूलं विनाश्य

लीलाभोगं बत गतवती देवी संहृत्य सर्वम् ।। 22/2

नारी नारी प्रतिभटनभोधूमकेतुत्वमाप

दुत्पातो भूत्प्रलयसदृश चण्ड स्त्रोविलम्बम् ।

ऊष्मा धावत्कतिपयप लै लोंहिते शीतलेलं

सर्वा पीड़ा लयमितवती शोषितानां जनानाम् ।।22/6

अपिच –

पीड़ां धारां विलिख्तिवती यां पतन्ती हृदित्वं

म्लानत्वं यद्वदनकमलं ते समावृत्य तस्थौ।

सन्तानेपि प्रकटित गुणे ते ददाते भये नः

सर्वत्रात्र प्रतिपलमलं हन्त संचारशीले ।। 22/25

इस प्रकार यह सम्पूर्ण सर्ग ही मन्दाक्रान्ता से ओतप्रोत है इस सर्ग मन्दाक्रान्ता की छवि प्रस्फुटित होती है। यदि वास्तव में कविता नियमें से आवद्ध न हो तो वह अपनी विश्रंखलता में सौन्दर्य का ही विनाश करती है और सौन्दर्य के अभाव में स्वतन्त्रता केवल विश्रंखलता में परिवर्तित होती है। इस प्रकार काव्य में छंद का निश्चित रूप से अपना महत्व है

पन्त जी की सरस मधुर वाणी, छंदो की झूमती, बलखाती, लहराती इस चाल ने मिलकर 'झांसीश्वरी चरितम्' को अलौकिक रस से परिप्लावित कर दिया है।

7. शार्दूल विक्रीडित –

इसके प्रत्येक चरण में क्रमशः एक मगण, एक सगण, एक जगण, एक सगण,

दो तगण तथा अन्त में एक गुरू होता है। सात और बारह अक्षरों पर 'यति' होती है। इसके प्रत्येक चरण में 19 अक्षर होते है।[1] उन्नीसवें सर्ग में 53वें श्लोक में तथा 20वें सर्ग 122वें श्लोक में शाईलविक्रीड़ित छंद कवि द्वारा प्रयुक्त किया गया है।

उदाहरण -- बीसवें सर्ग से –

आसीत्कार्पटिको यतो रणभुवः सामीप्य एव स्थितो

गंगादास इति प्रसिद्धविरूदो राष्ट्रेरतात्माग्रणीः ।

दत्तवा स्वास्तरणं हिमं च सलिलं सोच्छ्वासदैर्ध्यं तदा

भुव्येवोपविवेश सार्त्ति सधमत्कारं समस्तैः समम् ।। 20/122

उन्नीसवें सर्ग से और अन्य उदाहरण –

द्वाविंशो जगाम सा मईमासस्य तां वक्रतां

जातो व्यर्थतरो यया स सकलोप्येकः श्रमः सत्वरम् ।

साकल्यं विफलत्वमाप सततं भाग्यस्य कीदृग्गति

भग्ना किं बत मानवस्य भवति क्षोण्यां सदा कल्पना ।। 19/53

वास्तव में कवि छन्द भाषा तथा भाव के साथ कदम से कदम मिलकर चला है। छंद चयन एवं उनके प्रयोग में कवि की सतर्कता से काव्य में चारूता का समावेश हो गया है।

8. स्रग्धरा –

स्रग्धरा के प्रत्येक चरण में क्रमशः एक मगण, एक रगण, एक भगण, एक नगण, तीन यगण होते है। तथ सात–सात अक्षरो पर यति होती है। इस छंद के प्रत्येक चरण में 21 अक्षर होते है।[2]

झांसीश्वरी चरितम् में दशम सर्ग के अन्तिम श्लोकों में अठारहवें सर्ग के अड़तालीसवें श्लोक में स्रग्धरा छंद का सुन्दर समन्वय किया गया है। उदाहरण –

एकान्ते स्वमिचित्रं प्रति निहितदृशा सा प्रमत्ता जगाद

मर्तुं नेच्छामि कर्तुंबत बहलतरं में विलोके समक्षम् ।

क्रान्तेर्व्याक्षिप्यते किं जनगणसुखदा योजना निर्मिता सा

---

1. *सूर्याश्वैर्मसजस्ततः सगुरवः शाईलविक्रीडति । (वृत्त0 छन्दो0)*
2. *भ्रम्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीत्तितेयम् । (वृत्त0)*

लक्ष्मीरेषा कदापि प्रविचलति पदं बुद्बुदद्ध्वंसतो नो ।। 10/60

दशम सर्ग का उनहत्तरवां[1] श्लोक में स्रग्धरा छंद से छन्दोमय बना हुआ है।

इसी भाँति अठारवें सर्ग का 48वां श्लोक द्रष्टव्य है –

व्योम्नस्तावत् पितस्त्वं क्षणमिव वदनं वत्सलं दर्शयिष्य –

स्येषा गच्छामि युद्धस्थलमितगतिर्दर्शयाम्याजिलीलाम् ।

शर्वर्यां नो शयेहं रणकरणरता कार्यमन्मत्यजामि

शान्तिं प्राप्नोमि काश्चित्स्वमरिवलमपि युच्चण्डिकासाद् विधाय।। 18/48

वास्तव में झांसीश्वरी चरितम् के छन्द बड़े ही सशक्त व सरस एवं मनोहर है स्रग्धरा जैसे बड़े –2 छंदो का प्रयोग करने पर भी पन्त जी के काव्य में लम्बे–2 समास नहीं आ पाये हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सुबोध चन्द्र पन्त जी ने अपने महाकाव्य मे लगभग समस्त छंदो को हमारे नेत्र पटल के समक्ष उपस्थित किया है। आप वास्तव में छंदो के पारखी है। लगभग सर्ब छंदों को आपने अपने काव्य में स्थान दिया है।

वास्तव में आपका छन्दोमय काव्य बड़ा ही मनोहारिणी बन पड़ा है। स्त्रग्न्धरा आदि बड़े–बड़े छंदो का प्रयोग वर्णन को रूचिर मधुर तथा शैली का मंजुल बनाने में पूर्ण सहायक सिद्ध हुआ है।

कवि ने समन्वित शैली के माध्यम से काव्य में संगीतात्मकता पाने का समीचीन प्रयास किया है। वास्तव में यह सिद्ध होता है कि काव्य का संगीत युग–सापेक्ष और समाज के जीवन के अनुरूप होता है। आपका छन्दोविद्यान उत्कृष्ट कोटि का रहा है।

अलंकार –

अलंकार शब्द अलम्+कृ धातु से निष्पन्न है। जिसका अर्थ है – अलंकरोतीति अलंकार अर्थात जो अलंकृत करे अथवा जिसे अलंकृत किया जाय। अलंकार प्रियता मानवजाति के लिये स्वाभाविक सा है। यह अलंकारिता का प्रेम मानव जाति के रक्त में बिंधा हुआ है। इसके मूल में आत्म दर्शन की सहज

---

1. *संसारे जीवनंतु प्रतिदिवसमिदं लीयते बुद्बुदाभं*

   लीनत्वं हास्य धर्मः कथमपि न कथा विस्मयोत्पादिकेयम् ।

   सोढव्याः सन्ति गोलाः कलितशिखिचयास्ते शतघ्नीप्रसूताः

   किं तन्नानाविलापैर्न सहनकरणात्कश्चनर्तेस्ति पन्थाः ।। 10/69

प्रवृत्ति है। साहित्य के सृजन में जो आनन्द और उत्साह प्रेरक होता है। वही अलंकारो का मूल स्रोत है। हृदय गत भावों को व्यक्त करने के लिये जब भाषा कुछ शिथिल सी पड़जाती है तो मानव स्वतः अलंकारों को अपनाता है कवि इस स्थिति में प्रस्तुत–अप्रस्तुत का आरोप करके काव्य को उत्कर्ष पर पहुँचाता है। कवि जगत् में सुगन्धित पुष्प पराग को विखेरता है। इसलिये काव्य जगत में अलंकारों की उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि एक रमणी को अनुपम बनाने में आभूषणों की आवश्यकता होती है।

प्राचीन काल में अलंकारो की प्रमुखता मानी जाती रही है क्योंकि – "अलंकारा एव काव्ये प्रधानमिति प्राच्यानां मतम्" आज भी कहा जाता है। अलंकारो से काव्य के बाह्यांग की कमनीयता में बृद्धि होती है। यही कारण है कि सभी श्रेष्ठ कवियों ने अलंकारों की उपादेयता को स्वीकार किया है।

अलंकार के लक्षण –

आचार्य दण्डी ने काव्य की शोभा अलंकारों को मानते हुये लिखा है –

" काव्यशोमाकरानर्मानिलंकरान्प्रचक्षते ।। "

अलंकार को परिभाषित करते हुये आचार्य मम्मट लिखते है –

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येडंकाद्वारेण जातुचित् ।

हारादिवदलंकारास्तेऽनुप्रासोपमादयः ।। (काव्यप्रकाश) (87का0)

भामह प्रथम आचार्य है जिन्होंने अलंकारों का विस्तृत विवेचन किया है। इन्होंने वक्राभिधेय शब्दोक्ति को अलंकार माना है। और वाणी की अलंकृति के लिये इसे आवश्यक बताया है। –

" न नितान्तादिमात्रेण जायते चारूता गिराम् ।

वक्रोभिधेययं शब्दोक्तिरिष्टा वाचमलंकृति ।।

अर्थात नितान्त प्रकृतरूप से वाणी में चारूता नहीं आती । वाणी की अलंकृति के लिये शब्दोक्ति इष्ट है। इस प्रकार भमह के अनुसार वाणी को अलंकृत करने वाले तत्व को अलंकार कहते है।

इसी प्रकार आचार्य वामन ने काव्य के शोभाकारक धर्म को गुण तथा शोभा को बढ़ाने वाले धर्म को अलंकार कहा है।[1]

---

1. काव्य शोभायाः कर्त्तारो धर्मा गुणाः तदतिशयहेतवस्त्वलङ्.कारा ।। (काव्या0 3/1-2)

आचार्य आनंदवर्धन ने काव्य के अंगभूत शब्द और अर्थ के धर्म को अलंकार कहा है।[1]

आचार्य कविराज विश्वनाथ,[2] आचार्य जयदेव,[3] आचार्य भरत आदि ने भी अपने समीचीन विचार प्रस्तुत किये है

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि काव्य में सौन्दर्य के आधायक अलंकार ही है तथा अलंकार के कारण ही काव्य ग्राह्म होता है।

अग्नि पुराण कार ने तो अलंकारो की काव्य में स्थिति अनिवार्य मानी है और भमह की उक्ति को ही शब्दान्तर दोहराया है –

" अलंकार रहिता विधवेय सरस्वती ।। "

स्पष्ट है कि जिसप्रकार वास्तविक सौन्दर्य में अलंकारो को धारण करने से सौन्दर्य बृद्धि होती है उसी भाँति काव्य में अलंकारो का स्वाभाविक प्रयोग सार्थक और प्रभावशाली होता है हिन्दी कवि देव के शब्दो में इस तथ्य को इस प्रकार कहा जा सकता है –

कविता कामिनी सुखद पद सुवरण सुजाति ।

अलंकार पहिरे अधि अद्‌भुत रूप लखाति ।।

काव्य शास्त्र में अलंकारो को दो भागों मे विभक्त किया गया है।

1. शब्दालंकार – वक्रोक्ति, अनुप्रास, यमक, श्लेष, पुनरूक्ति

2. अर्थालंकार – उपमा, उत्प्रेक्षा, सन्देह, रूपक, अपह्मुति, समासोक्ति, निदर्शना, अप्रस्तुत, प्रसंसा, अतिशयोक्ति, प्रतिवस्तूपमा, दृष्टान्त तुत्योगिता, व्यतिरेक, आक्षेप, विशेषोक्ति, अर्थान्तरन्यास, विरोधाभास, आदि अलंकार अर्थालंकार के अन्तर्गत आते है।

---

1. *तमर्थमबलम्बते येऽङ्गिनं ते गुणाः स्मृताः ।*
   अंगाश्रितास्त्वलंकाराः मन्तव्याः कटकादिवत् ।। (ध्वन्यालोक 2.6)
2. *शब्दार्थयोरस्थिरा ये धर्माः शोभातिशायिनः ।*
   रसादिनुपकुर्वन्तोऽलंकारास्तेऽङ्गदादिवत् ।। साहित्यदर्पणः 10/1
3. *अंङ्गीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलङ्कृती ।*
   असौ न मन्यते कस्माद् अनुष्णमनलं कृती ।। चन्द्रालोकः 1/8

कला पक्ष के अन्तर्गत सबसे अधिक महत्वपूर्ण अलंकार होते है। पन्त जी ने अपने महाकाव्य में शब्दालंकार एवं अर्थालंकार दोनों का सफल प्रयोग किया है। वैसे यह महाकाव्य अलंकार प्रधान कृति नहीं है तथापि वह अलंकारों से अछूता न रह सका। शब्दालंकार और अर्थालंकार की स्पष्ट झांकी इसमें देखी जा सकती है।

शब्दालंकार काव्य का संगीत धर्म है क्योंकि ध्वन्यात्मकता का जन्म शब्दालंकार द्वारा ही होता है इसी दृष्टि को विचार में रखकर कवि ने अनुप्रास यमक का प्रयोग किया है।

शब्दालंकार

अनुप्रास –

अनुप्रास का प्रयोग काव्य में पदे पदे दृष्टिगोचर होता है

जहां वाक्य के शब्दों में एक या कई व्यंजन एक से अधिकवार एक क्रम में आवें, वहां अनुप्रास अलंकार होता है। आचार्य मम्मट ने अनुप्रास अलंकार का लक्षण इस प्रकार दिया है –

'वर्णसाम्यमनुप्रासः' । *(काव्यप्रकाश 104)*

अनुप्रास अलंकार का उदाहरण देखिये –

उत विहाय सकुट्टिम उल्लसञ्शिशिशुर्विजहार निरन्तरम् ।

उडुविनोदन साधन संहतौ निरतचित्त उदात्तविभा पथैः ।। 2/11

यहां 'ट' 'स' 'श' वर्णों की आवृत्ति हुयी है अतः यहां अनुप्रास अलंकार है।

अनुप्रास का ही एक और अनुपम उदाहरण देखिये –

हयति शीघ्रमयं करुणं जनः प्रतिमटाननखण्डमकारिणीम्।

भवति खण्ड इह प्रलयो द्रुतं खलगणों भविता नियता हतिः।। 2/52

यहां 'म' वर्ण की आवृति होने से यहां अनुप्रास है। कितनी कुशलता एवं सुन्दरता के साथ इन श्लोकों में अनुप्रास का संयोजन किया है। ये वृत्यानुप्रास के रमणीयक उदाहरण है।

और भी देखिये –

राजिता शयकुशेशयमुष्टिः कोमलत्वकठिनत्व विशिष्ट्या।

सज्जनस्य हृदये लसितानां सम्पदां निधिरिवैदतिशोभाम् ।। 4/12

अलंकार की मंजुल छटा से कविता की शोभा विशेष सुन्दर आकर्षक किंवा हृदयावर्जक हो गयी है।

मन को आह्लादित करने वाली सुन्दर भाषा के साथ अनुप्रास का चमत्कार द्रष्टव्य है –

मान्धं गतं झणझणयिमाशु झांस्यां तत्कंकणोत्थमथ किंकिणिका प्रसूतम् ।

आघात जातमपि कन्दुकजातमापत्तद्विस्मृतिं खणखणयितमाप शास्त्रम् ।।9/37

यहां 'झ' 'ण' 'क' 'ख' की आवृत्ति के साथ भाषा का अति रमणीय रूप चित्रित किया गया है। अनुप्रासों में पन्त जी का पदलालित्य रमणीय है।

सुमनोहर भाषा से परिपूर्ण अनुप्रास का इस श्लोक में अवलोकन करें –

मध्ये मध्ये गगनमभि मे प्रेषयिष्यामि दृष्टिं

भूत्वा नेत्रातिथिरतितरां तर्पयिष्यस्यमूं त्वम् ।

चन्द्रश्चञ्चूचुलुकमचलं चक्रनाम्नो यथैव

चन्द्रञ्चान्द्रयां चतुरचतुरस्तर्पयत्यात्मभासा ।। 18/49

अनुप्रास से अलंकुत यह श्लोक रत्न वास्तव में चमत्कार पूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करता है। यद्यपि शब्दालंकारों का प्रयोग कम ही किया है तथापि आपके काव्य में अनुप्रास की छटा देखते ही बनती है। शब्दों की योजना स्वभावतः इतनी सुन्दर है कि भाषा में स्वाभाविक रूप से ललितात्मकता एवं अनुप्रासिकता आगयी है। कहीं भी कृत्रिमता या क्लिष्टता का समावेश नहीं है।

अनुप्रास का एक सहज सुन्दर रूप देखिये –

गोलः शतघ्न्यः कृतधाँव धाँववाग्रे धाव धावेति जगाद सन्ततम् ।

ऊचे भुशुण्डेर्गुलिका गुडुंगुडुंशब्दैरये गुण्डय गुण्डय द्रुतम् ।। 14/14

यहां 'म' 'ध' 'प' 'ड' वर्णो की आवृत्ति हुयी है। युद्ध में प्रयुक्त शब्दों की ध्वनि में यह अनुप्रास की अनुपम छटा देखते ही बनती है।

इस प्रकार अनुप्रास का सुन्दरतम् प्रयोग डा0 सुबोध चन्द्रपन्त जी द्वारा किया गया है। डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने शब्दालंकारो के साथ ही साथ अर्थालंकारो का भी प्रयोग कर काव्य को उनकी अनुपम छटा से अलंकृत किया है।

2. यमक –

अर्थ होने पर भिन्न – 2 अर्थ वाले वर्णसमुदाय का पूर्वक्रम से ही आवृत्ति यमक अलंकार कहलाता

है। अर्थात जहां किसी शब्द या शब्दसमूह की एंक या अनेक बार आवृत्ति को किन्तु शब्द के अर्थ भिन्न हो वहां यमक अलंकार होता है।[1] यथा –

अवगतेर्विषयोयमभूत्तदा त्रिभुवने कमलां सकलामलाम् ।

प्रवितती कुरूते कमलालया तिमिरनुन्महिमानमुपेयुषी ।। 2/25

अपिच –

इति भटसमुदायाः भानुजां प्रार्थयन्त प्रथित नति यथा तां प्रार्थयन्ते मुनीशाः ।

बलमनुपमशौर्यं सूर्यजादर्शः एकः प्रतिफलमतिरम्यां चित्रवीथी बभूवुः ।। 19/34

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने मन भरकर अपने काव्य में अलंकारों का विधान किया है। एक के बाद एक अलंकार प्रस्तुत किये है। पाठक गण पढ़ने के उपरान्त विस्मृत नहीं कर पाता है। एक–2 छन्द मस्तिक रूपी दरवाजे पर दस्तक देता प्रतीत होता है

पुनरूक्ति अलंकार –

भिन्न भिन्न रूप वाले सार्थक और अनर्थक शब्दों में एकाधिकता का आभास होना ही पुनरूक्ति अलंकार कहलाता है।[2] शब्दालंकारों में कवि ने पुनरूक्ति अलंकार का प्रभूत प्रयोग किया है। जिसके उदाहरण निम्नवत है–

यस्याः प्रचण्डै किरणै ह्दग्रा ज्वालां विपुस्फोर पदे पदे सा।

स्फूर्ति यतः प्रापुरपास्तवीर्या वज्रं परेषां निपपात गर्वे ।। 1/16

और देखें –

अधिजलं विहसन् विहसन् यदा कुमुदिनीकुलबान्धव आपतत् ।

निरसने निरतो निजकालिम प्रसरणस्य किमित्यवदंजनाः ।।2/13

अधिबसुन्धर मेत्य कणे–कणे सरुचि सत्वमुदायत मूर्तिमत् ।

सितकरस्य करैर्गभितं जलं विमलतामवगाढ़ उडुव्रजः ।। 2/19

अमृतमेव रराजतरां नभस्यामृतमेव रराजतरां क्षितौ ।

अनुशयं शयितो जनआप्तवान्न शयितोलभतः अखिलमेव तत् ।।2/26

---

1. अर्थे सत्यर्थे भिन्नानां वर्णानां सां पुनः श्रुति यमकम् ।(117 काव्यप्रकाश आ0मम्मट)

2. पुनरुक्तवदाभासो विभिन्नाकारशब्दगा एकार्थतेवे । (122 का0 463पृ0)

शमधनस्य यथा तटिनीपतेः शम इतश्चलता कलितासनः ।

दिशि दिशि प्रथमाप पथः पराम्मृगयमाण उदैद्बडवानलः ।। 2/32

कुछ अन्य श्लोकों का अवलोकन करें –

ऊचे मनू रोधय हे पितृव्य नानां पिता रोधय रोधयेति ।

सुविह्वलात्मा नृपतिर्बभूव मर्माणि कृत्तानि तथैव मोरो : ।। 5/165

आक्रन्दताये मनु रक्ष रक्ष निवृत्य चालोकय जामि तावत् ।

हा हा हतोस्मि प्रसभं वराक आगच्छ नैष श्वसिमि क्षणेन ।। 5/69

अपिच –

इति ब्रुवाणमवदत्स तात्याः सर्वात्समासि प्रसभं चलेति ।

स पेशवाख्योपि जगाद बाढं भवान् यथाह प्रसभं चलेति ।। 6/32

कुछ अन्य उदाहरण द्रस्टव्य है –

तेजस्तदोत्तममवाप्य महेश्वरीतो दुर्गा बभूव महिला महिला नगर्याम् ।

देशं सुदूरमपि विश्रुतयः परापुर्लक्ष्म्या अनुत्तमविकास परा अमुष्याः ।। 9/33

आदि श्लोकों में पुनरूक्ति की अनुपम छटा दृष्टिगोचर होती है आपने अपने महाकाव्य में अलंकारों का समुचित प्रयोग कर अपनी अलंकार प्रयोग कुशलता का परिचय दिया है।

अर्थालंकार

1. उपमा –

उपमान तथा उपमेय का भेद होने पर दोंनों के गुण क्रिया धर्म की समानता का वर्णन उपमालंकार है।[1] प्रायः समस्त अलंकारिकों ने उपमा अलंकार को अनेक अर्थालंकारों का मूल बताया है। आचार्य वामन आदि ने तो साधर्म्यमूलक अलंकारों को उपमा का प्रपञ्च मात्र ही बताया है।[2]

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने अपने काव्य को उत्कृष्ट बनाने में कहीं कोई न्यूनता नहीं की है। आपकी उपमायें भी रोचक हुयी है यथा –

---

1. साधर्म्यमुपमा भेदे । काव्यप्रकाश – 125

2. प्रतिवस्तुप्रभृतिरूपमापप्रञ्च 4.3.1.

अलिकवर्त्तिन आवृतमस्तकः शशधरस्य करैर्गिरिशो यथा।

सहित उज्ज्वल कान्ति हिमान्युपर्युपविवेश हिमालयकन्यया ।। 2/29

चन्द्रोदय वर्णन में उपमा अलंकार का अति मनोहारिणी चित्र प्रस्तुत किया गया है।

और अन्य उदाहरण –

रक्तभे विलसति स्म कपोले चुम्बनस्य जननेरमला भा।

पाटले सुमनसि द्युतिरम्ये कान्तिमानिव वभौ मकरन्दः ।।

उदाहरण– *शिरोभाति यथा तूर्ष्णी संड.घी भूयालिनः स्थिताः ।*

कज्जलस्य च्छलेनैको ललाटे तेभ्यः आगतः ।। 3/28

कवियों का प्रमुख गुण उपमा देना होता है। कभी नायिका के अंगों की उपमा तो कभी क्रिया कलापों की उपमा । विना उपमा के काव्य अपूर्ण जान पड़ता है। डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी उपमा के प्रयोग में सिद्धहस्त प्रतीत होते है। निम्नलिखित उपमा अलंकार से अलंकृत श्लोक का अवलोकन करें।

हर्षणाश्रुविमलान्ययतन्त दर्शनाय नयनानि नराणाम् ।

अर्चनार्थअवगाढशरीरा भक्तिभाववलिता इव लोकाः ।। 4/20

वास्तव में अलंकारों की सुमनोहर छटा झांसीश्वरी चरितम् काव्य में पग–पग पर विद्यमान है। अलंकारों के मंजुल प्रयोग से काव्य का पदलालित्य अच्छा बन पड़ा है। पंचम सर्ग का वाईसवां श्लोक[1] रानी की वीरता और तेज से युक्त उपमा की छटा का सुन्दर उदाहरण है।

यह सत्य है कि अलंकारों का प्रयोग पन्त जी ने चमत्कार के लिये नहीं वरन भावोत्कर्ष के लिये किया है। ये अलंकार भावों की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार है। उपमा की एक और छटा का दर्शन करें।

अन्नपूर्णा यथा लक्ष्म्याः स्वागतार्थमुपस्थिता ।

श्रद्धयो जडतां प्राप्ताः सिद्धयश्च विवर्णताम् ।। 7/28

मनु की अन्नपूर्णा से उपमा कवि की सुदृढ़ एवं सजीव अलंकार योजना का सुन्दर उदाहरण है।

---

1. *शक्तिं दधाना स्फुरितां करेण तेजस्विनी शक्तिरिव व्यराजीत् ।*

आरूह्य वाहं शमनेपि लज्जां विद्योतयन्ती स्वमसिं व्यतानीत् ।। 5/22

ऐसे अनेक श्लोक जैसे आठवें सर्ग का ग्यारह,[1] सत्रह,[2] वत्तीस,[3] आदि अनेक उपमा के उत्कृष्ट उ़दाहरण हैं। उपमा से अलंकृत इस श्लोक को देखें--

शशांकमुख्या मुखमाप शोभितां सखीभिरेभिधृर्तभक्तिरक्तिभिः ।

तथा प्रभां विन्दत ओषधाधिपो यथा कालाभिः सकलाभिरूज्ज्वलां ।। ७।३

अठारहवें का उनतालिस, नवम सर्ग का ही छठवां श्लोक[4] आदि में भी उपमा का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

प्रथम सर्ग के इस श्लोक की मनोरम उपमा का दर्शन करें –

दुर्गेव नारीजन इत्यवोच्चलोकस्य नेत्रे उदमीमिलच्च ।

यद्विस्मितोभूद्बत् विस्मयोपि चक्रे समस्तं तद्दृष्टपूर्वम् ।। 1/27

निम्न श्लोक में नवीन उपमान के साथ उपमा का प्रयोग अवलोकनीय है –

भातिप्रान्ते पथश्छायावृक्षा इव जनावलिः ।

वसाना वसनं तुल्यं किर्मीरा भ्राजते चमूः ।। 8/24

तरलाक्षो वजीरोयं संयमे हिमवानिव ।

अर्मीरश्चास्त्यधीरोसौ धृत्या महिम वानिह ।। 10/46

सप्तम सर्ग के इस श्लोक को देखे --

जवनेनोत्तरासंगो धृष्ट कुट्टिम आगतः ।

वसन्ते लब्धसौरभ्यो वेपिताब्ज इवानिलः ।। 7/5

---

1. *प्रहरीव स्थितोत्रैष वप्र आभाति सुन्दरः ।*

   हिमतापौ च वर्षाश्च, सहमानो निरन्तरम् ।। 8/11

2. *पिधीयते यदा द्वारं कदाचित्पातितार्गलम् ।*

   मृत्युप्रतिभटो भाति भागदन्त इव द्विपः ।। 8/17

3. *मन्दिरावलिरेषात्र शङ्खपद्मादिचित्रिता ।*

   विमाना इव देवानां म्लाशन्ते लक्षवर्णमाः ।। 8/32

4. *शब्दतोन्तरितवत्यहो समां शोकजां कृपाणता परामूम् ।*

   किं रूदन्ति विबुधाः कदापि वा साक्षि चेद्विजनमेव केवलम् ।। 18/39

आपणा नवला एते प्राप्य पौरान् सुसज्जिताः ।

वैश्य पुत्रैर्वचोदक्षैर् सम्यैरिव विलस्यते ।। 8/19

अपिच - वर्धमानं प्रवेगोणे संमर्दं स्थापयन् नयन् ।

प्रत्युप्त इव कर्तव्यहेतोरेष भट व्रजः ।। 8/23

न रोचते ते परमंग कौतुकं शरावलेः खड्गचयस्य कि रमम् ।

स्मरस्यहो नो धनुषोर्जुनस्य किं फूत्कारतुल्यो निनदो महत्तमः ।। 11/27

उत्प्रेक्षा अलंकार -

जो प्रकृत (उपमेय) की सम (उपमान) के साथ सम्भावना (उत्कृष्ट कोटिक संदेह) की जाती है वहां उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।[1] इस प्रकार उत्प्रेक्षा भी एक प्रकार का संदेह होता है। इसमें उपमान कल्पित होता है। उपमेय की कल्पित उपमान रूपेण सम्भावना ही उत्प्रेक्षा होता है। इस प्रकार उत्प्रेक्षा की आत्मा सम्भावना है।

उत्प्रेक्षा का रमणीय उदाहरण द्रस्टव्य है -

या रम्भा स्वर्गलोकेपि सुन्दरी सकलोत्तमा ।

सापि दृष्ट्वा स्वसारं में ह्रियं गच्छेदिति ध्रुवम्।। 3/38

यहां उपमेय मनु की कल्पित उपमान रम्भा से सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलंकार है। उत्प्रेक्षा अलंकार का सुन्दर प्रयोग पन्त जी द्वारा किया गया है। तृतीय सर्ग के 14वें श्लोक[2] में भी उत्प्रेक्षा का सुन्दर रूप देखने को मिलता है। एक और अन्य उदाहरण का अवलोकन करें -

मन्ये तथापि विफलं न कृतं मदीयं सत्प्रैषयं समरवातुलमेकवीरम् ।

योशिक्षयद् बहुतरं व्रणवानपीत्थं योद्धुं प्रवृतमचिरेण महाधमं तम् ।। 12/6

कवि की अलंकार कुशलता दर्शनीय है। समुचित अलंकारों को अपने काव्य में स्थान देकर कवि ने अपनी बात को प्रकट किया है। प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार में पूर्ण लक्षण विद्यमान है उत्प्रेक्षा

---

1. सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् ।

भवेतसम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना ।। काव्य प्रकाश - 137

2. मन्येसान्द्रतरां गृह्णन् सुधाकरसुधां विधिः ।

अस्या आनन सृष्टौ तां विससर्ज समां सुधीः ।। 3/14

का एक और सुन्दर प्रयोग देखिये –

राजन्ते चरणौ पाणी पल्लवैः पंकजैः समाः ।

वनश्रीरेव सम्प्राप्ता प्राप्त काला यथाऽधुना ।। 3/39 झॉ०च०

यहां चरणों को कमल आदि की प्रवृति लक्षित होने से उत्प्रेक्षा है।

इस प्रकार कवि ने अपने काव्य में अन्य अलंकारों के साथ –2 उत्प्रेक्षा का अति सुन्दर प्रयोग किया है। सातवें सर्ग के तेतालीसवें श्लोक को देखें ––

रत्नाकार समुत्थेव रमा प्रत्यग्रमन्थनात् ।

स्फुरन्तीव च रेजे सा चञ्चला मेघजालतः ।। 7/43

डा० सुबोध चन्द्र पन्त जी की उत्प्रेक्षायें उनकी अलंकार विन्धान की पटुता की पूर्ण परिचायक सिद्ध होती है। आपकी उत्प्रेक्षायें उपमा से कम सुन्दर नहीं है।

झांसीश्वरी चरितम् में कहीं भी अलंकारों का अनुपयुक्त प्रयोग प्रतीत नहीं हाता है। प्रसंगानुकूल अलंकारों का प्रयोग इस महाकाव्य में देखने को मिलता है।

सर्ग आंठवें का सोलहवां,[1] चौदहवे सर्ग का तेरानवे,[2] पन्द्रहवें सर्ग का तेरहवां,[3] सोलहवें सर्ग का दसवां[4] आदि अनेक श्लोक उत्प्रेक्षा के सुन्दर उदाहरण बन पड़े है। इस प्रकार उपमा के साथ ही साथ डा० सुबोधचन्द्र पन्त की उत्प्रेक्षायें भी अनुपम है। इस श्लोक में उत्प्रेक्षा का कितना सुन्दर रूप देखने को मिलता है। निर्मल चन्द्रमा उगता है और प्रतिबिम्ब जब जल में पड़ता है तो उसकी लहरियाँ कैसी सुन्दर दीख पड़ती है।–

---

1. *मन्ये ते करदाः पत्युर्भजन्त्यम्भोधयो भयम् ।*
   वारिस्वं तत्प्रदत्तं यद् वर्त्तते परिस्वागतम् ।। 8/13
2. *प्रोक्तवन्त इव हन्त हेम्बन त्वत्कृते चकृमहे मनागपि ।*
   स्वस्य कं कमभिलाषमात्मना खण्डितं बिभृमहे च मृत्युना ।। 14/93
3. *15/13 झांसीश्वरी चरितम्*
4. *शर्वरीं तमिचरा इव कृत्वां राज्यमाशु शुचिशुक्चया गताः ।*
   तामसाः सम उपद्रवा गता ईरितानि च गतानि पशूनाम् ।। 16/10

किरणचूर्णमिव प्रसृतं विधोर्विमलभे तटिनीसलिलोदरे ।

सरुचि तन्महिमानमुदाहरच्छ्रवसुखेन तरंगरवेण तत् ।।   2/23

3. संदेह अलंकार –

'एकस्य च ग्रहे न्यायदोषाभावादनिश्चयः'

अर्थात किसी एक के मानने में साधक प्रमाण और वाधक प्रमाण न होने के कारण निश्चय न हो सकना ही सन्देह अलंकार होता है[1] इस प्रकार संदेह अलंकार में प्रस्तुत पदार्थ में अप्रस्तुत होता है।

यथा– *हिमकरो नु विहायसि वर्त्तते सितशरीरभृतां विभवोन्वसौ ।*

जगति भासत इन्दुकला नु तत्कपटकूटकला विसारिर्णी ।। 2/43

4. रूपक अलंकार –

उपमान और उपमेय जिनका भेद प्रसिद्ध है उनका अत्यन्त साम्य के कारण जो अभेद वर्णन है वह रूपक अलंकार कहलाता है[2] अर्थात जिन उपमान तथा उपमेय का भेद प्रकट है उनमें अत्यन्त साम्य के कारण अभेद का आरोप ही रूपक कहलाता है यथा –

उवाद सा पास्यति शीघ्रमेव स्वातन्त्र्यपीयूषरसं पुरीयम् ।

ज्योतिर्नवीनं ज्वलयिष्यतीयं मुक्तिः समागच्छति पश्य पश्य । 13/12

और भी - चारोधिकालप्यददामुष्मै लेखं मम् स्नेहभराभिभूतम् ।

तमाहृयं वान्धवरत्नमेकं तर्तुं महासंकटसिन्धुमेतम् ।।   13/23

चतुर्थ सर्ग के 54 श्लोक में रूपक को देखें -

ताडयन्त्यतितरां चरणाब्जं भूतलेकथयद्राग्रहरूढा ।

आनयोडुसहितं विधुमत्र मालिकां रचयितुं प्रसुवाच्छा ।। 4/54

मन्द वायु ने सरोवर के तट के वृक्षों की पुष्परूपी आंखों को उन्मीलित कर दिया है। मनोहर कमल नेत्रों से युक्त जल सीमित है --

---

1. ससन्देहस्तु भेदोक्तौ तदमुक्तौ च संशयः । 138 काव्यप्रकाश आ0 मम्मट

सन्देहः प्रकृतेऽन्यस्य संशयः प्रतिमात्तिथतः । आ0 विश्वनाथ सा0 दर्पण

2. तद्रूपकम भेदो य उपमानोपमेययोः ।   काव्य प्रकाश (139)

रूपकं रूपितारोपो विषये निरपह्नवेः ।।

मन्देन वातेन तटे तरुणामुन्मीलितः पुष्पदृशः सुरम्याः ।

जलंच कम्रैर्जल जातनेत्रैर्बभूव तद्दर्शन सादरात्म् ।। 5/47

5. विशेषोक्ति –

जहां प्रसिद्ध कारणों के मिलने पर भी कार्य अर्थात उत्पत्ति का कथन न किया जाये वहां विशेषोक्ति अलंकार कहलाता है[1] जैसे –

मृत्युं गताप्यस्ति सजीवता सा देशस्तदीयोस्त्यमरोजगत्सु ।

तस्याः कथाया अनुचिन्तनेनकाव्येत्र लग्नोप्यमरो भवेद्वै ।। 1/20

6. अर्थान्तरन्यास –

अर्थान्तरन्यास अलंकार में सामान्य का समर्थन विशेष से और विशेष का समर्थन सामान्य से किया जाता है, अर्थात् अर्थान्तरन्यास वह अलंकार है जहां साधर्म्य या वैधर्म्य के विचार से सामान्य सा विशेष वस्तु का उससेभिन्न के द्वारा समर्थन किया जाता है।[2]

उदाहरण द्रष्टव्य है –

प्रासाद आपद्विमलत्व माप्य मन्वाः पदस्पर्शमतीव पुण्यम् ।

कालायसं स्पर्शमणि प्रसक्तं कार्तस्वरत्वं लभते यथैव ।। 5/5

7. विरोधाभास –

जहां विरोध न होने पर भी दो वस्तुओं का विरूद्ध के समान वर्णन किया जाये वहां विरोधाभास अलंकार होता है।[3] विरोधाभास का यह उदाहरण द्रस्टव्य है –

कृष्णालिखित्वा मम लेखनीयं स्यादुज्ज्वलत्वं तनुधारि शश्वत् ।

लेखिष्यति द्रागितिवृत्तमेकं शुभ्रं तदीयसिममनुप्रपन्ना ।। 1/29

---

1. विशेषोक्तिरखण्डेषु कारणेषु फलावद्यः । काव्यप्रकाश (163)

सति हेतौ फलाभावे विशेषोकिस्तथा द्विधा ।

सति हेतौ फलाभावे विशेषाक्तिस्थिथा च सा ।

उक्तयनुक्तयो निमितस्तथात्यचिन्तिमत्वे च कुत्र चित ।

2. सामान्यंवा विशेषो वातदन्येम समर्थ्यते ।

यतु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण बा ।। काव्यप्रकाश 165 का0 पृ0 534

3. विरोधःसोऽविरोधेऽपि विरूद्धत्वैन यद्वचः । का0 प्र0 (166)

भाव पक्ष –

प्रकृति चित्रण –

प्रकृति से मानव का अभिन्न और चिरन्तन सम्बन्ध है। सृष्टि रचयिता की लेखनी का वह मुद्रणालय है जहां जड़ ओर चेतन मुद्रित होकर समाज के सम्मुख आते हैं। साहित्य मानव की चित्तवृत्तियों का प्रतिबिम्ब है। अतः प्रकृति भी उसी मात्रा में साहित्य में अभिव्यक्ति पाती हैं जिस मात्रा में उसका मानव से सम्बन्ध होता है। प्रकृति मानव की अमर सहचरी होने से वह उसकी कदापि उपेक्षा नहीं कर सकता है। कवि भी मानव है अतः उसकी कृति में प्रकृति के हृदय को आह्लादित करने वाले रंग विरंगे चित्रों का होना स्वाभाविक है। काव्य और प्रकृति में आधाराधेय सम्बन्ध है। दोनों ही एक दूसरे के बिना निष्प्राण और निष्पन्द है।

प्रकृति के सहयोग एवं साहचर्य में भी मनुष्य ने अपने नेत्र खोले । धरती की ममतामयी छाती पर उसका जन्म हुआ। जल ने उसकी तृष्णा बुझायी सूर्य ने प्रकाश दिया और समीरण के मंद मंद झोंके मानव जीवन के विघ्न बादलों को उड़ा ले गये । केवल यही नहीं कभी–2 मानव ने प्रकृति को देवता बनाकर उसकी अर्चना भी की ।

इस रूप में प्रकृति मानव की सबसे बड़ी उपदेशिका है। प्रकृति ने सर्वप्रथम मानव को ज्ञान का असीम भण्डार दिया और शनैः शनैः मानव उससे ज्ञान प्राप्त करता गया। अंग्रेजी कवि वड्र्स वर्थ ने कहा है –

" One Impulse from the Veneral wood
Can teach you more of man
of moral evil and good
Than all the sages can. " (Education of Nature)

अंग्रेजी के ही कवि (Byron) वायरन[1] एवं गैटे[2] ने भी प्रकृति को प्रसन्नता एवं प्रेरणा का

1- "There is pleasure in pathless woods
There is rapture on the lonely shore.
There is society where none intrudes
By the deep saa, and music in itaroor
I love not man the less but nature more." "Byron"

2- "Nature know Pause in progress and development and
attached her curse on all in action."

स्रोत बताया है।

इस प्रकार प्रकृति और मानव का आरम्भ से ही अटूट सम्बन्ध रहा है। मानवता की नवीन संस्कृति का विकास भी प्रकृति के आंचल में हुआ।

वास्तव में देखा जाय तो प्रकृति मानव को कुछ न कुछ सिखाती रहती है। प्रकृति से ही मानव सरलता जो की प्रकृति का प्रथम चरण है सिखाती है। यदि प्रकृति न होती तो हमारा जीवन असंभव था।

अंग्रेजी कवि शैली[1] तथा हिन्दी कवि सुमित्रानन्दन पन्त[2] जी ने प्रकुति से शिक्षा ग्रहण करने का अनुपम वर्णन अपनी –अपनी कविताओं में किया है।

संस्कृत कवियों में प्रकृति वर्णन की परम्परा रहीं है। जितनी सफलता के साथ प्रकृति चित्रण जिस कवि ने किया है वह उतना ही अधिक सफल हुआ है। कवि किसी भी कोटि का क्यों न हो उसने अपने ग्रंथो में न्यूनाधिक ही सही किन्तु प्रकृति वर्णन अवश्य ही किया है। बिना प्रकृति की उपासना किये कवि अपनी कविता कामिनी को विभूषित व आकर्षक नहीं बना पाता है। वस्तुतः सत्य तो यह है कि प्रकृति सच्चे कवि के काव्य में स्वतः ही कविता के रूप में खिंची चली आती है। वैदिक मंत्रद्रष्टाओं ने भी प्रकृति सुन्दरी के सुनहरे अंचल में ही साम गायन का स्वर झंकृत किया था। झांसीश्वरी चरितम् महाकाव्य के रचयिता श्री पन्त जी भी प्रकृति से अछूते न रह सके। पन्त जी ने भी अपने काव्य में प्रकृति का अतिरमणीय स्वरूप हमारे समक्ष उपस्थित किया है। पन्त जी ने अपने काव्य में प्रकृति के आलम्बन और उद्दीपन दोनो रूपों के साथ–साथ अति मानवीकरण के रूप में,कठोर कोमल तथा समानरूप में भयंकर अति मनोहरता के साथ चित्रित किया है। आपके प्राकृतिक चित्र स्वाभाविक अलंकारों से अलंकृत होकर हमारे समक्ष आते है।

1- "Teach me halthy gladness
That the brain must know
Such harmonious madness
From my lips Would flow. " (Shelly)

2- *" सिखादो न हे मधुप कुमारि !*
मुझे भी अपने मीठे गान !! "

इस महाकाव्य मे युद्ध की विभीषकाओं के मध्य भी अवसरानुकूल प्रकृति की मनोहर दृश्यावलियाँ चित्रित की गयी है। कवि पन्त ने अपने काव्य में प्रकृति के इन दस उपादानों को स्थान दिया है।

आलम्बनोदीपनंच दूतालंकारिकस्तथा।

रहस्योपदेशिकैव मानवीकरणस्तथा ।।

नामपरिगणनं वापि कृतुवर्णनमैव च ।

पृष्ठभूमिरितियं च दशवा प्रकृति लक्षणम् ।।[1]

आलम्बन रूप में –

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने उद्दीपन रूप की अपेक्षा प्रकृति के आलम्बन को रूप का अधिक चित्रण किया है। स्वतन्त्र रूप से प्रकृति का चित्रण करना ही प्रकृति का आलम्बन रूप है इस रूप में पन्त जी ने अपने काव्य में स्थान–स्थान पर प्रकृति चित्रण किया । प्रकृति का स्निग्ध चित्रण देखिये –

सुमनसामनकुवदिवान्तरं विषयजालमतिप्रसरं तथा।

मणिशिलाफलकोपममुत्तमं वियदसीमविभं विततं वभौ ।। 2/1

द्वितीय सर्ग में पन्त जी ने प्रकृति का स्वतन्त्र रूप में चित्रांकन किया हैं। रात्रि के अति मनोहर स्वरूप को चित्रित किया है। इस प्रकार का प्रकृति चित्रण वहाँ होता है जहाँ कवि केवल प्राकृतिक सुषमा से आकर्षित हो आत्म विभोर हो उसी के गीत गाने लगता है। पर्वत नदी झरना वादल आदि उनकी भावनाओं के माध्यम हो जाया करते है।

अपिच–

उडुगण व्यलसल्ँललिताक्षरैरूपरि हीरकरवण्डशतोपमाः।

निपतितैश्च सुमैरमरापगासलिलमध्यविकीर्णरमैः समाः।। 2/2

प्रकृति में पूर्णता रहती है उसकी गोद में अनन्त सौन्दर्य का सिन्धु थिरकता हैं। सरिताओं की कल–कल ध्वनि, मेघों की से मनोहर चित्र, रजनी की सी सुन्दर छवि, उषा की लालिमा का लालित्य प्रकृति में दृष्टि गोचर होता है।

सम्पूर्ण द्वितीय सर्ग में प्रकृति चित्रण अति सरलता को प्राप्त हो गया है।

आकाश में चन्द्ररूपी शिशुविचरण कर रहा है तथा नक्षत्र समूह उसके मनोरंजन का साधन है

1- डायरी - डा० डी०पी० शर्मा, पृष्ठ 15

प्रस्तुत उदाहरण कवि में प्रकृति के आलंम्बन पक्ष का सुन्दर मनोहर रूप देखे –

उतविहायसकुट्टिम्म उल्लसत्र्शशिशिशुर्विजहार निरन्तरम् ।

उडुविनोदन साधन संहतौ निरतचित्त उदात्तविभा पथैः ।। 2/11

अपिच –

क्षितिभृतां शिखरेषु शिरस्कतामधिजगाम मृगांकरावली ।

मशहरी सदृशी हृदिर्नीदाप्सुमुदये शयनत्वमुपेयुषी ।। 2/17

प्रकृति का कोमल स्वरूप –

डा0 सुबोधचन्द्र पन्त जी कल्पनाओं की दृष्टि से एक कोमल कवि हैं। आपने प्रकृति के कोमल मनोहारी एवं मधुर स्वरूप का अति चित्रण किया है। प्रातः काल के समय उदित होते हुये सूर्य का वर्णन देखों –

ऐत्प्रभातमथ रम्यम्बरे प्रासरद्दिनमुखस्य रक्तिमा ।

मञ्जिजमोपरि च निम्नतो द्रवन् व्याप वेगवलितस्त्रिजगत्सः ।। 16/1

प्रकृति वर्णन में सूर्योदय, अस्ताचल आदि के वर्णन साहित्य की अनुपम निधि है। डा0 सुबोधचन्द्र पन्त ने इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि वे प्रकृति में चित्रण उचित वातारण की सृष्टि करें। उनके प्रारम्भिक सर्गों में एवं बाद के भी कुछ श्लोकों में उनका प्रकृति चित्रण एक पवित्रता तथा शान्ति का संचार करता है और जब उन्होने युद्ध का वर्णन किया है तब आपका प्रकृति चित्रण भय का संचार करता है।

उद्दीपन रूप में –

यत्र–तत्र झांसीश्वरी चरितम् में महाकवि सुबोध चन्द्र पन्त ने उद्दीपन रूप को भी उभारा है। जो पाठक के हृदय को सहज ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है।

चन्द्रमुखी रजनी नक्षत्रों से कढ़ी हुयी चन्द्र किरणों की सुन्दर साड़ी पहनकर संसार में सुख पूर्वक नृत्य करती है –

उततमां परिधाय करैर्विधोरूडुगणैः प्रसितैरूत शाटिकाम् ।

शशिमुखी रजनिर्जगतोधिकं सततमेव ननर्त्त सुखावहा ।। 2/7

प्रकृति भयंकर रूप में –

झांसीश्वरी चरितम् में जहां एक ओर प्रकृति का सुकुमार कोमल एवं मधुर रूप हमें देखने को मिलता है वहीं दूसरी ओर उसका भयावह रूप हमारे नेत्रयुग्म के समक्ष प्रस्तुत होता है। प्रकृति में एक ओर जहां शीतलता दृष्टिगोचर होती है। तो दूसरी ओर दाह । एक ओर जहां रमणीयता के दर्शन होते है तो दूसरी ओर वह विनाशक के रूप में दिखती है। पन्त जी के काव्य में धोर और भयावह प्रकृति का चित्रण देखिये –

भीष्मा घनाघनमटाः सह सैव तत्र व्यापुर्नभःस्थलमुदग्रतमं पतन्तः ।

पश्चाद् गताःपुनरपि प्रययुस्तथाग्रे सक्ता मिथः क्वचिदतिस्थिरतामवापुः ।। 12/28

अपिच –

उत्पाटयन्ति हृदयं बहुवेगयुक्तं शम्पायुधानि बहलं स्फुरणं वितेनुः ।

ध्वाना इव श्रुतिमुपेयुरमुं बधान जह्वाशु तं गडगडायिततः प्रकामम् ।। 12/29

इस प्रकार प्रकृति के डरावने दृश्य भी हमारे समक्ष उपस्थित होते है। प्रकृति का प्रलंयकारी रूप वर्षा के वर्णन में दृष्टिगोचर होता है। –

हिल्लोलसंहतिरमज्जयदाशिरस्कं कर्णाननादिकरणं जलहासमाप ।

उत्पुप्लुवे जलचयस्तलतः प्रकामं झाड्कृत्य निर्झरशतं क्षरति स्म बाढम् ।।

बाढ़ के रूप में वर्षा का प्रलंयकारी रूप अत्यधिक भयावह रूप में देखने को मिलता है। नदी में उत्पन्न होती हिलोरें लेती राशियों का वर्णन अति कुशलता के साथ किया गया है।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने प्रकृति के भयानक रूप को चित्रित करने का समीचीन प्रयास किया है। वेतवा में उठती भँवरों का चित्रण देखिये –

आवर्त्तघातसमुदायमदर्शयत्सा कल्लोलविक्रममथोच्चतमं ततान ।

तीरप्रहारभदितां च तदुत्थरावनिर्भर्त्सनामविरलं प्रकटी चकार ।। 12/32

प्रकृति केविध्वंसकारी भीषण रूप वेग का अत्यन्त व्यापक परिधि के बीच चित्रण हुआ है ।

पन्त जी ने जहां एक ओर प्रकृति के कोमल रूपों को लिया है वहीं दूसरी ओर वह प्रकृति के भयानक रूप का अंकन करने में भी वे सफल है आपके काव्य में प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों में से प्रकृति के मानवीय रूप को भी चित्रित कर गौरव प्राप्त किया है।

मानवीकरण के रूप में प्रकृति चित्रण –

प्रकृति को जब कभी भावानुसार मानवीय रूप दिया जाता है, तब प्रकृति का चित्रण मानवीकरण के रूप में होता है। प्रकृति की सत्ता भी पात्र की तरह सजीव हो उठती है। इस श्लोक का अवलोकन करें –

तरूदलावलिरन्ध्रशतक्षरच्छशिविभाकृत जालकसंहतिम् ।

चपलतामवलोक्य समीरणेऽवपसृता निरमुच्यत सा मुहुः ।। 2/21

द्वितीय सर्ग से ही प्रकृति की यह मानवीरूप छवि को देखें –

द्रुमदला अतिभक्तिसमन्विता भगवतः परिचारिकतां गताः ।

परिधिवीजनमेकमवीजयन्नविरलं मृदुलत्वभरान्विताः ।। 2/22

प्रकृति के मानवीकरण या उसमें विश्वात्माओं के दर्शन की ओर डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने विशेष यत्न नहीं किया परन्तु इन न्यूनताओं से आपके प्रकृति वर्णन की महिमा घट नहीं जाती । प्रकृति से प्रेरणा ग्रहण कर आपने उसे अपने काव्य में भलीभाँति अंकित कर सफलता प्राप्त की है। प्रकृति के इस मानव रूप के दर्शन करें –

क्रीडति स्म गगनांगणमध्ये बालकोभिनवमो दिनेश्वरः ।

स्वं निपात्य सलिले तटवत्या आयति स्म चपलोद्गति रवं सः ।। 16/17

प्रभात वर्णन के इस चित्रण ने काव्य मे मोहकता ला दी है। प्रातः कालीन बाल सूर्य आकाशरूपी आंगन में क्रीड़ा करता है तथा स्वयं को नदी में गिरा कर चांचल्य से आकाश में चला जाता है। यहां भी प्रकृति का मानवीकरण किया गया है।

अपिच –

कोकिलं मधुविडम्बयति स्म सा कुहुध्वनिभरं विदधाना ।

चंचला छलयति स्म जनित्रीं सापवार्य विहितौतुविरावा ।। 4/65

वास्तव में सच्चे प्रकृति पर्यवेक्षक की यही पहचान है कि जहां एक ओर वह प्रकृति के रमणीयरूप को भी प्रस्तुत करता है वहीं उतनी ही कुशलता से प्रकृति के भयावह रूप को भी प्रस्तुत करने में कुशल होता है या नहीं । डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने कुशलता का परिचय दिया है।

अलंकार योजना के रूप में –

काव्य में प्रकृति का अलंकार योजना के रूप में भी चित्रण मिलता है। डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी की कल्पना ने प्रकृति के नौसर्गिक सौन्दर्य का अलंकारों के बोझ से दबने नहीं दिया। आपने चन्द्रमा का वर्णन करते समय उपमा अलंकार के रूप में प्रकृति का स्मरण किया है।–

अलिकवर्त्तिन आवृत्तमस्तकः शशधरस्य करैर्गिरिशो यथा ।

सहित उज्जवलकान्ति हिमान्युपर्युपविवेश हिमालयकन्यया ।। 2/29

पक्षियों के कलरव का अलंकारमय प्रकृति का स्निग्ध चित्रण देखिये –

खगकलरव दम्भात् कीर्त्तनंवा प्रभातं ससुखशयनपृच्छां वाकरोद् बन्दिवृन्दम् ।

कृतिनिकरमशेषं नैत्यिकं सा विधाय परममवहितात्मा सैन्यसज्जां चकार ।। 19/4

पृष्ठ भूमि के रूप में –

पृष्ठ भूमि के रूप में कवि का प्रकृति चित्रण का मनोहारी रूप देखें –

अधिजलं विहसन् विहसन् यदा कुमुदिनी कुलवान्धव आपतत् ।

निरसने निरतो निजकालिमप्रसरणस्य किमित्य बदंजनाः ।। 2/13

चन्द्रमा हंसता हंसता कुमुदनियों से युक्त जल में आ गिरा है क्या यह अपनी कलंककालिमा के प्रक्षालन हेतु ऐसा कर रहा है

इस प्रकार प्रस्तुत काव्य में प्रकृति के पर्वतीय अंचल में पोषित यह महाकवि सुबोध चन्द्र पन्त का प्रकृति चित्रण अतीव मनोहारी, मोहक विभिन्न रूपों में प्रस्तुत हृदयावर्जक, पाठकों को आकर्षित करने वाला है।

रस –

रस काव्य की आत्मा है जिस प्रकार से मानव जीवन में वाह्य उपकरणों के साथ ही साथ प्राणप्रत्व अर्थात आत्मा को भी अत्यधिक महत्व प्रदान किया जाता है ठीक उसी प्रकार से काव्य में रस को। इस प्रकार रसहीन काव्य प्राण हीन शरीर के समान है। जिस काव्य में रस का अभाव हो वह नीरस एवं सारहीन ही कहा जाता है। यह निश्चित है कि नीरस काव्य हमारे चित्त चंचरीक को उतना आकर्षित नहीं करता है जितना कि रस से ओतप्रोत काव्य ।

संस्कृत साहित्य काव्य में प्रायः सभी साहित्यकारों ने रस की महत्ता को स्वीकार कर उसे सर्वोच्च स्थान दिया है। इस प्रकार रस की महत्ता में किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं । रस युक्त वाक्य को

काव्य मानते हुये आचार्य कविराज विश्वनाथ ने लिखा है –

" वाक्यम् रसात्मकम् काव्यम्[1] "

तैत्तरीय उपनिषद् में कहा गया है –

" रसो वैः सः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति " !

इसी प्रकार भगवान वेदव्यास[2] ने रस को ही काव्य का प्राण कहा है तथा महर्षि वाल्मीकि[3] काव्य तो करूण रस के रूप में अद्भुत हुआ । जिसे लौकिक साहित्य का प्रथम छंद कहा गया है। पंडित राज जगन्नाथ[4] ने भी रस तत्व की महत्ता को स्वीकार किया है।

रस को आचार्यो ने ब्रह्मानंद सहोदर माना है। आचार्य भरतमुनि ने 'विभाववानुभाव'[5] इत्यादि सूत्र में रस निष्पत्ति के स्वरूप का निरूपण किया है। आचार्य मम्मट ने काव्य प्रकाश में रस निष्पत्ति का निरूपण इस पंक्तियों में बताया है –

कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च ।

रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि चेन्नाट्यकाव्ययोः ।। 27

विभावा अनुभावास्तत् कथ्यन्ते व्यभियन्ते व्यभिचारिणः ।

व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः ।। 28

साहित्य दर्पण का कथन भी इन्हीं का अनुसरण करता है।[6] भामह, दण्डी आदि आचार्य रस को

---

1. *साहित्य दर्पण - 1/3*
2. *"वाग्वैदग्ध्यप्रधानेऽपि रस एवात्र जीवितम् " ।। अग्निपुराण*
3. *मा निषाद प्रतिष्ठांस्त्वंगमः शाश्वती समाः।*

   यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।। रामायण
4. *रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम् ।*
5. *विभावानुभाव व्यभिचारीसंयोगाद्र सनिष्पत्तिः*
6. *विभावेनानुभवेन व्यक्तः सञ्चारिणा तथा।*

   रसतामेति रत्यादिः स्थायिभावः सचेतसाम् ।। साहित्य दर्पण (3.1)

   कारन-कार्य सञ्चारिरूपा अपिहि लोकतः ।

   रसोदबोधे विभावाधाः कारणान्येव ते मताः 3/13

अलंकार के माध्यम से देखते रहे तथा वामन ने रस को अलंकार के क्षेत्र से बाहर निकाल उसे गुण क्षेत्र में रखा है। आचार्य आनंद वर्धन ने रस को व्यंग्य मानकर उसे काव्य का प्राण स्वीकार किया है तथा आचार्य कुन्तक ने भी रस की उपादेयता को स्वीकार करते हुये कहा है –

" निरन्तर रस को प्रभावित करने वाले सन्दर्भ के द्वारा वाणी जीवित रहती है कथा मात्र से नहीं।" भोज ने तो रस को एक ओर अखण्ड बताया है किन्तु श्रंगार को रस राज के नाम से अलंकृत किया है यद्यपि पन्त जी का महाकाव्य वीर रस प्रधान काव्य है तथापि आपने वीररस को प्रमुख रखते हुये करूण, श्रंगार, रौद्र भयानक, वात्सल्य आदि रसों का भी अति सहजता के साथ संयोजन किया है। आपकी संयोजन कला सर्वथा अभिनन्दनीय है। आपने कविता कामिनी को सर्वथा सरस रूप में व्यक्त किया है।

पन्त जी ने विषयानुकूल मृत्युरूपेण वीर रस को अंगीरस के रूप में प्रस्तुत किया है, सर्व प्रथम उसकाही वर्णन करना अनुचित न होगा।

वीर रस

वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है, तथा कार्य करने में (आनन्दपूर्ण) स्थिर उद्योग का नाम उत्साह है।[1]

यदि जाति, धर्म, देश की रक्षा के लिये उत्साह वीर न हो, सत्य आदि की रक्षा में रत यदि उत्साह का अभाव हो तो मानव समाज की प्रगति ही असंभव हो जाये । यही कारण है कि विश्व के सभी महान काव्यों में वीर रस का प्रमुख रूप से वर्णन मिलता है। 'रामायण' 'महाभारत' हिन्दी का प्रथम महाकाव्य 'पृथ्वी राज रासो' पाश्चात्य साहित्य के प्राचीनतम काव्य 'इलियड' तथा 'ओडेसी' में वीर रस अपनी पूर्णता के साथ वर्णित हुआ है।

वीर रस के उद्रेक के लिये कवि ने इतिहास की उन प्रसिद्ध घटनाओं को अपना विषय बनाया है जिनके स्मरण मात्र से ही भारतीय युवक का हृदय उत्साह एवं शौर्य से परिपूर्ण हो जाता है। वीरता और उत्साह की प्रतिमूर्ति का एक उदाहरण देखिये –

वीराष्टवर्षा प्रबला किशोरी मनूरधिस्थाय हयं दृढात्मा।

तं धावितुं शीघ्रममोचयत्सा समुद्यतान्तमृगयाक्रियार्थम् ।। 5/53

---

1. *कार्यारम्भेषु संरम्भः स्थेयानुत्साह उच्यते । काव्य प्रकाश*

आठ वर्ष की आयु में शिकार आदि के लिये जाना वास्तव में इस बात का प्रतीक है कि महारानी लक्ष्मी बाई में बचपन से ही उत्साह कूट-कूट कर भरा हुआ था। महारानी लक्ष्मी बाई की वीरता के ऐसे अनेकों श्लोक हैं जो उनकी वीरता तथा बुद्धि चातुर्य के परिचायक है। देखिये -

बुभोज यो विप्रवरस्य सिंह उस्त्रां सदुग्धां युवतीं सुहिस्त्रः ।

तं कुन्तमात्रेण यमस्य गेहं नयामि दन्तांश्च भनज्मि तस्य ।। 5/54

वास्तव में वीर रस का कवि द्वारा अति सुन्दर प्रयोग किया गया है। उदाहरणों को पढ़ने से किसी भी मानव के हृदय में वीरता उत्साह का संचार हो जाता है।

महारानी लक्ष्मी बाई तो वीर और आदर्श थी ही किन्तु उनके सहयोगी भी वीरता और युद्धादर्श में किसी की रानी नही रखते थे। जैसे -

हा हन्त तात्याः प्रबलाः शतध्न्यः कालं रिपौ रक्तमपातयन् याः ।

व्यावर्त्तमाना निजमेव सैन्यं ता आपदो हाव किरन्त्यभीक्ष्णम् ।। 13/68

यहां वीर रस का प्रबलवेग धरती एवं गगन को झकझोर देने वाला है। तोपें शत्रुओं पर काल की तरह पड़ती हुयीं उनका रक्तपान कर रहीं है। पन्त जी का युद्ध वर्णन बड़ा ही सजीव एवं स्वाभाविक है। युद्ध के उत्साह से युक्त सेनाओं का रण प्रस्थान हथियारों का धात प्रतिधात शूरवीरो का पराक्रम और कायरों की भयपूर्ण स्थिति आदि दृश्यों का चित्रण अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है। लक्ष्मी बाई की वीरता के श्लोक का अवलोकन करें -

गोलेषु भीषणंतरेष्वहसं शतध्नश्चिक्रीड देवि गुलिकानिवहैर्भुशुण्डयाः ।

निस्त्रिंशकुन्तविशिखाग्रशतशश्च सेहे वक्षस्यनागतभयं सहसा विमुच्य ।। 12/95

युद्ध का अत्यन्त लोमहर्षक वर्णन है तथा झांसीश्वरी लक्ष्मीबाई के शौर्य का जो वर्णन किया गया है। वह अत्यन्त हृदय ग्राही है तोपों और गोलियों के बीच खेलना किसी साधारण मनुष्य का काम नहीं यह किसी असाधारण वीर व्यक्ति की ही विशेषतायें हो सकती है।

युद्ध से भयभीत न होते हुये रानी अपने पूर्व वीर महापुरूषों को स्मरण कर युद्ध क्षेत्र में वीरगति पाना ही श्रेयस्कर समझती है -

यथा - *संग्राम सिहस्य च राष्ट्रमेतत्प्रताप सिंहस्यः च पुण्यभूमि : ।*

वीराग्रगामी शिवराज एतदरक्षां स्मरन् वै सुखवञ्चितोभूतः ।। 13/87

अपिच – *युद्ध्वा म्रियध्वं च दिनेशविम्बं भित्वानुसन्धत च लोक मुच्चैः ।*

शिष्टाश्च यावत पतिताघ तावद् दत्तारये क्रन्दनशोक मृत्यून ।। 13/88

यूँ देखा जाये तो सम्पूर्ण ही काव्य रानी की वीरता का परिचायक है तथा उसके सैनिकों के उत्साह सहयोग और वीरता का भी। घमासान युद्ध और शस्त्रों की कुशलता उस समय के वीरों की सानी नहीं रखती थी। वीरों का युद्धचातुर्य उनकी अपनी विशेषता थी। युद्ध कौशल का एक उदाहरण देखिये वीरता के साथ दोनों सेनाओं में भयंकार युद्ध होता है।

सैन्य द्वयं धट्टित्वन्महामदं सङ्ग्राम आश्वेव बभूव भीषणः ।

प्राणा निरस्ता अभवन् प्रियाः परं व्यापदयेहीति वितेनिरे रवाः ।। 14/74

क्रान्ति का बीज प्रस्फुटित करने वाली महारानी लक्ष्मी बाई की वीरता का रमणीय रूप देखें –

खड्गकर्त्तरिकया नृपांगना लूनशत्रुदलजंगलावनिः ।

आत्मसैन्यसहिता कुशलात्मा पारमाप सरितो मुदाधिका ।। 16/56

पिता मोरो पन्त को फॉसी दिये जाने पर शत्रुओं के विनाश हेतु अपने हृदय की वीर ज्वालाका विस्फुरण अपने ओजमय, वीररस से ओत प्रोत इन कथनों में दिया है जो भारतीय इतिहास में अप्रतिम है।

ज्वालारंगक्रीड़ां समरज्वालावलौ करिष्यामि ।

दासत्वाकं घोरं त्यागाब्धौ मज्जयिष्यामि ।। 18/44

यह एक वीरकाव्य ग्रंथ है इस कारण इसमें वीरों का आदर्श रूप अत्यन्ता भावमयी वाणी में देखने को मिलता है जिनमें रानी युद्ध के लिये तत्पर दिखाई देती है।कुछ और श्लोक "भीमस्य सौ देखें –

हन्त......., नृत्यवत्यरे खरसि......, आदि

सुन्दर और मुंदर को युद्ध के भयंकर वातावरणमें उत्साहित करती रानी के इन शब्दों को देखें –

शक्रोपि चेदभिपतेत्तरसा, क्षणप्रभा सासुषु........., खड्गाझणत्कारभरं........, तूष्णीशतध्नीं कुरू.... .आदि श्लोको में वीररस का उत्कृष्ट रूप हमारे समक्ष उपस्थित होता है। युद्ध के अतिरिक्त वीरो के हृदयों के गम्भीरतम् भावो का सुन्दर विश्लेषण किया गया है इस प्रकार वीर रस के चित्रण में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी को अनुपम सफलता प्राप्त हुयी है। इस काव्य को पढ़ने से पाठक के मानसपटल पर एक ऐसे वातावरण की सृष्टि शनैः शनैः होती जाती है जो वीर रसानुभूति कराने में सर्वथा समर्थ है। वीर रस के अनुकूल कथनों के साथ पंत जी ने अपने भावों को ऐसी सशक्त और ओजपूर्ण भाषा

में व्यक्त किया है कि उसका तीव्र प्रभाव हृदय पर पड़ता है युद्ध के समय के इस वीर रस से परिपूर्ण श्लोकों को देखिये –

क्षणात् सितांगः शरतुल्यमाप्नुवन् नृपां न योद्धुं समयागमन्नहो।

शिवा भवेयुः शतसंख्यका अपि कदापि वीरा न मृगान्तकस्त्रियः ।। 20/109

अपिच – *त्वं सागरोसि यदि दस्युपते प्रचण्डो धक्ष्यामि बाडव इवाग्निरहं सुरौद्रा ।*

सिंहोसि चेदधम लुण्ठक भक्षयिष्याम्यष्टाङ्घ्रिवद् हि रुधिरं प्रति साभिलाषा ।। 12/16

करुण रस –

वीर रस के बाद करूण रस में कवि सर्वाधिक रमा हुआ प्रतीत होता है। करूण रस का स्थायी भाव शोक है। सर्वप्रिय वस्तु के नष्ट होने, प्रिय व्यक्ति के पीड़ित होने या गत होने आदि से जो क्षोभ या क्लेश हृदय को होता है उसी की व्यंजना से करूण रस की उत्पत्ति होती है।[1] महाकवि मवभूति के अनुसार करूण रस ही एकमात्र रस है।[2] इस महाकाव्य के दसवें, पन्द्रहवें, सत्रहवें, अठारहवें आदि सर्गों में करूण रस उद्भूत हुआ है। दशम सर्ग तो करूण रस का मानो अगाध सागर ही है। करूण का प्रथम दृश्य हमारे समक्ष राजा गंगाधर की मृत्यु के समय उपस्थित होता है। रानी के हृदय में व्याप्त शोकातिरेक का बड़ा मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। उदाहरण द्रष्टव्य है –

अयिस्वामिन् सहायो हा कोपशिस्टोद्यमामकः ।

दत्तवानसिमय्यद्य जीवनावधि रोदनम् ।। 10/1

वैधव्य यापयन्त्यन्या धैर्यं प्राप्यावलम्बनम् ।

नीतवांस्तदपि प्रेयन् समं धिग्भवितव्यताम् ।। 10/2

अपिच –

हा राज्येन किमुर्व्या किं बन्धुभिः किं महाशय ।

सह त्वयैव भूता मे समाप्तिः सौख्यसन्ततेः ।। 10/3

महारानी लक्ष्मीबाई के साथ साथ सारा झांसी राज्य शोक में डूब जाता है और सम्पूर्ण

---

1. *एको रसः करूण एव निमित्त भेदाद, भिन्नः पृथक् पृथगिवाश्रयते विवर्तान ।*

2. *आवर्तबुदतरङ.गमयान् विकारानम्भो यथा सलिलमेव तु तत्समस्तम् ।। उत्तर रा0*

भवभूति

वातावरण करूणा मय बन जाता है। महारानी शोक संतप्त हो उठती है। करूण से ओत प्रोत इस श्लोक का अवलोकन करें –

भविष्येहो क आगत्य सहायो भविता मम ।

अगच्छत्वं दिवं नाथ कृत्वानाथामतीव माम् ।। 10/6

राजा की मृत्यु के पश्चात महल में हाहाकार मच जाना, जिस रानी को कभी किसी ने विहवल नहीं देखा था उसका करूणा के बांध तोड़े जाना आदि करूणमय उदाहरणों से पाठकों का हृदय भी पढ़ते– पढ़ते करूणा में डूब जाता है यथा –

वैधराजः प्रतापोयमाशानिर्बन्धतश्युतः ।

पौनःपुन्येन शून्येक्ष आकाशमवलोकते ।। 10/22

अपिच –

श्रृंगारं मादकं त्यकत्वा पजनेशो महाकविः ।

म्लानवेशो ब्रबीत्यार्त्तः करूणः केवलो रसः ।। 10/3

उपर्युक्त उदाहरण करूण रस के उच्चतम् उदाहरण है। मोती बाई, जूही, खुदाबख्श, झलकारी, रामचन्द्र, सुन्दर–मुन्दर आदि का शोकाकुल हो जाना आदि वर्णन में पन्त जी को अदभुत सफलता मिली है।

वीररस प्रधान इस ऐतिहासिक महाकाव्य का दसवां पन्द्रहवां, अठारहवां आदि सर्ग में उत्पन्न शोक तो करूण रस की अजस्त्र स्रोतस्विनी ही है।

तब करूण रस अत्यन्त गम्भीर और मर्मस्पर्शी बन जाता है जब एक हाथी जो राजा को अति प्रिय था तथा ग्रंथागार आदि के शोक से संतप्त हो जाने का वर्णन पन्त जी द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

स सिद्धबकसाख्योयं निःसहायो गजेश्वरः ।

रोदितीवाम्भि वक्त्रं हा यौष्माकीणं विलोकयन् ।। 10/61

राजा गंगाधर के मृत्यु शोक से झांसी के जीवेतर पदार्थ भी शोकाभिभूत हो जाते है। रंग, ग्रंथागार, नभ, भूमि, पृथ्वी, कूप आदि के वर्णन में अत्याधिक सजीवता एवं कुशलता मुखरित हो उठी है।

रंगोरोदिति हन्ताद्य ग्रन्थागारं च रोदिति ।

रोदित्युर्वी नभो रोदित्यकूपारश्च रोदिति । 10/66

इसमें एक अपूर्व भाव गम्भीर्य है और करूण का चरमोत्कर्ष है दशमसर्ग करूण रस की अजस्त्र स्रोतस्विनी ही है। पति वियोग से मूर्छित रानी का कारूणिक चित्रण अति सुन्दर बन गया है –

तत्पश्चात्सा रोदनक्षाम कण्ठा धोरां मूर्च्छा द्राक् समासादयन्ती ।

बालापत्तद् भूमिपृष्ठे मुहूर्त्ताल्लेभे संज्ञां क्रोधरक्ताननाभूत ।। 10/67

सर्ग 15, 17, 18 के भी कुछ श्लोक करूण रस के उत्कृष्टता के परिचायक है ।

नियतो बत शोक एव मे शमनं हन्त मयास्ति दुर्लभम् ।

नियतौ मम शोक एव हा तदुदन्तस्तदवेक्षणं ध्रुवम् ।। 17/1

अपिच–

प्रथमं सुत औरसो गतः कृतमर्मस्थल कृन्तनो बहुः ।

पतिराप ततः परासुतां निहतिः सापि बभूव दुर्दमा ।। 17/33

X X X X X X X X X

पश्य हन्त पतिहीनतां गता वर्त्तते सुबदनानलङ्कृतिः ।

सुनूरप्यरहयत्स औरसो लब्धवानहित तामिमां प्रति ।। 18/11

करूण की जैसी तीव्र व गम्भीर एवं मर्मस्पर्शिनी व्यंजना इन समस्त श्लोकों में हुयी है उससे स्पष्ट है कि वीर रस के साथ – साथ कवि को करूण में सफलता प्राप्त हुयी है अल्प शब्दों के माध्यम से ही पन्त जी ने गहरे शोक को उद्भूत किया है। अपने हृदय की सूक्ष्म से सूक्ष्म और कोमल से कोमल अन्तर्दशा का मार्मिक चित्रण किया है जिसमें आपको अपूर्व सफलता मिली है।

करूण रस के उपक्रम में चिन्ता का चित्रण स्वाभाविक ही है। युद्ध में झांसी की हुयी दुर्गति से रानी का हृदय रोपड़ता है। पन्द्रहवें सर्ग में भी करूण रस अत्यधिक प्रभावी हुआ है। इस करूणमय दृश्य का अवलोकन करें –

गगन हृदयं भेदं भेदं जना व्यलपन्बहु ।

वसन निवहं छेदं छेदं हताः प्रतिरोम ते ।।

पर विकलतां तां योपश्यत्स एव जनो मनाक् ।

पुलकमितं कुर्वाणां तां व्यथां कथयेत्पराम् ।। 15/4

करूण से व्याप्त यह श्लोक देखें –

रूदननिरतं शोभां काश्चिद् दधार विलोचनं ।

करूणमरूणं लोकं शत्रुं विलोक्य मुहुर्मुहुः ।

हिमकण इव श्वेताम्भोजेबभूव विराजितं ।

जलमिव जपापुष्पे ग्रुत्से वभावति मंजुलम् ।। 15/13

अनेक दृश्यों में करूण का अविरल प्रवाह है –

पन्द्रहवें सर्ग से ही – *नयनयुगलं व्यावृत्तं द्रांझ्भो वहदार्द्रतां ।*

तममृगयत भ्रान्तभ्रान्तं निरन्तरमीश्वरम् ।।

वितरति धरा घाते घातं यदैव निरन्तरं ।

भवति भुवने श्रेष्ठालम्बस्तदैककमम्बरम् ।। 15/16

इस प्रकार ऐसे कई श्लोकों के दर्शन होते है जो करूणा की दृष्टि से अति सुन्दर एवं हृदयग्राही बन पड़े है।

वात्सल्य रस –

कवि ने वात्सल्य रस का भी संक्षिप्त किन्तु अनूठा वर्णन किया है। बात्सल्य रस की सुन्दर व्यन्जना हमें इस काव्य में देखने को मिलती है डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने मनू के शैशव का अति रमणीय वर्णन किया है – क्योंकि वात्सल्य रस में बालकों के सौन्दर्य उनकी तुतलाती वाणी एवं आलौकिक आनन्द दायिनी बाल क्रीड़ाओ का वर्णन होता है उदाहरण दृष्टव्य है –

स्वसा जाता स्वासा जाता मम् कीदृक् प्रिय प्रिया ।

एहि पश्य त्वमप्यत्र सर्वभिन्नेयमस्त्यहो । 3/1

पन्त जी ने मनु के अंग की शोभा का बड़ी तन्मयता से वर्णन किया है।

प्रातः काले जनन्यत्र योसावायाति खञ्जनः ।

शोभां तल्लोचने अंड्क्त एतस्या नेत्र सन्निभाम् ।। 3/8

अपिच –

कले शब्दे मुखाद् यामेर्निर्गतिमृतमाप्यते ।

सिच्यते येन मुक्तात्मा हृष्टः पृथ्व्याः कणः कणः ।। 3/34

पन्त जी ने वात्सल्य रस का सूक्ष्म किन्तु अनूठा रूप प्रस्तुत करने का समीचीन प्रयास किया है।

चंचल और क्रीड़ाशील बालक को देखकर जो भी आह्लादकारी आनन्द होता है उसका पाठकों को आभास कराने में पन्त जी को सफलता मिली है। बालक की साधारण गति साधारण चेष्टायें भी वास्तव मे ममत्व उत्पन्न कर माता पिता को आनन्द देती है। इस स्नेहमय श्लोक को देखें –

वत्सलेन हृदयेन स मोरोड्गुलिं निहितवान् वदनेस्याः ।

आदिदेव युवनाश्वतनूजं पाययन्निव पयः सुरराजः ।। 4/41

अपिंच –

क्रीडमाप्य जननेरनु तत्सा बालिका प्रसवितारमधावत् ।

आगता पुनरपि प्रसवित्रीं दिव्यतामुपजहार सुवक्त्रा ।। 4/44

पन्त जी के वालसुलभ भावो एवं चेष्टाओं के चित्रण भी अपने ढंग के अनोखे है यथा –

सा क्रमेण मृगपोतसमाना जानुयुग्मचलनेन विरेजे ।

कृष्यते स्म धृतचुम्बनशब्दा व्यस्मरत्किमपि नव्यमवेक्ष्य ।। 4/43

जिस प्रकार हिन्दी कवि सूरदास ने कृष्ण के शैशव और यौवन को चुनकर उनका वर्णन किया । उसी भांति पन्त जी ने भी बाल सुलभ क्रीड़ाओं एवं बाल मनोविज्ञान का मनभावक चित्र पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का सफल प्रयत्न किया है – इस मनभावक श्लोक को देखिये –

कुट्टिमोपरि विलोक्य चलन्ती विम्बमास्यनयनाड्घ्रिकराणाम् ।

आपतत्कमलसंहतिबुद्धयातत्र सायतत धर्त्तुमनल्पम् ।। 4/52

अपिच –

कृष्णएव कृतबालकलीलो बालिकात्वमधिगन्तुमतीहः ।

लीलया क्षितितले धृतमोरौपुत्रिकातनुरवातरदत्र ।। 4/66

वात्सल्य रस से ओत प्रोत इस महाकाव्य में और भी अन्य उदाहरणों का उत्तम समन्वय किया गया है जैसे –

दोलिकंस्म विटपे.....[1], ताडयन्त्यतितरां चरणाब्जं........[2], वीक्ष्यश्रृंगभुत चित्रपतड्.गतं.......[3], कोकिलं मधु विडम्बयति........[4], सा प्रसूः स जनकस्य........., देवकी व्रजभुवा वसुदेव ....,

---

1. 4/50, 2. 4/54, 3. 4/60, 4. 4/65, 4/69, 4/70 झांसीश्वरी चरितम्

आदि अनेक श्लोको में पन्त जी ने तत्परता, मनोहारिता, एवं सरलता के साथ बाललीला का चित्रण किया है बालमनु की एक–2 चेष्टाओं के चित्रण में आपने अपने विद्वता चातुर्य एवं सूक्ष्म निरीक्षण का परिचय दिया है वात्सल्य के प्रयोग में किसी प्रकार की न्यूनता के दर्शन नहीं होते है वीसवे सर्ग का यह श्लोक द्रष्टव्य है–

बभूव झांस्याः स्मरणेरता सतीप्रजा निरीक्ष्याभवदेकवत्सला ।

व्यलोकयंस्ता अपि तां निरन्तर नृपां सदेहां ममतां तपस्विनीम् ।। 20/44

इसके अतिरिक्त स्थान–स्थान पर सभी रसों का परिपाक यदा कदा कवि ने अपनी प्रतिमा रूप में किया है।

वीभत्स – इसका स्थायी भाव जुगुप्सा है किसी धृणास्पद वस्तु के देखने से उत्पन्न होने वाला धृणा भाव ही वीभत्स या जुगुप्सा कहलाता है। झांसीश्वरी चरितम् में युद्ध वर्णन के कुछ दृश्यों में हमें इस रस के दर्शन होते है –

वभार रुण्डं कियतामसृंगनदी पपात मुण्डं कियतां न तर्कितम् ।

दधेसशाटी द्विषतां क्षता तनुस्तथा बभासे समरो महारुचः ।। 20/87

अपिच –

करेणगृध्रं : निहतेषु कोप्यहन्ननर्त्तयत्कश्चिदसिं विभाजितम् ।

विनष्टसंज्ञोपि जगर्ज कश्चन ददर्श कश्चिच्च निमेषनिर्धनम् ।। 20/88

ततो वहद्रक्ततरङ्गिणी परा बभूव यस्याः पुलिनं भटावलिः ।

भ्रमिर्वरांग लहरी विभूषणं तरीः शवोथो शफरी दुरासदः ।। 20/93

भयानक रस –

युद्ध वर्णन के भयानक दृश्यों में कवि ने इस रस की सुन्दर अभिव्यक्ति की है। इसका स्थायी भाव भय है। किसी भीषण बस्तु के कारण चित्त में जो विकलता हो जाती है वही चित्तवृत्ति भय कहलाती है।[1] वीररस के सहायक भयानक रस का काव्य में अच्छा परिपाक हुआ है। युद्ध वर्णन के श्लोकों में (द्वादश सर्ग में) यह रस उदीप्त हुआ है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं –

---

1. रौद्रशक्त्या तु जनितं चित्तवैक्लव्यदं भयम् । काव्य0

आवर्त्तघातसमुदायमदर्शयत्सा कल्लोलविक्रममथोच्चतमं ततान ।

तीरः प्रहारमदितां च तदुत्थरावनिर्भर्त्सनामविरलं प्रकटीचकार ।। 12/32

वेतवा में भयंकार वर्षा के कारण उठ रही जल भंवरों से सम्पूर्ण वातावरण भयभीत हो रहा है क्योंकि उठती धनी भंवरों के कारण आगे जाना कठिन है तथा रास्ता भी साफ नहीं दिखता । भयानक रस का ही एक और उदाहरण देखें –

अपिच – *आलोक्य तां भयमयीं नृप पत्न्यवस्थां तस्थौः विचारनिरता निमिषद्वयं सा।*

स्तब्धीबभूंवतुरुदीर्णमये अकस्मात्सख्यौ तु चित्रमवलोक्य विचित्रमेतत् ।। 12/33

वेतवा की धार पुंज के ऊपर पुंज सी दिखलाई पड़ती थी। क्रम अभंग और अनन्त सा ,तथापि रानी और उनकी सखी भयानक संकट का सामना करते हुये निकल जाती है। युद्ध के ऐसे कई वर्णन हैं जिनमें भयानक दृश्य हमारे समक्ष उपस्थित होते है। जब सैनिकों में धोर धमासान युद्ध होता है तो युद्ध की मारकाट वीरों की हुंकार भगदड़ चीत्कार आदि की सजीवता कवि के सशक्त कौशल वर्णन का प्रमाण है।

कोलाहलं स्याद् धननाद घोरं शत्रूव्रजेसुव्यसनं भवेद् द्राक् ।

पश्याथ तात्याः सुसमीप एवं पश्याथाः कुन्तान् स्फुरतश्च खड्गान् ।। 13/28

ऐसे वर्णनों में भाषा धारा प्रवाहिक रूप लिये चलती है और जो गति की तीव्रता होती है उसकी पुष्टि इस उदाहरण से हो जाती है वीर रस के सहायक भयानक रस का डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी द्वारा अच्छा परिपाक किया गया है। भयानक रस से युक्त युद्ध का यह दृश्य देखिये –

तत्र श्मशान विजहास भीतिदं झांसी वभौ यत्र समृद्धशालिनी।

व्याप्नोत्कुमारांस्तरुणान् भयं ह्रतिः प्रौढांश्च वृद्धान् मरणं प्रमत्तता ।। 14/68

वास्तव मे झांसी में हुये उस भयानक युद्ध से सम्पूर्ण झांसी शमशान बन गयी । समस्त जन समुदाय भयभीत हो गया। इन श्लोकों में पन्त जी के वर्णन अत्यन्त सजीव हो उठे है। पढ़ते ही सम्पूर्ण चित्र आंखो के समक्ष उभर आता है । आपका वर्णन कौशल उत्तम रहा है। एक और उदाहरण देखें –

पिशाचिनी संड्घ उपागमत्ततः, समुण्डन्त्रविभूषान्तरः ।

ननर्त्त हर्षध्वनिना रणांगणे विडम्बयन्नायुधचालनैर्भटान् ।। 20/92

अपिच –

ततोवहद्रक्ततरंगिणी परा वभूव यस्याः पुलिनं भटावलिः ।

भूमिर्वरांगलहरी विभूषणं तरीः शवोथो शफरी दुरासदः ।।

इन्न श्लोकों का अवलोकन करें –

ततश्च भेर्यः स्तनयित्यनुगर्जना मुदाम्यहन्यन्त रणे तथानकाः ।

भटाः शतध्न्यो जगृजुः स्वमुत्तरं ददौ विलूयासिररि वज्रानननम् ।। 20/52

अपिच – *सुकातरा अस्यधिभूमिपाबलं वभूवरङ्गारणतो निवर्त्तने ।*

ददाति नेता प्रथमं यदा शिरस्तदा भटाः स्युर्न कथं भयाधनाः ।। 20/57

इसी भांति, पश्यारि सैंनामनु........, व्याप्तं महापापमदो......, आदि ऐसे अनेक उदाहरण है जिनमें युद्ध के भयानक दृश्यों का कवि द्वारा अति कुशलता के साथ वर्णन किया गया है झांसी की दुर्दशा का एक भयानक दृश्य देखिये –

कमलनया दृष्ट्वा झांस्यां धगद्धगदुज्ज्वलद् ।

हुत वह शिखां सव्यामोहापतद् मथितान्तरा ।।

अवददधिकोन्मत्ता घातं निपातय मय्यरे ।

सरल सरलान् निर्दोषान् हंस्यहो अधिता रिपो ।। 15/11

रौद्र रस –

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने सहायक रस के रूप में रौद्र रस को भी प्रस्तुत किया है। रौद्र रस का स्थायी भाव क्रोध है। विरोधियों के प्रति हृदय में जो तीक्ष्णता या प्रतिशोध का भाव उत्पन्न होता है वह क्रोध कहलाता है।[1] भयानक मारकाट, संग्राम आदि के वातावरण से इसकी उदीप्ति होती है यथा–

तन्वत्युदग्रं रूचिमण्डलं परं क्रोधेन वाष्पाविललोचनाम्बुजा ।

सा चिन्त्यामास महाछ्लं नृपा तत्कल्पना हा सकलैव चूर्णिता 14/69

महारानी लक्ष्मीबाई के पिता मोरोपन्त को दी गयी फांसी से जो क्रोध उनके हृदय में उत्पन्न हुआ उससे प्रस्फुटित इन्न तीन वाक्यों को देखें –

ज्वाला रंगक्रीड़ा समरज्वालावलौ करिष्यामि ।

---

1. प्रति कूलेषु तैक्ष्ण्यस्यावबोधः क्रोध इष्यते सा0 दर्पण 3.177 आ0 विश्वनाथ

दासत्वाङ्कं घोरं त्यागाब्धौ मज्जयिष्यामि ।। 18/44

अपिच –

खडगं श्रृंग पूर्ण ज्वालारंगेण संविधास्यामि ।

भरतक्षितिशिखि चूर्णं शत्रुभ्यो दर्शयिष्यामि ।। 18/45

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

कृत्रिममग्नेश्चूर्णं किं मेहं नैव तत्प्रयोक्ष्यामि ।

अस्यार्चिस्तापेरीन् क्वाथत्वं साद्य नेष्यामि ।। 18/46

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

नैसर्गिकमाग्नेयं चूर्णं शत्रून् प्रदर्शयिष्यामि ।

तद्विहितानां वृद्धि न्यक्कराणां प्रदाष्यामि ।। 18/47

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

शिरस्य सीनामसहन्त ये क्रुधं समौनिता वक्षसि कुन्तताण्डवम् ।

त एव चीत्कारमथाद्य चक्रिरे न मोहमाया मतिगोचरोस्त्यहो ।। 20/91

मृत्यु का रौद्र रूप देखें – किस तरह तलवार का भोजन बन कर लोग इस रूप का दर्शन कर रहे थे। –

सिततनुभृतां भूता लक्षं जना असिभोजनं ...

वसनरहितीकृत्यानेके कृता हतिर्जजराः ।

सभय वदनं कश्चिज्ज्वलाध्वजं स्म निरीक्षते,

तदुपरि तथा रौद्रां मृत्यो र्विलास सकलां तताम् ।। 15/3

श्रृंगार रस –

श्रृंगार रस को प्रायः रसराज कहा जाता है क्योंकि मनुष्य मात्र के हृदय में इसका प्रभाव अन्य रसों से अधिक स्थायी होता है। इसके दो पक्ष है। – संयोग श्रृंगार और विपलम्भ श्रृंगार । रति इसका स्थायी भाव होता है। मन के अनुकूल पदार्थो में सुखानुभूति ही रति कहलाती है – रतिर्मनोनुकूलऽर्थे मनसः प्रवणायितम् ।।

यह सत्य है कि श्रृंगार रस सब रसों का राजा है और जीवन का समग्रचित्र प्रस्तुत करने में सक्षम

है बल्कि यों कहना चाहिये कि श्रंगार के बिना जीवन के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है किन्तु महाकाव्य की परम्परा का निर्वाह बड़ी ही कुशलता से करते हुये डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने एक ही रस वीर रस को प्राथमिकता दी है अंगी रस के रूप में भयानक रौद्र आदि का परिपाक हुआ है वीर रस प्रधान होने से श्रंगार रस का दर्शन सर्वप्रथम तृतीय सर्ग में महारानी लक्ष्मीबाई के सौन्दर्य के नखसिख वर्णन में होते हैं।

पन्त जी ने मनु के सौन्दर्य का वर्णन अति सूक्ष्म किन्तु मनोहारी किया है । श्रंगार वर्णन में आपका यह रसमय वर्णन देखिये –

रत्नपट्टिकया तुल्यं भालं भ्रूर्धनुराकृतिः ।

कपोलौ स्वर्णपत्राभौ कर्णौ मन्थजकोमलौ ।। 3/31

कवि ने नायिका के रूपलावण्य का अत्यन्त मनोहारी चित्र खींचा है देखिये नायिका किस तरह से सौन्दर्य को प्राप्त है। मनु के ओष्ठ का वर्णन देखिये –

हारिणावरुणावौष्ठौ विम्बपल्लवसंचयौ ।

हासा भान्त्यत्र शम्पाया हिमस्योन्मेषणैः समाः ।। 3/32

नासिका शुक की चोंच के समान, गर्दन, भुजाओं, उंगली, वक्षस्थल आदि का वर्णन अत्यन्त ही रसाप्लावित बन गया है –

पातुं किं तं सुधासारमाकुलत्वं दधात्यसौ ।

नासिका शुकचंच्वग्रं वक्त्रे रत्यधिकं स्वसुः ।। 3/35

अपिच –

ग्रीवा कम्बुनिभा स्कन्धे मुखदर्शनमत्र्चभे ।

लसतोङ्गुलशाखाभिर्वल्लरीसन्निभौ भुजौ ।। 3/36

अम्बबक्षस्तथा चित्तमावर्जयति सोदरम् ।

भात्येषा स्वर्णमत्र्जूषा समनोरथहीरका ।। 3/37

आपका नखसिख वर्णन अत्यन्त ही सजीव बन पड़ा है। अतिक्रमण न करते हुये डा0 पन्त जी ने श्रंगार की विविध क्रियाओं का चित्ताकर्षण वर्णन किया है इन वर्णनों के पश्चात् श्रंगार का यम तम ही प्रादुर्भाव हुआ है।

शान्त रस –

काव्यारम्भ और काव्यान्त में कवि ने शान्त रस की निर्मल धाराको प्रावाहित कर अपनी रसाभिव्यन्जना का कौशल प्रकट किया है। सर्वप्रथम मंगलचरण में शान्त रस का मनोहारी रूप हमारे नेत्रयुग्म के समक्ष अपने स्वाभाविक रूप में उपस्थित होता है –

शक्तिः समस्तस्य भवस्य सर्वा या वर्त्तते प्रत्यणु जीवसंइधे।

लब्ध्वैव यद्भास्वरभावभीषन्नेत्रद्वयं भास्वरतां तनोति ।। 1|1

अन्तिम सर्गो के श्लोकों में से इस श्लोक को देखें –

तुभ्यं नमो हे जनयित्रि दुर्गे वक्षोविभेत्रि प्रसभं सुरारेः ।

तुभ्यं नमोदेवि जनित्री सीते तापस्य शापस्य सदा विजेत्रि।। 21/21

बिम्बविधान –

बिम्ब से तात्पर्य उस शब्द चित्र से है जो अपनी सम्पूर्णता के द्वारा किसी भाव या परिस्थिति अथवा रूप का चित्र पाठकों के समक्ष चित्रित करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार एक चित्रकार अनेक रंगो के माध्यम से अनेक दृश्यों को अपनी कुशलता से चित्रित करता है उसी भांति एक कवि भी एक दृश्य को उभारने के लिये एक उपकरण की तूलिका सी देते हुये जैसे दृश्यांकन करता है। इस प्रकार संवेदना को संप्रेषणीय बनाने में बिम्ब–विधान का महत्वपूर्ण योग होता है।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी भाषा के धनी है। आपकी भाषा अपनी संक्षिप्ता में बड़े ही सशक्त, प्रभावशाली बिम्बों का निर्माण करती है। अस्त्र शस्त्रों का यह बिम्ब ग्राही चित्रण देखियें –

खड्गा झणत्कारभरं वितेनिरे कुन्ताः खडत्कारमतीव भीषणम् ।

दधुः स्वणत्कारचयं फलान्यपि दोषो भदानामतितीव्रमस्फुरन् ।। 14/18

चित्र को पूर्णतः ऐन्द्रिय बनाने के लिये अर्थ–गर्भित शब्दों का चुनाव लय का लाघव विस्तार, यथोचित अप्रस्तुत योजना और लघु दीर्घ स्वरों का प्रयोग करना बिम्ब विधान की कुशलता को घोतित करता है। डा0 पन्त जी ने बिम्ब के अनेक हृदय ग्राही चित्रण प्रस्तुत किये है यथा –

द्राग डिण्डिमा वान्तडमड्डमद्रवा उच्चैरवाद्यन्त महाप्रति ध्वनि ।

भेराः प्रचण्डाः श्रुतिभैरवा द्रुतं नाम्नैव भीरुन् धृतभैरवान्व्यधान् ।। 14/13

गोलः शतघ्न्यः कृतधाँवधाँववाग्रे धाव धावेति जगाद सन्ततम्।

ऊचे भ्रुशुण्डेर्गुलिका गुड्डुंगुड्डुंशब्दैरये गुण्डय गुण्डय द्रुतम् ।। 14/14

प्रकृति के इस मनोहारी बिम्ब को देखें –

उत्पाट्यन्ति हृदयं वहुवेग युक्तं शम्पायुधानि वहलं स्फुरण वितेनुः ।

ध्वाना इव श्रुतिमुपेयुरमुं बधान जह्माशु तं गडगडायिततः प्रकामम् ।। 12/29
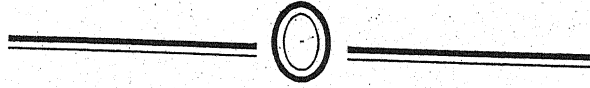
पंचम अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् पर पूर्ववर्ती महाकाव्यों का प्रभाव मौलिकता एवं अनुहरण

झांसीश्वरीचरितम् पर पूर्ववर्त्ती महाकाव्यों की रचनाओं का प्रभाव मौलिकता एवं अनुहरण

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने झांसीश्वरीचरितम् को इतिहास और कल्पना आदर्श और यथार्थ के सुन्दर समन्वय से परिपुष्ट किया है। इसमें वर्णित कथा ऐतिहासिक है किन्तु आपने अपनी प्रतिभा और कल्पना के सहयोग से उसे उत्तम कोटि के काव्य के रूप में खड़ा कर दिया है।

आपके काव्य के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि आपका काव्य कला और भाव दोनो ही दिशाओं में विकसित काव्य रहा है। आपका काव्य शिल्प कलातत्व एवं भावतत्व दोनों दृष्टियों से अनुकूल है।

कोई भी कवि हो वह अपने पूर्ववर्ती कवियों तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों से पूर्णरूपेण अस्पृष्ट नहीं रह सकता। अतः महाकवि सुबोधचन्द्र पन्त जी पर अपने पूर्ववर्ती महाकवियों तथा उनकी रचनाओं का कुछ प्रभाव स्पष्ट रूपेण दृष्टिगोचर होता है

आपके काव्य में कुछ पूर्ववर्ती महाकाव्यों का प्रभाव स्पष्ट रूपेण परिलक्षित होता है जिससे प्रतीत होता है कि आपने पूर्ववर्ती रचनाओं से प्रेरणा अवश्य ग्रहण की है जिन रचनाओं का प्रभाव आपके काव्य पर परिलक्षित होता है उनमें कालिदास का कुमार संभव, रघुवंश, छंदो पर कुछ मेघदूत का माघ कृत शिशुपाल वध, कुछ–कुछ भारविकृत किरातार्जुनीयम्, बुद्ध चरितम् आदि के युद्ध वर्णनों का प्रभाव दिखता है। इन पूर्ववर्ती महाकाव्यों में अलंकार, रस छन्द प्रकृति चित्रण आदि की जो सुन्दर अभिव्यक्ति हुयी है इनमें कुछ भाव साम्य पन्त जी के काव्य में दृष्टि गोचर होता है।

आपकी रचना सर्वाधिक दुर्गा शप्तशती से प्रभावित है अतः हम सर्वप्रथम दुर्गा शप्तशती का ही वर्णन कर रहे है। उसके साथ ही आदि काव्य रामायण तथा महाभारत का भी प्रभाव दिखाई पड़ता है। अतः इनका प्रभाव भी साथ ही वर्णित करेंगे।

दुर्गाशप्तशती वीर रस से ओत प्रोत ग्रंथ है तथा झांसीश्वरीचरितम् भी वीररस से रसाप्लावित है तथा दोनों ही ग्रंथो में स्त्रीपात्र है जो इन ग्रंथ के प्रमुख पात्र है। झांसीश्वरीचरितम् पर दुर्गाशप्तशती के युद्ध वर्णनों क्रोध कुछ प्राचीन अस्त्र शस्त्रों आदि का प्रभाव दिखलाई पड़ता है। अन्य काव्यों में नायिका का युद्ध वर्णन नहीं मिलता है। अतः इस क्षेत्र में भी इस महाकाव्य पर काफी प्रभाव पड़ा है।

झांसीश्वरीचरितम् में युद्ध के समय जिन अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग किया गया है वह प्राचीन अस्त्र शस्त्र है जिन्हें दुर्गाशप्तशती में भी बड़ी सुंदरता के साथ वर्णित किया गया है। इन अस्त्र शस्त्रों का

वर्णन करते समय दुर्गाशप्तशती का प्रभाव परिलक्षित होता है। जैसे दुर्गाशप्तशती का यह श्लोक –

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिधाशूछूलं भुशुण्डी शिरः।

शंख संदधती करैस्त्रिनयनां सर्वोड.गभूषा वृताम्।। दुर्गाशप्तशती प्रथमोध्यायःध्यानम् पृ0 60

इस श्लोक में वर्णितं खड्ग, भुशुण्डी आदि शब्दों को डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने झांसीश्वरीचरितम् के अनेक श्लोकों में वर्णित किया है यथा –

शरासन चैव शरं भुशुण्डी सदा शतघ्नीं गुलिकायुधं च

जानन्त्यजानन्त्यथवा प्रवीरा चर्चातिथीकर्तुमभूद् महोत्का ।। झां0च0 सर्ग5 श्लोक20

भुशुण्डी का ही प्रयोग इस श्लोक में भी देखें –

नवां भुशुण्डीमनयस्तदा मे कथं लभेते स्म दृशीविकासम्।

विलोक्य ते चाग्रज कस्य हेतोर्विमुञ्चति स्मामितमचुवारि।। झां0च0 13/30

अस्त्र शस्त्रों के प्रयोग में आदि काव्य वाल्मीकि रामायण का प्रभाव भी दिखलाई पड़ता है। रामायण में भी शतघ्नी, खड्ग आदि आयुधोका उल्लेख है –

द्वारेषुसंस्कृताभीमाः कालाय समयाः शिताः ।

शतशोरचिता वीरैः शतघ्न्योरक्षसांगणैः ।। 13/13 वा0 रामा0 युद्धकाण्ड

अपिच –

परिखाश्चशतघ्न्यश्चयं त्राणिविविधानि च ।

शोभायतिपुरीलंका रावणस्य दुरात्मनः ।। 3/23 वा0 रामा0 युद्धकाण्ड

आध्यात्म रामायण में भी इन अस्त्रों के नामोल्लेख है –

परिखाभिः शतघ्नीभिः संकमैश्च विराजिताम् ।।

प्रासादोपरिविस्त्रीर्णप्रदेशे दशकन्धरः ।। 4/11 युद्ध काव्य

खड़ग का प्रयोग देखें –

न रोचते ते परमड़ग कौतुकं शरावलेः खड्ग चयस्य किं रमम्।

स्मरस्यहो नो धनुषोर्जुनस्य किं फूत्कारतुल्यो निनदो महत्तमः।। झां0च0 11/27

झांसीश्वरीचरितम् में खड्ग शब्द का प्रयोग अनेक स्थलों पर किया गया। यह उदाहारण देखें–

दस्युस्तु मुन्दरमुपैतुमलंवभूव व्यावृत्यतावदवधानसुरक्षितात्मा।

खड्गं न्यपातयत मुन्दरमुं परं तु स्वेनासिना कृतवती विफलप्रयासम्।।झां0च0 12/64

अपिच - *खडगं परं खण्डितमेव चण्डिका दीप्तं दधत्यैत्फलदित्सुरुद्धुरम्।*

भीत्या वहन् नार्तितारकां दृशं दूल्हा अनृत्यन्मदमत्तसन्निभः।।झां0च0 14/54

दुर्गाशप्तशती में खड्ग का चित्रण देखें -

देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः ।

सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका।।[1]

वाल्मीकि रामायण में खड्ग का प्रयोग देखें -

अयुतंरक्षसामत्रपूर्व द्वारं समाश्रितम्।

शूलहस्ता दुराधर्षाः सर्वे खडगाग्रयोधिनः ।। 3/24 वा0 रामा0 युद्ध वर्णन

अध्यात्म रामायण से -

महिषोस्ट्रैः खरैः सिंहर्द्रीपिमिः कृतवाहनः ।

खड्गशूल धनुः पाशयस्टितोमर शक्तिभिः ।। 5/47 अध्यात्म रामायण - युद्ध काण्ड

रघुवंश महाकाव्य के 12 वें सर्ग में भी शतध्नी का उल्लेख मिलता है -

अयः शंकुचितां रक्षः शतध्नीमथ शत्रवे।

हृतां वैवस्वतस्येव कूट शाल्मलिमक्षिपत्।। 12/95 पृ0 210 रघुवंश महाकाव्य

आध्यात्म रामायण में भुशुण्डी का प्रयोग देखें -

भुशुण्डीभिंदिषालैश्च वाणैः खड्गैः परश्वधैः।

अन्यैश्च विविधैरस्त्रैर्निजध्नुर्हरियूथपान् ।। 5/82 अध्यात्म रामायण युद्ध काण्ड

महाभारत में तोप बन्दूक खड्ग आदि का वर्णन -

शतध्नीभिः भुशुण्डीभिः खड्गैश्चित्रैः स्वलंकृतैः।

प्रगृहीतैर्दितेः पुत्राः प्रादुरासन् सहस्त्रशः ।। 169/16 वनपर्व

महाभारत में भुशुण्डी का अन्य जगह प्रयोग

ततोऽपरे महावीर्य्याः शूलपट्टिशपाणयः।

शूलानि च भुशुण्डीश्च मुमुचुर्दानवा मयि।। 170/3 निवातकवच युद्ध

---

1. दुर्गाशप्तशती - द्वितीयोऽध्यायः

महाभारत में खड्ग का प्रयोग

विभ्राम्य कौशिकं खड्गं मोक्षयित्वा गृहं रिपोः।

आक्रन्दभीमसेनं येन यातो महाबलः ।। वनपर्व अध्याय 157/11

महाभारत, रामायण तथा दुर्गाशिप्तशती में वर्णन किये गये इन प्राचीन अस्त्र शस्त्रों का प्रभाव झांसीश्वरीचरितम् पर स्पष्ट रूपेण दिखलाई पड़ता है। खड्ग और भुशुण्डी के अतिरिक्त असि, का प्रयोग दोनो ग्रंथो में दिखलाई देता है। जैसे दुर्गाशप्तशती के इस श्लोक देखें –

असिना निहिताः केचित्केचित्खट्वाङःगताडिताः।

जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा।। [1]

महाभारत में असि का प्रयोग –

सर्वे संभ्रान्तमनसः शरचापधराः स्थिताः।

तथासि शूलपरशुदामुसलपाणयः ।। वनपर्व अध्याय 169/10 पृ0 353

झांसीश्वरीचरितम् में असि का प्रयोग देखें –

सिततनुभृतां भूता लक्षं जना असि भोजनं

वसनरहितीकृत्यानेके कृता हतिजर्जराः ।

सभयवदनं कश्चिज्ज्वालाध्वजं स्म निरीक्षते

तदपरि तथा रौद्रां मृत्योर्विलासकलां तताम्।। झां0 च0 15/3

झांसीश्वरीचरितम् में युद्ध वर्णन के समय के दृश्यों में भी दुर्गाशिप्तशती, महाभारत रघुवंश तथा रामायण का प्रभाव दिखाई देता है। युद्ध के समय के इस भाव साम्य को देखें –

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीत परमायुधाः ।

नन्शृतश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः।। [2]

अर्थात देवी के साथ युद्ध करते दैत्य कभी-2 कबन्ध युद्ध के बाजों की लय पर नाचते थे उसी भांति झांसीश्वरीचरितम् में बताया गया है कि पिशाचनी का समूह मुण्डमाला धारण कर किस तरह युद्ध भूमि में नाचने लगी देखें –

---

1. दुर्गाशप्तशती – सप्तम अध्याय श्लोक 15 पृ0 131

2. दुर्गाशप्तशती – द्वितीय अध्याय श्लोक 63 पृ0 87

पिशाचिनीसंघ उपागमत्तः समुण्डमालोन्त्रविभूषणान्तर।

ननर्त्तहर्षध्वनिना रणाङ्.गणे विडम्बयन्नायुधचालनैर्भटान।। झां0च0 92/133

इसी भांति देवी तथा असुरों के संग्राम में असुरों के शरीरों से इतनी अधिक मात्रा में रक्तपात हुआ कि थोड़ी ही देर में वहां खून की बड़ी–बड़ी नदियां बहने लगी –

शोणितौधा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्त्रुवः ।

मध्ये चासुरसैन्यस्थ वारणासुरवाजिनाम् ।।[1]

रघुवंश के सप्तम सर्ग में भी युद्धभूमि रक्त से कैसी प्रतीत हुयी देखें –

शिलामुखोत्कृत्तशिरःफलांढ्याच्युतैः शिरस्त्रैश्चष कोत्तरेव।

रणक्षितिः शोणितमद्यकुतुल्या रराज मृत्योरिव पानभूमिः ।। 7/49 रघुवंश पृ0 50

महाभारत में भी इसी तरह का भाव साम्य दिखलाई पड़ता है –

स लोहितमहावृष्टिरभ्यवर्षन्महाबलम्।

गदा परिधपाणीनां रक्षसां कायसम्भवा।। 160/51 वनपर्व महाभारत

कामेभ्यः प्रच्युता धारा राक्षसानां समन्यततः।

भीम बाहुबलोत्सृष्टैरायुधैर्यक्षरक्षसान् ।। 160/52 वनपर्व महाभारत

इसी भाव को सुबोध चन्द्र पन्त ने वीभत्स रस में इस तरह व्यक्त किया है –

ततोवहद्रक्ततरङ्.गणी परावभूव यस्याः पुलिनं भटावलिः।

क्षमिर्वराङ्.गं लहरीविभूषणं तरीः शवोथो शफरीदुरासदः।। झां0च0 93/133 सर्ग20

देवी चिक्षुर दैव्य से युद्ध करती है तब वह महादैत्य देवी की भुजा पर प्रहार करता है –

सिंध्माहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि।

अजधान भुजे सव्ये देवीमत्यतिवेगवान ।। [2]

इसी भाव को झांसीश्वरीचरितम् के 20 वें सर्ग में इस तरह व्यक्त किया गया है –

तदेक आयादरिराशु पृष्ठतस्तुरङ्.गपश्चार्द्धगूढ़ विग्रहः।

प्रदाय धर्मे सुकृते तिलाग्र्जलिं शिरस्यमूं हा प्रजहार दुर्दमः ।। झां0च0 117/135

---

1. दुर्गाशप्तशती –द्वितीयोध्यायः – श्लोक – 66 पृ0 87

2. दुर्गाशप्तशती – तृतीयध्यायः – श्लोक 7 पृ0 90

महिषासुर युद्ध करते हुये क्रोध में भरकर धरती को खुरों से खोदने लगा तथा अपनी सींगों से ऊँचे पर्वतों को उठाकर फेंकने और गर्जने लगा –

सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः।

श्रृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चाश्चिक्षेप च ननाद च ।।[1]

झांसीश्वरी चरितम् में घोड़े युद्ध के समय टापों को पटकते हुये हींसने लगे, मस्तक और कानों को फाड़ते हुये तथा हाथी भी नटों की तरह व्याप्त हो गये –

हया अहेषन्त सफोदभवैः स्वरैर्विदारयन्तः श्रवणेच मस्तिकम्।

गजा अबृहंश्च मया नटा इव पदैः सुदीर्घे रणमेदिनी ममुः।। झां0च0 53/130 सर्ग20

देवी प्रसन्न हो महिषासुर को ललकारती है –

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ़ मधु यावत्पिबाम्यहम्।

मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः।।[2]

झांसी की रानी तथा नृपालिका दोनों सहेलियां भी हजारों योद्धाओं को ललकारती हुयी तलवार को देखते हुये मुस्कराती है –

नृपालिका जूह्वथ मुन्दरद्रवन समाहृयन्तेके भटान् सहस्रम्।

विकासमापत्करपाल वारिणि स्मितालयो वक्त्रकुशेशत्रयी ।। झां0च0 58/130 सर्ग20

शुम्भ और निशुम्भ से युद्ध करते समय देवी तथा असुरों की सेना में भयंकर युद्ध छिड़ जाता है–

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।

पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ।।[3]

झांसीश्वरीचरितम् में भी दोनों सैनाओं में घमासान युद्ध होता है –

सैन्यद्वयं धट्टितवन्महामदं सङ्ःगाम आश्वेव वभूव भीषणः।

प्राणा निरस्ता अभवन् प्रियाः परं व्यापदयेतिवितेनिरे रवाः।। झां0च0 70/92 सर्ग 14

झांसीश्वरीचरितम् में महारानी लक्ष्मीबाई अपने पिता की मृत्यु पर शोक व्यक्त करते हुये अंग्रेजों

---

1. दुर्गाशप्तशती – तृतीयोध्यायः श्लोक – 25 पृ0 93
2. दुर्गाशप्तशती – तृतीयोध्यायः श्लोक – 38 पृ0
3. दुर्गाशप्तशती – दशमोध्यायः श्लोक – 10 पृ0 154

के नाश हेतु प्रतिज्ञा करती हैं। अठारहवें सर्ग के चबालिस, पैंतालिस श्लोक को देंखे।

ज्वालारंगक्रीडां समरज्वालावलौ करिष्यामि।

दासत्वांकं घोरं त्यागाब्धौ मज्जयिष्यामि ।।

उसी प्रकार रावण मेघनाद की मृत्यु पर शोक युक्त होकर भी क्रोध में प्रतिज्ञा करता है –

एवं ज्ञात्वा स्वामात्मानं त्यज शोकमनिन्दिते।

इदानीमेव गच्छामि हत्वा रामं सलक्ष्मणम्।। 10/41

आगमिष्यामि नो चेन्मां दारयिष्यतिसायकैः।

श्रीरामो वज्रकल्पैश्च ततोगच्छामि तत्पदम् ।। 10/42 रामायण

झांसीश्वरीचरितम् में जिन युद्धवाद्यों का प्रयोग किया गया है उनका उल्लेख रामायण, अध्यात्म रामायण तथा महाभारत में प्राप्त होता है। जैसे –

वानरै सह युद्धाय नोदयामास सत्वरः।

ततो भेरीमृदंगाद्यैः पणवानकगोमुखैः ।। 5/47 अ0 रा0 युद्ध काण्ड

वाल्मीकि रामायण मे भेरी वाद्य आदि का उल्लेख मिलता है –

शीघ्रंभेरी निनादेनस्फुटं कोणादृतेनमे।

समानयध्वंसैन्यनिर्वक्तव्यंचन कारणम् ।। 33/43 वा0 रामा0

अपिच – *सन्नाह जननी ह्रेषाभैरवाभीरुभेरिका।*

भेरीनादं चगंभीर श्रणुतोयदनिस्वनम्।। 34/21 वा0 रामा0

महाभारत में भेरी का प्रयोग –

अस्य चोपरि शैलस्य श्रूयते पर्वसन्धिषु।

भेरीपणवशड.खानाम् मृदंगानांच निःस्वनः ।। 159/20 यक्ष युद्धपर्व अध्याय

अन्य जगह भेरी का उल्लेख –

ततस्तूर्य्यप्रणादाश्च भेरीणाञ्च महास्वनाः।

वभूवुर्दानवेन्द्राणां सिंहनादाश्च दारुणाः ।। 230/79 वनपर्व महाभारत

झांसीश्वरी चरितम् में भी युद्ध वाद्यों का प्रयोग किया गया है –

वाद्यान्यकस्माद् ध्वनितानि विग्रहं संसूचयन्ति प्रसभं विदार्य कुम्।

वेमुर्मुखेभ्यः प्रलयाग्निमुद्धुरं घोराः शतध्न्यः कृतसिंहगर्जनाः ।। 14/12 झा0 च0

द्राग् डिण्डिमा वान्तडमड्डमद्रवा उच्चैरवाद्यन्त महाप्रतिध्वनि।

भेराः प्रचण्डाः श्रुतिभैरवा द्रुतं नाम्नैव भीरून् धृतभैरवान्व्यधान्।। 14/13 झा0 च0

झांसीश्वरीचरितम् के दशवें सर्ग के 48वें श्लोक में मंत्री शब्द का उल्लेख मिलता है। जो कि प्राचीन काल में भी प्रयुक्त होता था। जैसे अध्यात्म रामायण में –

किरीटिनं समासीनं मंत्रिभिः परिवेष्टितम्। 5/43 अ0 रामा0 युद्ध काण्ड

झांसीश्वरीचरितम् के 14वे सर्ग के 32वें श्लोक में तूष्णी का प्रयोग है जो कि वाल्मीकि रामायण में प्रयुक्त किया गया है।

अनुत्तमेषूत्तमपौरुषबलीबभूवतूष्णीं समवेक्ष्य रावणम् ।। 35/36 वा0 रामा0 युद्ध का0

वाल्मीकि रामायण में गज और अश्व सेना का वर्णन मिलता है।

गजानांदशसाहस्रंरथानामयुततथा।

हयानामयुतेद्वेचसाग्रांकोटिंच रक्षसाम्।। 37/16 वा0 रामा0

महाभारत में भी अश्व सेना का वर्णन देखें –

शतंशतास्ते हरयस्तस्मिन् युक्ता महारथे।

तदा मातलिना यक्षा व्यचरन्नल्पका इव।। 170X9 वन पर्व महाभारत

इसी प्रकार झांसीश्वरीचरितम् में भी गज सेना व अश्व सेना का वर्णन किया गया है चूंकि रामायण काल में चतुरंगिणी सेना का उल्लेख मिलता है –

नियुतंरक्षसामदक्षिणद्वारमाश्रितम्।

चतुरंगेणेसेन्येनयोधातत्राप्यनुत्तमाः।। 3/25 वा0 रामा0

लेकिन समय परिवर्तन के कारण 1857 में गज सेना, अश्व सेना और पैदल सेना का ही उल्लेख मिलता है, रथ सेना उस समय तक लुप्त प्राय हो गयी थी।

रामायण और महाभारत काल में अनेक प्रकार की व्यूह रचना की जाती थी –

मंत्रेव्यूहेनयेचारेयुक्तोभवितुमर्हसि।

वानराणांचभद्रंतेपरेषांचपरंतप।। 17/20 वा0 रा0 युद्ध काण्ड

झांसीश्वरीचरितम् में भी रामायण और महाभारत काल की भांति व्यूह रचना तो नहीं किन्तु कुछ

नवीन रूप में व्यूह रचना का उल्लेख किया गया है ।

रामायण काल में अस्त्र शस्त्रों में गोलों का उदाहारण मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि झांसीश्वरीचरितम् पर अस्त्र शस्त्रों के प्रयोग में इन महाकाव्यों का अति प्रभाव पड़ा है –

विवर्तमानं बहुशोयत्रैतदहुलं रजः।

ऐतेसितमुखाघोरगोलांगूला महाबलाः।। 27/32 वा0 रामा0

झांसीश्वरीचरितम् में लिखा है –

गोलेषु भीषणतरेष्वहसं शतध्न्य श्चिक्रीड देवि गुलिकानिवहैर्भुशुण्डयाः।

निस्त्रिंशकुन्तविशिखास्त्र् शतशश्च सेहे वक्षस्यनागतभयं सहसा विमुच्य ।।

उपर्युक्त श्लोक में भाले का भी उल्लेख मिलता है जिसका प्रयोग महाभारत काल में भी किया जाता था। यथा –

ततोनालीकनाराचैर्भल्लैः शक्त्यृष्टतोमरैः।

प्रत्यघनन दानवेन्द्रा मां क्रुद्धास्तीव्रपराक्रमाः।। 173/19 वनपर्व निवातकवच युद्ध वर्णन

इन काव्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि झांसीश्वरीचरितम् पर इनका बहुधा प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अब इनके अतिरिक्त कुमार संभव, रघुवंश महाकाव्य, वुद्धचरित, मेघदूत आदि के प्रभाव पर दृष्टिपात करते है।

कालिदास ने कुमार संभव में पार्वती स्वयंवर पर कौशेय (वस्त्र) का प्रयोग किया है –

सा गैरसिद्धाऽर्थ निवेशवद्भिदूर्वा प्रवालैः प्रति भिन्न शोभाम्।

निर्नाभि कौशेयमुपात्त वाणमम्यंगनेपथ्यमलश्चकार।।[1]

झांसीश्वरीचरितम् में डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने विवाह के वर्णन के समय कौशेय शब्द का प्रयोग किया है –

विमानेन तमैश्वर्य श्रीमल्लोको व्यलोकयत्।

***कौशेयप्रतिसीरान्तः स्त्रियो हृष्टाः सहर्षेणाः।।** झां0च0 7/39*

विवाह के अवसर पर मंगल सूचक वाद्य यन्त्रो के बजने का वर्णन महाकवि कालिदास ने इस प्रकार किया है –

---

1. कुमार संभव 7/4

ततो गणैः शूल मृतैः पुरोगैरूदीरितो मंगलतूर्य घोषः।

विमान श्रडाण्यवगाहमानः शशंस सेवाऽवसरं सुरेभ्यः।। [1]

झांसीश्वरीचरितम् में भी विवाह के अवसर पर वाद्य परम्परा का वर्णन किया गया है–

निकषोपयमस्याहन्युपेते वाद्य संहति।

माधुर्यावाद्यतायातां भूपाली देवसन्निता।। झां0 च0 7/37

झांसीश्वरीचरितम् के इस श्लोक पर कुमार संभव तथा रघुवंश का प्रभाव देखे किस तरह स्त्रियां वर–वधू को अपनी छतों से देखती है –

प्रससारं कथा पुर्याविद्युत्स्फुरणवत्समा।

छदिस्था अप्युपैन् द्रुष्टुं वधूं जीवनसन्निभाम्।। झां0च0 7/50

कुमार संभव में इसी भाव को कालिदास ने कुछ तरह व्यक्त किया है –

तस्मिन्मुहूर्ते पुरसुंन्दरीणामी शानं संदर्शन लालसानाम्।

प्रसादामालासु बभूवुरित्थं व्यक्ताऽन्य कार्याणि विचोस्थितानि।। [2]

रघुवंश में कुछ इस तरह इसी बात को व्यक्त किया गया है –

तासां मुखैरासवगन्धगर्मेत्यप्तिान्तराः सान्द्रकुतूहलानाम्।

विलोल नेत्र भ्रमरैर्गवाक्षा सङ्स्रपत्राभरणा इवासन् ।। [3]

अश्वघोष कृत वुद्ध चरित में भी महात्मा ुद्ध को स्त्रियां गवाक्षों से देखती है। इस तरह कुछ प्रभाव अश्वघोष की कृतियों का भी परिलक्षित होता है। महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्यों में 'चीनांशुक' शब्द का अति प्रयोग किया है। डा0 सुबोध ्न्द्र पन्त ने भी इस शब्द को अपनाया है अत महाकवि कालिदास के प्रभाव का स्पष्टीकरण होता है।

तदैव चीनांशुकतोपटीतश्च्युता अदृश्यन्त विहासदीपाः।

पुनः समासां श्वसितान्यपि द्रागणुः शमं श्रष्यकुतूहलेन।। झां0च0 6/16

---

1. कुमार संभव 7/40

2. कुमार संभव 7/56

3. रघुवंश – 7/11

(प्रमुख विशेषता यह है कि इन तीनों महाकाव्यों के सांतवे सर्ग में ही विवाह का वर्णन किया गया है)

झांसीश्वरीचरितम् के तेहरवें सर्ग के बयालीसवें श्लोक पर रघुवंश महाकाव्य के 12वें सर्ग के 50वें श्लोक का प्रभाव दिखाई देता है यथा–रघुवंश में –

सा वाणविषिणं रामं योघयित्वा सुरदिषाम्।

अ प्रबोधाय सुस्वाप गृध्रच्छाये वरूथिनी।।[1]

अर्थात राक्षसों की वही सेना वाण वरसाने वाले राम को लड़ाकर फिर नहीं जागने के लिये गीधों (के पंखो) की छाया में सो गयी अर्थात् मर गयी।

झांसीश्वरी चरितम् में इस प्रकार लिखा है –

भूमी रिपूणां शवगंर्त्तभूमी भवत्वटन्तु ध्वज आशुगृध्राः।

सौभाग्य मुक्ता प्रतिवीरवामाः क्रोशन्तु सर्वत्र महीतलेद्य।। झां0च0 13/42

रधुवंश महाकाव्य के चौदहवें सर्ग में महाकवि कालिदास ने सीता के रुदन को कुररी के समान बाताया है –

तथेति तस्याः प्रतिगृह्यवाचं रामानुजे दृष्टि पथं व्यतीते।

सा मुक्तकण्ठं व्यसनातिभाराच्चक्रन्दविग्ना कुररीव भूयः।।[2]

इसी प्रकार डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने झांसीश्वरीचरितम् में राजा गंगाधर राव की मृत्यु के समय सुन्दरी के रूदन को कुररी के समान बताया है –

सुन्दरी सुन्दरीशाद्य जाता हा कुररी समा।

मुन्दरीष्टे न पातारं भग्नपोता वरांगना ।। झां0च0 10/56

महाभारत में भी दैत्यों की स्त्रियां व्याकुल और दुःखी होती हुयी कुररी की भांति चिल्ला रही है–

विनदन्त्यः स्त्रियः सर्वा निष्पेतुर्नगराद्वहिः।

प्रकीर्णकेश्यो व्यथिताः कुरर्य इवदुःखिताः।। अ0 137/62 वनपर्व निवातकवच युद्ध वर्णन

रघुवंश महाकाव्य में सीता के दुःख को देख प्रकृति भी विलाप कर उठती है –

नृत्यं मयूरा कुसुमानि वृक्षा दर्भानुपात्तान्विजहुर्हरिण्यः।

तस्या प्रपन्ने समदुखः भावमत्यन्तमासी द्रुदितं वनेऽपि ।।[3]

---

1. रघुवंश – 12/50
2. रघुवंश – 4/68 पृ0 260
3. रघुवंशम् – 14/69 पृ0 260

इसी भाँति राजा गंगाधर राव के मृत्यु पर रानी के शोक को देख कूप, रंग, ग्रन्थागार आकाश आदि विलाप करने लगते है –

रङ्गोरोदिति हन्ताद्य ग्रन्थागारं च रोदिति।

रोदित्युर्वी नभो रोदित्य कूपारश्च रोदिति।। झां0च0 10/66 पृ0 62

मान्दाक्रान्ता छंद पर कालिदास के मेघदूतम् का प्रभाव देखें –

तेषां दिक्षु प्रथिताविदिशालक्षणां राजधानीं

गत्वा सद्यः फलम विकलं कामुकत्वस्य लब्धा।

तीरोपान्तस्तनितसुभगं पास्यसि स्वादु यस्मा

त्सभ्रूभंग मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि।।[1]

झांसीश्वरीचरितम् में देखें –

वेलावृद्धिच्छलत उदधिर्दर्शयामास नैर्जी

चित्ताशान्तिं विकलकरणोत्पादितां मत्तभावाम्।

भ्रूभङ्गानां लहरिमिषतः प्रेक्षयन्त्यो विलासा

नातंकय प्रबलमसृजन कारणं कूलवत्यः।। झां0च0 22/13 पृ0123

युद्ध वर्णन के समय के इन श्लोकों पर कुमार संभव के युद्ध वर्णन का प्रभाव दिखलाई देता है–

तारा ग्रहाः सप्त दिनेशमण्डलात तत्रत्यवाहा इव भूमिमापतन्

सेनापतीनां गुणिनोप्युपाविशन् घोटाः क्षणान्माशमुपैन्महोत्सवः। झां0च0 14/2 पृ086

अपिच –

उल्काश्च्युता अम्बरतः प्रतिक्षणं प्रान्ता ध्वजानां ज्वलितास्तथाग्रिमाः

दधुः प्रकम्पं सहसा निरन्तरमासीत्सुशान्तः पवनो यदप्यहो।। झां0च0 14/7 पृ086

धार्मिक ग्रन्थों का प्रभाव –

झांसीश्वरीचरितम् पर कुछ प्रभाव धार्मिक ग्रंथो मनुस्मृति, गरूड़पुराड़, वेद आदि का भी दिखलाई पड़ता है। झांसीश्वरीचरितम् में पुत्र प्राप्ति को आवश्यक माना है –

---

1. मेघदूतम् (पूर्वमेघ) 24/पृ0 19

गेहत्वं तनूजो वै तेनैवास्ति कुलादृतिः।

पठ्यते भारते काव्ये सुतहीना हि पापिनः।। झां0च0 7/21

अपिच–

इति वृतं वदत्येव पुराणं चापि तन्मतम्।

छित्वा सुकृति सन्तानं निरये पच्यते सुतः।।झां0च0 7/22

इसी प्रकार धार्मिक ग्रंथों में पितादि के पिंडदान के लिये पुत्र का होना आवश्यक माना गया है गरुड़ पुराण में लिखा है –

यद्विधाय च सुत्पुत्रोमुच्यते पैतृकातृणात।

पुत्र शोकं परित्यज्य धृतिमाक्षथाय सात्विकीम

पितुः पिण्डदानादि कुर्याद्श्रुपातं न कारयेत्।[1]

पिण्डदानादि के लिये पुत्र प्राप्ति का होना आवश्यक है।

शास्त्राकार लिखते है – 'नरकात् त्रायते' ।वह जो वेटा पैदा हुआ है वह नरक से बचाता है याज्ञिक सम्राट पं0 श्री वेणीरामजी शर्मा गौड़ वेदाचार्य ने अपने लेख 'अशौच निर्णय' में लिखा है– मृतक पुरूष के यदि औरसपुत्र न हो और यदि उसने दत्तक पुत्र बना लिया हो तो उसको भी दाहादि कर्म करने का अधिकार है।[2]" वाल्मीकि रामायण में पुत्र प्राप्ति के महत्व को अति सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया गया है –

पुन्नाम्नो नरकाद् यस्मात्पितरं त्रायते सुतः।

तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः पितृन यः पत सर्वतः ।।[3]

अर्थात वेटा पुम् नामक नरक से पिता का त्राण करता है इसलिये पुत्र कहा गया है। वास्तव में जो सब ओर से पितरों का परित्राण करता है वही पुत्र है। रघुवंश महाकाव्य में भी पुत्र प्राप्ति को आवश्यक बतलाते हुये लिखा है –

---

1. गरूड़पुराण – एकादशोऽध्यायः पृ0 141/142
2. कल्याण – नबम्बर 1961 गोरखपुर सौर मार्गशीर्ष 20/8 गीताप्रेस गोरखपुर
3. वाल्मीकि रामायण 107/12

लोकान्तरसुखं पुण्यं तपोदान समुद्भवम्।

सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे।।[1]

मनुस्मृति में लिखा है–

सहपिण्ड क्रियायां तु कृतायामस्य धर्मतः।

अनयैवावृता कार्य पिण्डानिर्वपणं सुतैः।।[2]

इस प्रकार पुत्र प्राप्ति के विषय में जो भाव उपर्युक्त धार्मिक ग्रंथों में स्वीकृत है उन्ही भावों को डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने सांतवे अध्याय के इक्कीसवें और बाईसवें श्लोकों में व्यक्त किया है।

अनेक धार्मिक ग्रंथों में गोधन की सुरक्षा तथा गोहत्या पर निषेध के विषय में वर्णित है जैसे अर्थवेद में लिखा है –

न त अर्वा रेणुककाटोऽश्नुते न संस्कृतत्रमुपयन्ति ता अभि।

उरूगायमभयं तस्य ता अनु गावो मर्तस्य विचरन्तिं यज्वनः।।[3] *4/521 अथर्ववेद*

ऋगवेद में भी गोवध का निषेध किया गया है–

माता रूद्राणां दुहिता वसुनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्यनाभिः।

प्र नु वोचं चिकितुषेजनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट 18/10/15 ऋग्वेद

उपर्युक्त वेद आदि ग्रंथों में गाय के वध पर निषेध किया गया है इनका प्रभाव सुबोध चन्द्र पन्त के महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् के इस श्लोक पर है दृष्टिगोचर होता है –

ततः सुधीशः स्वगतं जगाद् ध्रुवा स्वराज्याप्तिरथा विलम्बम्।

कृतेः फलं ज्ञास्यति गौर देहो रिपुद्रुतं गोर्हनने पटीयान्।।

इस प्रकार जहां भाव साम्य एवं एक जैसी पदावली का प्रयोग किया गया है वहां कुमार संभवः रघुवंश, बुद्धचरित, मेघदूत, गरूड़ पुराण, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति आदि का प्रभाव परिलक्षित होता है। भाव साम्य एवं पदावली की समानता के प्रयोग करने से अनुहरण का पता चलता है महाभारत की

---

1. रघुवंश महाकाव्य – 1/69 पृ0 90
2. मनुस्मृति 3/248 पृ0 123
3. कल्याण – गीता प्रेश गोरखापुर 2008, नबम्वर 1951

तो यह महाकाव्य अनुच्छाया ही है। व्यूह आदि के वर्णन में तो पूर्ण महाभारत का पूर्ण प्रभाव दिखलाई पड़ता है। अस्त्र शस्त्रों के प्रयोग, युद्ध वर्णन आदि पर दुर्गाशप्तशती, महाभारत, रामायण आदि का प्रभाव स्पष्ट रूपेण दृष्टिगोचर होता है पारंपरिक रूप से जो अस्त्र शस्त्र का वर्णन होता चला आया है उनका वर्णन डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने बखूबी किया है।

उपर्युक्त अन्य महाकाव्य या धार्मिक ग्रंथ आदि चूंकि त्रेता, द्वापर या सतयुग आदि के है और झांसीश्वरी चरितम् आधुनिक महाकाव्य है अतः इसमें अनेक महाकाव्यों का प्रभाव दिखलाई देता है लेकिन अनेक मौलिकतायें भी इस महाकाव्य में दृष्टिगोचर होती है। प्राचीन या वैदिक कालीन रामायण या महाभारत कालीन जो कूटनीति, युद्ध के मूल थे उनमें इस महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् में अर्वाचीन विट्रिश की घटना होने के कारण परिवर्तन आया है अतः कवि पन्त ने इन मूल्यों को मौलिक रूप में ही उद्भूत किये है अंग्रेजों ने कूटनीति से ही सब किया। प्राचीन काल में स्त्रीपर अस्त्र शस्त्र नहीं चलाये जाते थे लेकिन इस महाकाव्य में एक स्त्री से ही युद्ध का वर्णन है अतः काल परिवर्तन के कारण इस महाकाव्य में कुछ मौलिकताओं का समावेश है दोनों का ही सामंजस्य कवि पन्त द्वारा अति कुशलता से किया गया है। महाभारत में जो चतुरंगिणी सेना विकसित थी उसका इस काल तक कुछ ह्रास हुआ है।

महाभारत तथा रामायण से सुबोध चन्द्र पन्त को काफी ज्ञान प्राप्त हुआ है। प्राचीन काल में अस्त्र शस्त्रों का अधिक विकास नहीं हुआ था। अतः युद्ध सामग्री में कुछ विकास दिखलाई पड़ता है अतः पन्त की मौलिकता के दर्शन होते है।

समीक्षा –

इस प्रकार झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य पर पूर्ववर्ती रचनाओं का प्रभाव मौलिकता एवं अनुहरण इस अध्याय का अध्ययन करने से निष्कर्ष निकलता है डा0 सुबोध चन्द्र पन्त के महाकाव्य झांसीश्वरी चरितम् पर कालिदास कृत कुमार संभव, रघुवंश, मेघदूत, बुद्धचरित, रामायण, महाभारत, पुराण, वेद, मनुस्मृति आदि का प्रभाव दृष्टि गोचर होता है किन्तु काल परिवर्तन के कारण आपकी रचना में आपकी मौलिकता का भी पूर्ण समावेश दृष्टिगोचर होता है। अनेक स्थानों पर आपकी मौलिकता के दर्शन होते है। आपकी मौलिकता केवल मौलिकता ही प्रस्तुत करने के लिये नहीं अपितु अत्यन्त सहज स्वाभाविक है।

—o—

षष्ठ अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं की विवेचना, झांसीराज्य का स्वरूप, झांसीश्वरी लक्ष्मीबाई का राज्यारोहण, अंग्रेजों की देशी राज्य हड़पने की दुर्नीति का महारानी द्वारा प्रतिशोध एवं भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के यौद्धिक अभियान में झांसीश्वरी की गतिशीलता, विविध स्थानों पर अंग्रेजों से मुठभेड़ों में महारानी का वीरता पूर्वक युद्ध करना तथा वीरगति पाना।

झाँसीश्वरीचरितम् में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं की विवेचना –

झाँसीश्वरी चरितम् में वर्णित सभी घटनाओं कथावस्तु में फल की अधिकारी इस काव्य की नायिका, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई से सम्बद्ध है जो भारतीय ऐतिहासिक कांति की संचालिका रहीं !

इस महाकाव्य की समस्त घटनाओं के साथ रानी लक्ष्मी बाई का अविच्छिन्न सम्बन्ध बना रहा है!

डा० सुबोध चन्द्रपन्त ने महारानी लक्ष्मीबाई के जीवन से लेकर मृत्यु पर्यन्त घटनाओं तथा कान्ति का बीज प्रस्फुटित होने के पश्चात् आने वाली उथल–पुथल की समस्त ऐतिहासिक घटनाओं का विशद विवेचन किया है ! उन समस्त घटनाओं का स्त्रोत ऐतिहासिक है !

यद्यपि भारतीय आदर्श के अनुसार इतिहास का उद्देश्य तिथियों या घटनावलियों का वर्णन करना नहीं प्रत्युत जीवन के शाश्वत सिद्धान्तों को महापुरूषों के जीवन में घटाते हुए राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्थान में योग देना है। तथापि झाँसीश्वरी चरितम् में घटनाओं का सूक्ष्म और कमबद्ध विवरण प्रस्तुत किया गया है।

जिन प्रमुख ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन इस काव्य में हुआ है उनका वर्णन हम निम्न लिखित रूप में प्रस्तुत कर सकते है। –

1. राजा गंगाधर राव से रानी का विवाह।
2. राजा गंगाधर राव की मृत्यु।
3. दामोदर राव को गोद लिया।
4. डलहौजी द्वारा गोद नीति को न मानना।
5. झांसी पर आक्रमण और युद्ध।
6. तात्या टोपे का सहायता हेतु आना तथा पराजित होना।
7. दूल्हाजू का विश्वासधात, झांसी में विध्वंस आगजनी की घटना।
8. रानी का झांसी से भागना, बॉकर से युद्ध।
9. पिता मोरोपन्त की मृत्यु पर रानी की प्रतिज्ञा करना।
10. कोंच युद्ध तथा पराजय।
11. रानी द्वारा ग्वालियर पर आक्रमण तथा विजय।
12. ग्वालियर का युद्ध आरंभ तथा रानी की वीरता पूर्वक वीरगति पाना।

आदि महत्वपूर्ण घटनायें ऐसी है जिनका स्रोत ऐतिहासिक है अतः उनका क्रमशः वर्णन निम्न प्रकार से है।

ऐतिहासिक घटनायेंः–

राजा गंगाधरराव से रानी का विवाह –

मनू बाई का राजा गंगाधर राव से विवाह एक ऐतिहासिक घटना है, क्योंकि मनू ने भले

ही एक साधरण ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया हो। किन्तु राजा गंगाधर राव इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति थे। और मनू का उनसे विवाह एक ऐतिहासिक घटना ही हुयी ! झाँसी से रानी का विवाह होना निश्चित हुआ था !

झाँस्यामेव विवाहः स्यात् समं निश्चित्य पेशवा।

प्रशस्यं लग्नमुक्त्वेष्टं तात्या झाँसी न्यवर्त्तत।।

राज्ञी शतकम् में लिखा है – कि राजा गंगाधर राव के साथ मनु का विवाह हुआ। और विवाह के पश्चात् ही उनका नाम लक्ष्मी रखा गया।

उस समय रानी लक्ष्मी बाई की उम्र 13/14 वर्ष तथा राजा गंगाधर राव की उम्र 40 वर्ष थी राजा गंगाधर राव सन् 1838 में झाँसी के राजा घोषित हुये। तथा सन् 1850 में इनका विवाह हुआ।[1] रानी लक्ष्मीबाई राजा गंगाधर राव से विवाह निश्चित होने पर प्रसन्न हुयी क्योंकि बुन्देलखण्ड वीरों की भूमि थी।

नृपाः स किं परिणेतुकामः क्षमोस्ति योद्धुं रिपुभिः सितांगैः।

सदैव सम्मान्य किमागहं में रणेषु खेलायितुमस्ति योग्यः।।[2]

रानी की प्रसन्नता का कारण झाँसी बुन्देलखण्ड की वीरों की भूमि होना था और रानी बचपन से ही वीर थी तथा वीरता की उपासक थी ! इस प्रकार रानी का राजा गंगाधर राव से विवाह सर्वप्रथम एवं सर्वप्रमुख घटना है क्योकि सम्पूर्ण घटनाओं का तारतम्य उन्ही के विवाह के पश्चात् आरम्भ होता है !

राजा गंगाधर राव की मृत्यु –

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के अनुसार सन् 1851 की अगहन सुदी एकादशी[3] तथा बुन्देलखण्ड का इतिहास के अनुसार भी 1851 में पन्द्रह वर्ष की आयु में रानी को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुयी।[4] कुछ माह पश्चात् उस पुत्र के अचानक कालकवलित होने पर राजा गंगाधर राव के स्वास्थ्य पर उसकी मृत्यु का प्रभाव पडा और राजा गंगाधर राव अस्वस्थ्य रहने लगे ! अनेकों प्रयासों उपचारों आदि के पश्चात् भी उनके स्वास्थ्य में कोई सुधार न आया बल्कि दिन प्रतिदिन उनका स्वास्थ्य गिरता गया, और अन्त में सन् 1853–21 नवम्बर को राजा का देहावसान हो गया ! झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई तथा

---

1. ओमप्रकाश 'असर' ने रानी के विवाह का समय सम्वत् 1899 माना है उस समय रानी 15वर्ष की थी। इन्होने अनेकों तर्क वितर्क के पश्चात रानी का जन्म 1835 की जगह 1827 ही माना। "समाचार पत्र दैनिक जागरण" अपना अंचल, महारानी लक्ष्मी बाई और उनकी झांसी

2. असीद यदा सा नितराम बोधा, ददर्श वै सप्त वसन्तमात्रम्।
झांसी महापस्य वभूव जाया, लेभे सुलक्ष्मीरिति नाम धेयम्।। श्लोक 26 कृष्णदत्त शर्माकृत राज्ञीशतकम्

3. झांसी की रानी – वृन्दावन लाल वर्मा पृ0 102

4. बुन्देलखण्ड का इतिहास मोतीलाल त्रिपाठी अशान्त , अध्याय 11 पृ0 118

बुन्देलखण्ड का इतिहास मेंउनकी मृत्यु का समय यहीं प्राप्त होता है ! पारसनीस ने लिखा है कि "पुत्र वियोग के कारण महाराजा को बहुत बडा धक्का लगा इससे उनका स्वास्थ्य नित्य प्रातः बिगडता दिखाई दिया तब औषद्योपचार आरम्भ हुआ ! उससे किसी तरह स्वास्थ्य मेंअंतर पडा परन्तु कमजोरी ज्यों की त्यों बनी रहीं। अक्टूबर 1853 ई0 में शारदीय नवरात काउत्सव था उस दिन राजा गंगाधर राव ने पूजा की जैसे तैसे करके 1853 का वह दिननिकला तीसरे सप्ताह का आरम्भ होते ही सारे चिन्ह विपरीत दिखलाई पडने लगे और 21 नवम्बर 1853 को दोपहर एक बजे राजा गंगाधर रावका महाप्रयाण हो गया।[1] "

झॉसीश्वरी चरितम् में रानी के वैद्यव्य का वर्णन इन श्लोकों में मिलता है

बैधव्यं यापयन्त्यन्यां धैर्य प्राप्यावलम्बनम

नीतावांस्तदपि प्रेयन् समं धिग्भवितंव्यताम्। झां0च0 सर्ग10 श्लोक 2

अयि स्वामिनसहायो हा कोपशिष्टोद्य मामकः

दत्तवानसि मम्यद्य जीवनावधि रोदनम्।। झां0च0 10/1

पारसनीस ने लिखा है "यह ऐसा भयंकर करूणा जनक दृश्य था कि इसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता है इस प्रलयंकारी हाहाकार से सारा वातावरण बोझिल हो चुकाथा महारानी के विलाप का तो कोई वर्णन ही नही कर सकता है।

पारसनीस ने लिखा है कि "महारानी आर्तनाद कर रही थी, हे जगजननी तू मेरा पहले ही गला काट डाल। मुझे दुख देने के लिये जीवित मत रख।[2] झॉसीश्वरीचरितम् में रानी के वैधव्य का अतिमार्मिक चित्रण किया गया है राजा के मित्रों के साथ–साथ हाथी रंग चित्रशाला पुस्तकालय आदि जड वस्तुयें भी इस तरह करूण कंदन कर रहे थे कि सारा वातावरण ही करूण मय हो गया था

तत्पश्चात्सा रोदनक्षामकण्ठा घोरंमूर्च्छाद्राकू समासादयन्ती

बालापप्तद् भूमिपृष्ठे मुहूर्तात्लेभे संज्ञां क्रोधरक्ताननाभूत्।। झां0च0 10/67

इस कारूणिक दृश्य कोदेखें –

सुन्दरी सुन्दरीशाद्य जाता हा कुररीसमा

मुन्दरीष्टे न पातारं भग्नपोता वराड्.गना।। झां0 च0 10/56

इसतरह राजा गंगाधर राव कीमृत्यु इस झॉसी चरितम् में तृतीय ऐसी ऐतिहासिक घटना है जो न केवल झॉसी राज्य, रानी अपितु सम्पूर्ण देश के लिये कष्टप्रद थी इस क्षण महारानी लक्ष्मी बाई एक ऐसे दुख से जूझ रही थी जिसका वर्णन करना किसी सामान्य व्यक्ति केलिये सम्भव नहीं ! यह सम्पूर्ण दशमसर्ग इस करूणमय चित्रण से ओतप्रोत है राजा गंगाधर राव के प्रिय हाथी सिद्धवक्श का करूण विलाप

---

1. पारसनीस कृत – महारानी लक्ष्मी बाई पृ0 45
2. महारानी लक्ष्मी बाई – पारसनीस पृ0 42

देखें।

स सिद्धवकसख्योयं निःसहायो गजेश्वरः

रोदितिवाश्रि वक्त्रं हा यौष्माकीणं बिलोकयन्।। झां0 च0 10/61

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई में लिखा है महल में हाहाकार मच गया जिस रानी को कभी किसी ने बिहवल नहीं देखा था। वह करूणा के बांध तोडे जारही थी[1] इस तरह यह तृतीय ऐतिहासिक घटना अति मार्मिक है।

दामोदर राव को गोदलेना–

राजा गंगाधर राव की अस्वस्थ्ता के समय राजा गंगाधर राव ने अपनी मृत्यु के एक दिन पूर्व आनन्द राव नामक एक पुत्र को गोदलिया था जिसका नाम विधि। विधानासार दामोदर राव रखा गया इस दत्तक पुत्र का उल्लेख झाँसीश्वरीचरितम् की इस श्लोक में मिलता है।

दत्तात्रेया सुपुत्रोऽयं तावकीनोतिलालितः

उत्सङ्.ग उपविष्टो हा रोदनानुपमोऽभवत्। झां0च0 13/10

कृष्णदत्त शर्मा कृत राज्ञी शतकम् में भी दत्तक पुत्र का उल्लेख मिलता है[2] झॉसी की रानी लक्ष्मीबाई में लिखा है कि हमारे कुटुम्बी वासुदेव राव नेवालकर का एक पुत्र आनन्दराव है 5 वर्ष का है जिसे में गोद लेना चाहता हूँ[3] और इसतरह शास्त्रानुसार दत्तक विधान कीतैयारी के साथ उसे गोद लिया गया गंगाधर राव के प्रयाण के पूर्व दत्तक विधान इसलिये सम्पन्न कराया गया ताकि अग्रेंज यह न कह सकें कि महाराज गंगाधर राव निसन्तान पधार गये और राज्यका कोई उत्तराधिकारी नहीं है दत्तक विधान की कार्रवाई अनेक ऐतिहासिक पुस्तकों के आधार पर 19 नवम्बर सन् 1853 को सम्पन्नहुई थी राजा गंगाधर राव लिखित पत्र जो एलिस को सोंपा गया था वह भी 19नबम्वर 1853 का है,और यह मूल पत्रादि फारेन पालिटिकल प्रोसीडिंग्ज 31मार्च सन् 1854 फाइलकन्सल्टेशन्स संख्या 163और 154के तहत सुरक्षित है। डा0 श्याम नारायण सिन्हा ने भी महारानी विषयक अपने ग्रंथ मे भी 19नवम्वर 1853 ही लिखा है।[4] डा0 सिन्हा के समकालीन कृष्णनारायण[5] तथा श्री ई बेल[6] ने भी यही तिथि लिखी है।

डलहौजी द्वारा गोदनीति को न मानना–

इतिहास के अनुसार अंग्रेज ऐ लंबे समय से झाँसी पर नजर टिकाये थे राजा की मृत्यु के बाद

---

1. झांसी की रानी लक्ष्मीबाई – वृन्दावन लाल वर्मा – पृ0 125
2. विचार्य सम्यग नृपतिर्हिताशः, पूर्वापरं राज्य सुरक्षणाय।
   वश्यं स दामोदर राव संज्ञम, भार्यानुमत्या तनयं बवार।। 42 'राज्ञी शतकम् – कृष्णदत्त शर्मा शास्त्री
3. दैनिक जागरण– अपना अंचल – महारानी लक्ष्मीबाई और उनकी झांसी ओमशंकर 'असर'
4. डा0 श्याम नारायण सिन्हा – पृ0 15 (महारानी विषयक ग्रंथ में)
5. कृष्ण नारायण कृत – ए झांसी – पृ0 80
6. ई बेल कृत – द एम्पायर न इण्डिया पृ0 202

उन्हे झाँसी को ग्रसने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआथा। राजा गंगाधर राव ने जिस बालक को अपना दत्तक पुत्र बनाकर अंग्रेजों को सूचना दे दी थी किन्तु ईस्ट इन्डिया कम्पनी की सरकार ने इस गोद को अस्वीकार कर दिया था क्योकि 1804ई0 की संधि मे शिवराव भाउ ने इस बात को कबूल किया था कि झाँसी राज्य पेशवा का आश्रित राज्य था और ऐसे राज्य मे अंग्रेजी सरकार को गोद मानने न मानने का पूर्ण अधिकार है यह कहकर अंग्रेजो ने 27फरवरी 1851 को दामोदर राव की गोद को मानने से अस्वीकार कर दिया और डलहौजी की नीति इस समय काम आयी। झाँसी राज्य को हड़पने का यह सुअवसर था। वैसे इस नीति का भी श्री गणेश करने वाला डलहौजी नही था। उसने तो इस नीति पर अमल किया था ऐसा डा0 सिंहा ने महारानी विषयक ग्रंथ मे लिखा है।[1] इस तरह डलहौजी ने हिन्दू धर्माशास्त्रों के अनुसार और स पुत्र के अभाव में दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी मानने की परवाह नहीं की क्योंकि उसके लिये राज्य हड़पने की यह उचित नीति थी।

झाँसी पर आक्रमण और युद्ध-

इतिहास के अनुसार गोद नीति के अस्वीकार करने पर रानी तथा प्रजा में कुछ रोष आ गया था।वह अंग्रेजो की चालो को भली भाँति जानती थी।झाँसी राज्य को ग्रसने का अंग्रेजो का सपना वह पूरा नही होने देना चाहती थी अतः उन्होने कौटिल्य नीति को अपनाते हुये शनैः शनैः युद्ध की तैयारियाँ आरम्भ कर दी थी क्योकि गोद नीति को अस्वीकार करने के बाद अंग्रेजो ने झाँसी राज्य पर अपना अधिकार कर लिया था। अंग्रेजो के बढ़ते अत्याचार से जनता मे आक्रोश फैल रहा था सैनिक भी अंग्रेजो की धूर्तता से परेशान थे अतः छुट-पुट घटनाये होना आरम्भ हो गयी थी तथा झाँसी मे भी सैनिको ने विद्रोह किया और जो थोड़े से अंग्रेज थे उन्हे वहा से मार भगाया। रानी ने अपने बाहुवल से झाँसी राज्य की रक्षा की। झाँसी अंग्रेजो के अधिकार से निकलने के पश्चात् रानी ने दस महीने उस पर योग्यता से राज्य किया। लेकिन बोखला गये थे और इसी आक्रोश के कारण पूरी तैयारी के साथ 23मार्च को उन्होने झाँसी पर आक्रमण कर दिया था अंग्रेजी सेना तथा रानी की सेना मे घमासान संग्राम हो गया।19मार्च को झाँसी से 14मी0 दूर चंचलपुर नामक स्थान पर सरह्यूरोज पहुँचा। एक रिसाला उसने तोपखाने के साथ झाँसी की दशा देखने को भेजा था। 21मार्च को सरह्यूरोज पैदल सेना लेकर झाँसी की ओर वढ़ा था तथा 23मार्च को उसने झाँसी पर आक्रमण कर दिया था।झाँसी पर हुये आक्रमण की इस तारीख का यह एक ऐतिहासिक युद्ध था। इस तिथि का उल्लेख अनेक ऐतिहासिक ग्रंथो मे किया गया है। यह एक ऐतिहासिक युद्ध था रानी की वीर सेना अंग्रेजो पर हमले पर हमले कर रही थी। कुशल तोपची गुलाम गौस खाँ ने रानी के आदेशानुसार धनगर्जन करती तोपो से लक्ष्य साधकर ऐसे गोले फेके कि अंग्रेजी सेना हतोत्साहित होने लगी। अप्रैल मास के तीसरे दिन हुये झाँसी के भयानक संग्राम का

---

1. डा0 श्याम नारायण सिंहा – पृ0 12 (महारानी विषयक ग्रन्थ)

चित्रण इन श्लोको मे देखे–

यातं शतघ्नीसुषिरं करालतां व्यश्राणयच्छ्रुशवाय पावकम्।

सन् रक्तकालो निपतात भीषणं गोलाकृतिगोल उदीर्णमुच्छिखः।। झां०च० 14/42

अपिच–

कृत्वा शरव्यं रिपुमात्मनो मुहुर्लोकाः पुरो भीषणतां वितेनिरे।

डीना डिकस्याश्वपुत्रिणोगतो मीलन्नयं मीकिलजॉन ईक्षणे।। झां०च० 14/44

गिद्धो के समान शत्रुओ की भूमि शव के रूप मे कैसी विखर गयी इसका अवलोकन करे–

भूमि रिपूणां शवगर्त्तभूमी भवत्वटन्तु ध्वज आशुग्रध्राः।

सौभाग्य मुक्ता प्रति वीरवामाः क्रोशन्तु सर्वत्र महीतलेद्य।। झां०च० 13/42

तात्या तोपे का सहायता हेतु आना तथा पराजित होना–

युद्ध के समय तात्या टोपे रानी की सहायता हेतु आता है–

तात्या भटा ये प्रबला नितान्तं विधाय लीलाभुवमाजिभूमिम्।

उपागमत्र् शत्रुदलस्य तस्य ह्वत्वा स्वमन्यत्र चिरन्तनं तत्।। झां० च० 13/56

तात्या टोपे का झांसी आया तथा पराजित हुआ यह एक ऐतिहासिक घटना है इसका झांसी की रानी लक्ष्मीबाई गदर का इतिहास, स्वान्त्रय समर, वुन्देलखण्ड का इतिहास आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों में किया गया है।

दूल्हाजू का विश्वास घात, झाँसी मे विध्वंस, आगजनी की घटना–

इतिहास के अनेसार झाँसी का भयंकर संग्राम कई दिनो तक चला तथा कुछ दिनो पश्चात् जब झाँसी का भयंकर युद्ध छिड़ हुआ था रानी की सेना वीरता से युद्ध कर रही थी। अनेक वीर रमणियां झाँसी की तथा झाँसीश्वरी की रक्षा हेतु अपना जौहर दिखला रही थी कि तभी अचानक दूल्हाजू नामक किसी व्यक्ति के विश्वासघात से थोडी ही देर मे झाँसी नगरी शमशान बन गयी। दूल्हाजू[1] ने दुर्ग का फाटक खोल दिया जिससे अंग्रेज किले के अंदर प्रवेश कर गये–

दुल्हाज्व उद्दण्डवरस्य तां पुरं विश्वासघातोगमयद् रसातलम्।

विश्वेखिले नीचतयावुधः श्रुतः स्वस्यैव ध्वंसं यशसश्चकार सः। झां०च० 14/50

अपिच–

स्थानाद्इरे सरदारसञ्ज्ञकात् सामन्तपाशो नृपया नियोजितः।

दुर्ग प्रतीहारभवन् दक्षिणं स्वानेव हा नाशयितु समुद्ययौ।। झां० च० 14/51

दूल्हाजू के इस विश्वासघात से अंगेजी सेना किले के अंदर प्रवेश कर गयी अब रानी एवं रानी की सेना को आमने सामने मुठभेड़ करने पड़ी। गदर के इतिहास मे लिखा है कि रानी एक अप्रैल को

---

1. गदर का इतिहास में दूल्हाजू का नाम डल्हाजी बुन्देला ठाकुर बताया गया।

उसी शक्ति और तेज से लड़ी दूसरी अप्रैल को भी। 3 अप्रैल को अंग्रेजो को अंग्रेजो को अंदर घुसने का अवसर मिला दूल्हाजू की मदद से अंग्रेजो को यह लाभ हुआ।दूल्हाजू के विश्वास घात का उल्लेख डा0 ओमप्रकाश पाण्डेय के लेख मे इस तरह मिलता है–

झाँस्या सुदुर्गेऽपि वभूव कश्चिन् नराधयो दुलहनाम धेयः।

उत्कोच लोभेन च येन रात्रावनावृतं दुर्ग कपाटमासीत्।। [1]

संग्राम एवं विश्वास घात से रानी को बहुत हानि हुयी वह युद्ध क्षेत्र में कूद पड़ी। और अपने चंद सैनिको के साथ वह लगातार युद्ध करती रही।[2] रानी को इस तरह खुले आम युद्ध करते देख नाना भोपटकर को उनकी चिंता हुयी और वह उन्हे वहां से अंदर ले आये जहा रानी के हतोत्साहित होने पर उन्होने रानी को उत्साहित कर झाँसी से भागने की सलाह दी क्योकि उन्हे अभी बहुत कुछ करना था।अतः उनकासुरक्षित होना अति आवश्यक था।

युद्ध के बाद की स्थिति–

रानी के बाद झाँसी का ह्रास हुआ, सम्पूर्ण नगरी नाश को प्राप्त हुयी और मानो मृत्यु उस नगरी मे ताण्डव करने लगी–

समधिकतमां पीडां दत्वा ननाश पुरी परा,

सिततनुजुषो लग्ना ध्वसे निरस्रजनस्य हा।

अभिभवयुतां भूभृत्पत्न्या सुगुप्तकलेवरा,

व्यधिषततरां पुर्या तस्यां खला मृतिताण्डवम्।। झां0च0 15/1

लोग तलवार का भोजन बनकर मृत्यु का रौद्र रूप देखते थे–

सिततनुभृतां भूता लक्षं जना असिभोजनं ,

वसनरहिति कृत्यानेके कृता हतिजर्जराः।

समय वदनं कश्चिज्जवलाध्वजं स्म निरीक्षते,

तदुपरि तथा रौद्रां मृत्योर्विलास सकलां तताम्।। झां0च0 15/3

चारो ओर वातावरण भयानक हो गया थोड़ी ही देर मे झाँसी नगरी शमशान बन गयी।सम्पूर्ण भवन गिरने लगे जब गोली चली तो सन् सन् की ध्वनि हुयी। लोग नेत्र बंद करने लगे।नेत्र बंद कर लोग मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे–

धमादिति महारावं कृत्वापतद् भवनं धरां,

सणदिति रवं तन्वन् वाहस्तथा गुलिकाचलत्।

---

1. अजस्रा – 18/1–4 1995 डा0 हर्षनारायण स्मृति विशेषांक (लखनऊ) स्वातान्त्रय गाथा – लक्ष्मीबाई डा0 ओम प्रकाश पाण्डेय

2. अश्वं समारूह च दुर्गपृष्ठात् ललंध राज्ञी तदनन्तञ्च।
एकाकिनी शत्रुदलं वभञ्ज यथा शिवा दैत्य कुलं हिनस्ति।। 42 ओम प्रकाश पाण्डेय– स्वातान्त्रयगाथा लक्ष्मीबाई

प्रतिभयमिदं दृष्ट्वा मूर्च्छं गतं नयनद्वयं,

विबुधवनितावृन्दातिथ्यं जनः सकलोविदत्।। झां० च० 15/8

अंग्रेज स्त्री और पुरूषों को मारते थे आग मे जला रहे थे तथा घेर घेर कर मारते थे–

हरणकरणं वै प्राणानामरेरपि कैतवा।

दहननकरणं स्त्रीबालानामपि व्यथितारतेः।

दुरितमिति यन्मत्वा पुण्यं मयार्जि सितप्रभं।

द्रुहण भगवंस्तवस्यैवेदं फलं भवतार्पितम्।। झां०च० 15/20

सम्पूर्ण झाँसी मे लूटमार की इसका वर्णन इस श्लोक मे देखे–

अरिभिरधमैर्लुण्ठमारं कृतं प्रबलं तथा,

स्वमनसि यथा लुण्टाकाव्यप्यधत्त पराजयम्।

मणशतमिता मण्याल्युच्चप्रभा पथि लुण्ठिता,

बहुगति गृहेष्वापूर्णत्वं कृतं मरणावधि।। झां०च० 15/28

गोडसे ने युद्ध का पूरा वर्णन अपने ग्रंथ माझा प्रवास में दिया है। गोडसे के अनुसार 11दिन लड़ाई चली थी। युद्ध के बाद का यह प्रकरण ह्रदय विदारक प्रकरण था लोगों को आग में जलाया जा रहा था।अग्नि का वर्णन इस श्लोक में मिलता है–

कमलनयना दृष्ट्वा झाँस्यां धगद्धगदुज्जवलद्,

हुतवहशिखां सव्यामोहापतद् मथितान्तरा।

अनवददधिकोन्मत्ता घातं निपातय मय्यरे,

सरलसरलान् निदोषान् हंस्यहो अघिता रिपो।। झां०च० 15/11

इस अग्नि काण्ड मे सम्पूर्ण झाँसी नगरी जलने लगी और वह विशाल पुस्तकालय भी जिसे राजा गंगाधर राव ने बढ़ी ही रूचि से वेदों, शास्त्रों, धर्मग्रंथों, पुराणो आदि से सजाया था जलकर राख हो गया।22वें श्लोक मे भी अग्नि का वर्णन मिलता है–

दहथ सलिलं भोज्यं यूयं त्वदोष जनस्य हा,

स्वदुरितशतं पुष्टीकर्त्तुं किमेष समुद्यमः।

उपकृतिफलं यूयं दद्ध्वे मर्यादमहो खला,

अहह पतिताः किं नेशान्तस्त्वनेन विदूयते।। झां०च० 15/22

इस तरह इस अग्नि काण्ड मे विशाल पुस्तकालय के साथ साथ सम्पूर्ण नगरी दहकने लगी और कुछ ही क्षणों मे जलकर सब कुछ राख हो गया। झाँसी की यह सर्वप्रमुख घटना है जो कि अति ह्रदय विदारक थी।

रानी का झाँसी से भागना–बाँकर से युद्ध–

दूल्हाजू के विश्वास के कारण जब झाँसी नगरी पर अचानक अंग्रजो का क्रूर अत्याचार छा

गया तब रानी युद्ध करते करते 1500पठान सिपाहियो के साथ किले के नीचे उतरी और बड़े फाटक से दक्षिण की ओर बढी। 4 अप्रैल को रानी किले से बाहर निकली बाईसाहब मध्य मे घोड़े पर सवार होकर चल रही थी। यहॉ आमने सामने भीषण युद्ध हुआ तब इस समय नाना साहब भोपटकर ने उन्हे इस तरह अपने प्राण देने से रोका तब नाना भोपटकर ने उन्हे झॉसी छोडकर जाने की युक्ति सुझायी भोपटकर वृद्ध थे तथा नीति मे कुशल। रानी को उनकी बात उचित लगी और उन्होने कुछ सैनिको, पिता मोरोपन्त आदि के साथ झॉसी से निकल जाना उचित समझा। विष्णु भटट गोडसे ने लिखा है– कि इधर बाईसाहब रात के 9बजे सब तैयारी करके किले से बाहर निकली। मोरोपन्त तॉबे जितने सगे सम्बन्धी थे वे सब हथियार बंद होकर साथ हो गये--------बाईसाहब जिस घोडे पर सवार थी वह एक दम सफेद था, 25000रूपयो मे खरीदा गया था और राज रत्न के समान उसका आदर था। उस घोड़े पर बैठकर पीछे रेशमी दुपटटे से बारह वर्ष के दत्तक पुत्र को अपनी पीठ पर वांध कर और वे केवल एक रूपये की रेजगारी लेकर महारानी बाहर निकली शावास उस स्त्री को। झॉसीश्वरी चरितम् मे लिखा है–

सा बबन्ध कृतकं तनयं स्व पृस्ठभाग उदयन्ममकारा।

कौशिकेन वसनेन रमेण मज्जिमानममितं दधार यत्।। झां0च0 16/51

अपिच–

सा दधौ पुरूषवेशमुज्ज्वलं सिहंसहंननमात्मभूच्छटम्।

आकृतिं रतिरवाप यथा सा चिन्तनेन दयितस्य परेण।। झां0च0 16/37

झॉसी राज्ञी वंश वर्णनम् मे इसी तरह की घटना का साम्य मिलता है[1] अपने पुत्र को पीठ से वांध वह भाण्डेरी गेट से होती हुयी झॉसी से निकल गयी–

भाण्डईरविरतौ स्थिता ततस्तातपुत्रभटचिन्तया शुभा।

दत्तभोजनजला सकलाय प्रस्थिताप्यकृत भोजनैव सा।। झां0च0 16/60

जैसे ही महारानी लक्ष्मीबाई शहर से निकली कि अंग्रेजो को पता चल गया। उन्होने वॉकर को रानी का पीछा करने के लिये भेजा। वॉकर ने अपनी सेना लेकर उनका पीछा किया आपस मे युद्ध हुआ पुनः मारकाट मच गयी लेकिन वॉकर को असफलता ही मिली वह रानी को न पा सका और युद्ध मे घायल होकर वापिस लौटना पडा।यह सारा उल्लेख झॉसीश्वरीचरितम् के इन श्लोको मे मिलता है–

बोकरो निकरोद्भटो झटित्यापतन्नृजर्नीं तदन्तरे।

स स्पृशञ्छिशुरिव क्षणप्रभां बालिशोलभत सुन्दरं फलम्।। झां0च0 16/65

अपिच–

धूयमान उदगात् बत काली भ्रूविलास इव सच्छ्वेरसिः।

शिक्षितोपि सुतरां स बोकरघोटको निपतितः क्षितिपृष्ठेः।। झां0च0 16/66

---

1. पृष्ठे स्वपुत्रं सुनिवध्य वीरा, तुरंगमारूह्य करास्थितासिः।

ह्यूरोजमाग्लं युयुधे भटं या, व्रुवे कथं ताम् वलेति नारीम्।। पृ0 148 झांसीराज्ञी वंशवर्णनम्–कृष्णदत्त शर्मा गजानन शास्त्री कर्मरकर

इस प्रकार रानी लक्ष्मीबाई वॉकर को पराजित कर सकुशल कालपी पहुँच जाती है–

कालपीं सकुशलं गमयित्वा वैनतेय इव सैन्धवो रये।

पूर्णलक्ष्य उदगात् सुरलोकं खण्डयमाननृपतिप्रिया धृतिः।। झां0च0 16/74

इस तरह यह भी ऐतिहासिक घटना है जहाँ रानी ने अति वीरता का परिचय दिया तथा राष्ट्रके लिये और भी बहुत कुछ करने के लिये अपने प्राणो को बचाते हुये किसी तरह कालपी पहुँची।अनेक पुस्तको मे उल्लेख मिलता है कि रानी इस समय लगातार 48घंटे तक घुडसवारी करके 302मील दूर कालपी पहुँची। जहाँ उन्होने तात्या, नानासाहब, रावसाहब, आदि से मिलकर आगे की योजनायें सुनियोजित कीं।इस युद्ध मे रानी का घोड़ा जिसका वेग गरूड़ की भाँति, था तथा जो लगातार युद्ध करते हुये, पृथ्वी परिकमा करते हुये भी थका नही था वह मारा जाता है जिसका उल्लेख निम्न लिखित श्लोको से प्राप्त होता है–

पवनं जवनेन लड़.घयन् ददृशे हन्त पद द्वयं भवान्।

दधदन्तरधात्स्वरोहिण मतिदीनो गरूणोऽप्यभूघतः।।17।।1झॉ0 च0

अपिच–

हरिनाम यदप्यधाःपरं त्रपितीकृत्य हरिं गभीरताम्।

न सकृत्यकृतभूपरिकमः पुनरक्लान्तमभूस्तथातुल।।17।13झॉ0 च0

किस तरह वह घोड़ा अपनी जननी मातृभूमि की पूजा करता हुआ अपने प्राणो को न्यौछावर करता है–

प्रथमं सुत औरसो गतः कृतमर्मस्थल कृन्तनो बहुः।

पतिरापततः परासुतां निहतिः सापि बभूव दुर्दमा।।17।33झॉ0 च0

इस तरह इस युद्ध मे रानी का प्रिय घोड़ा भी मारा जाता है।

पिता मारोपन्त की मृत्यु तथा रानी का प्रतिज्ञा करना–

झाँसी मे पराजित होने के पश्चात रानी लक्ष्मीबाई के साथ उनके पिता मोरोपन्त भी उन्ही के साथ झॉसी छोड कर गये थे। अंग्रेजो ने उनका पीछा किया तथा वह अति तीव्र गति से वहा से भागे। इस समय हुये युद्ध मे वह घायल भी हुये तथा इसी अवस्था मे वह दतिया एक तम्बोली के यहा ठहरे। किन्तु राज्याधिकारियों को उनका पता चल गया। राज्य ने सम्पूर्ण धन लूटकर मोरोपन्त को पकडकर झॉसी भेज दिया।

सोवदन्न जगतीह ते पिता विद्यते नियमवान भटेश्वरः।

सा जहार दतिया तमश्विरि भूशयास्ति सकलापि कामना।।18।3झॉ0 च0

राष्ट्रनाश निरतो हि रक्षको भक्षकः स सचिवाधमोभवत्।

लुण्ठ्विताखिलधनं समार्पयज्जन्मदं तव सिताडगशासके।।18।5

पिता की मृत्यु पर रानी गहन शोक व्यक्त करती है तथा अंग्रेजो से प्रतिकार के लिये प्रतिज्ञा

करती है। उनकी इस दृढ प्रतिज्ञा का उल्लेख 18वें सर्ग के 43,44,45,46आदि श्लोको मे मिलता है।

कोंच युद्ध तथा पराजय–

कालपी मे महारानी, तात्या टोपे ने सुनिश्चित योजना बनाई। नानासाहब, शाहगढ़ के राजा वखतवली, बानपुर के राजा मर्दन सिहं, वांदा के नबाब आदि सभी ने दल को संगठित कर महारानी का साथ दिया।कोंच युद्ध के वर्णन मे इनके नामोल्लेख मिलते है सरह्यूरोज को पता चला कि रानी कोंच होती हुयी जा रही उसने अपनी सेना को उसी ओर रवाना किया।जहाँ अंग्रेजो तथा रानी और पेशवाई सेना का घोर संग्राम हुआ रानी अपने यौद्धाओ मे उत्साह का संचार करती है–

पुनरवहतचित्ता योधने ते वभूवुः,

प्रतिधमनि ललासोत्साह एको नवीनः।

प्रतिभटमवदद्द्राग् याहि कोंच बलेशः,

प्रतिपदमतितीव्रं दिद्यते विद्युदेका।। झां0च0 19/15

कोंच युद्ध के समय रानी अंग्रेजी सेना को तितरबितर करने के लिये अपने सैनिको से कहती है–

पवनसुत हरेत्वं लड.घयोत्प्लुत्य मार्ग,

भवतुः विदितमेव श्रेष्ठ मध्यान्तरं ना।

प्रचलसुभट मुण्डं छेत्तुमाश्वद्य कोंच,

रिपुजनमहिमानं शीर्णशीर्णं विधाय।। झां0च0 19/16

इतिहास प्रसिद्ध राजा मर्दनसिंह तथा वांदा के नबाब का उल्लेख इस श्लोक मे मिलता है–
अनमदमितभावं प्राप्य बांदाधिपालोप्यधिप,

उपगतोसौ बामनाम्नः पुरस्य।

अमितमुखमयूखै राजपत्न्याः परीता,

अविदितनिमिषक्षप्रेक्षणे व्यापृतौ तौ।। झां0च0 19/20

तपते हुये सूर्य मे शत्रु सैनिक एवं स्वयं सैनिक टूट पडे–

दशसुगतवतीषूत्तप्तहोरासुं तासु,

रिपुगणमभिपेतुः सैनिका भारतीयाः।

तपनसहनदीनाः शत्रवो नीतिमेतां,

मृतिमवगतवन्तस्तीक्ष्णधर्माभिभूताः।। झां0 च0 19/21

इस तरह कोच मे भी भयानक युद्ध होता है लेकिन पेशवा का सैन्य संगठन निर्बल होने से 22मई का यह प्रयास असफल होता है–

द्वाविंशो दिवसो जगाम स मईमासस्य तां वक्रता,

जातो व्यर्थतरो यया स सकलोप्येकः श्रमः सत्वरम्।

सफल्यं विफलत्वमाप सततं भाग्यस्य कीदृग्गति,

भग्ना किं बत मानवस्य भवति क्षोण्यां सदा कल्पना।। झां0च0 19/53

इस तरह कोंच के इस ऐतिहासिक युद्ध में रानी लक्ष्मीबाई को पराजय का सामना करना पडा।इस कोंच की पराजय का उल्लेख झॉसी की रानी लक्ष्मीबाई[1], बुन्देलखण्ड का इतिहास, गदर का इतिहास, भारतीय स्वतान्त्रय समर आदि पुस्तको मे भी मिलता है। इतिहास के अनुसार कोंच में चलरहे युद्ध में 24 मई को रानी को असफलता मिली सैनिको ने इस युद्ध मे करो या मरो पर चलते हुये पलायन नही किया।

अतः यह वह ऐतिहासिक घटना है जहां निर्बल, एवं निरंकुश पेशवाई सेना के कारण रानी लक्ष्मीबाई को पराजित होना पड़ा।ऐतिहासिक घटनाओ मे यह घटना भी अपना प्रमुख स्थान रखती है। इसी घटना तथा रानी के कोंच आगमन से कोंच को ऐतिहासिक पृष्ठो पर अंकित किया गया।

रानी का कोंच से आध्यात्मिक संबंध–

कोंच युद्ध का प्रसंग चला है तो रानी का कोंच से जो आध्यात्मिक संबंध था उस विषय में प्राप्त संक्षिप्त जानकारी के अनुसार कोंच रामलला मंदिर में उनका आगमन हुआ तथा अपने कुछ आभूषण मंदिर के महन्त आत्माराम जिनसे महारानी लक्ष्मीबाई का आध्यात्मिक संबंध था उन्हें भेट किये थे।

रानी द्वारा ग्वालियर पर आक्रमण तथा विजय–

कोंच युद्ध में पराजय के बाद ऐतिहासिक घटनाओं मे ग्वालियर आक्रमण की घटना हमारे समक्ष आती है। कोंच मे पराजित होकर तथा 22मई के युद्ध के विफल होने पर पेशवा की सेना पुनः रानी की सेना सहित ग्वालियर की ओर प्रस्थान किया–

ग्वाल्यारम्भं चलत नगरं तद् यरं द्रागं विमुक्ति,
दीपंदीप्रं ज्वलयितुमलं स्याम तत्रैव वीराः।
ईशो नश्चेद् भवति स पदं तर्ह्यनाद्या अनन्ताः,
प्रासिष्यामः पुनरपि गलाद् दास्ययोक्त्रं सयत्नम्।। झां0 च0 19/55

यहा सभी ने विचार विमर्श कर सिन्धिया को सहायतार्थ पत्र लिखा–

स पेशवास्त्वोपजगाम साधनैर्लिखामि शीघ्रं मिल सिन्धिया मया।
अपेक्ष्यते सम्प्रति ते सहायता स्वतन्त्रताया इहि दुर्निवारताम्।। झां0च0 20/29

अपिच–

इतिप्रसिद्धाक्षरराजि पेशवाः पराप्य पत्रं सचिवेन सिन्धियाः।
उपान्तचिन्तेन हितैषिणा रिपोर्निरोद्धुमेतान समनह्यत स्वकान्।। झां0च0 20/21

प्रतिकूल उत्तर पाकर रानी सहित पेशवाई सेना ने ग्वालियर पर आक्रमण किया तथा वह 300 घुडसवार लेकर निर्भीक हो चली–

---

1. झांसी की रानी लक्ष्मी बाई – पृ0 416 वृन्दावन लाल वर्मा

त्रयीशतानामधिगम्य सादिनां गताग्रमग्र तनुमत्यभीकृता।

त्रयीत्वमुद्दामतरेण तेजसा ध्रुवं त्रिलोकीविजिगीषुराप सा।। झां0च0 20/37

ग्वालियर का राजा पराजित हो आगरे की ओर भागा। तथा राव साहब को राज्य का राजा घोषित कर उन्हे मंगलध्वनि के साथ सिंहासनारूढ़ किया गया–

वभूव रावस्त्वभिषेकमंगलप्रमुत्परः सौख्यशयेभटावलिः।

सुखातिरेकः कुपथं प्रवर्न्तयत्यथालसीकृत्य विनाशयत्यपि।। झां0च0 20/48

हर्षोल्लास मे डूबी इस सेना पर रोज आकमण की तैयारियां करने लगा। रानी चिन्तित थी लेकिन राव साहब एवं सेना पर कोई असर न था वह उल्लास में डूबे रहे। जनरन रोज के परिश्रम ने पूर्व की अपेक्षा अधिक सबलता पकड़ी। उसने विग्रेडियर स्मिथ को कोटे की सराय की ओर भेजा। कोट की सराय का उल्लेख झांशीश्वरीचरितम के 54श्लोक मे मिला है।[1]

ग्वालियर का युद्ध आरम्भ तथा रानी का वीरता पूर्वक वीरगति पाना–

ग्वालियर की विजय के पश्चात् हर्षोल्लास मे डूबी सेना पर स्मिथ आकमण करता है। रानी की सेना का अंग्रेजी सेना के साथ घमासान संग्राम होता है। घोडे टोपो को पटकते हुये हींसने लगे, मस्तक और कानो को फाडते हुये, और हाथी भी नटो की भॉति युद्ध भूमि मे व्याप्त हो गये।[2] रानी की नृपालिका दोनो सहेलियो ने यौद्धाओ को ललकारा तथा तलवार को देखती हुयी मुस्कराती हुयी वह अंग्रेजो पर टूट पडी–

नृपालिका जूहाथ मुण्दरद्रवन् समाहृयन्तैकभटान सहस्रम्।

विकास समापत्करपालवारिणी स्तिालयो वक्त्रकुशेशयत्रयी।। झां0च0 20/58

स्मिथ ने अपने आपको शत्रुओ से अधिक वलवान माना तथा उन्हे जीतना चाहा। स्मिथ ने पूरे बल को काट डाला तथा रानी की तलवार पर प्रहार कर उसे भी काट डाला। लोग सर्प और विच्छू से डसे की तरह तड़पने लगे–

स्मिथस्य चिच्छेद बलं नृपाल्यसिः परश्वधश्छेति शितो यथा क्षुपम्।

स वृश्चिकोभूदय मारूताशनो मृताश्च दष्टाव्यलपश्च शत्रवः।। झां0च0 20/70

सत्रह जून के दिन संग्राम भूमि का वातावरण भयानक हो गया–

स जूनऐत् सप्तदशोपि वासरः परश्च भर्ष्टु तत आगतो निजान्।

वभूप काकोदर सोदरो रिपुः पदाहतो देशनमात्र जीवनः।।20।72

घोडो के खुरो से उडायी गयी धूल रानी के मुख से सूर्य और चंद्रमा से निकलते हुये प्रतीत होने लगे तथा वह धूल रानी के मुख मे समा जाती थी–

---

1. झांसीश्वरीचरितम् 20/54
2. झां0च0 20/53

खुरेण कृतान्नभसो नृपाडगनामुखे स्थितौ किं मिहिरः शशी गलन्।

यतो रणे सेद्धकरप्रकाशतामवाप रात्रौ शिशिरात्मतां ततः।। झां0च0 20/80

रानी शिथित पड़ते हुये घोड़े को छोड़ तृतीय घोड़ा लेकर आगे बढी–

क्लमाक्षमोय तु निधाय मानसे तृतीयमश्वं नवलं निनाय सा।

पराक्रमेणासमये न लक्षणान्यपीक्षितुं तस्य शशाक साक्षणा।।20।82झा0 च0

इस दोनो सेनाओं में घमासान युद्ध चलता रहा।देखिये किस तरह पिशाचिनी का समूह पास आ गया–

पिशाचिनीसंघ उपागमत्तः समुण्डमालोन्त्रविभूषणान्तरः।

ननर्त्तहर्षध्वनिना रणाडगणे बिडम्बयन्नायुधचालनैर्भटान।।20।92झा0 च0

इस समय तक रानी के पास 15घुड़सवार ही बचे थे फिर भी रानी मुस्कराती बिना रोक सकने वाली गति से चली गयी–

नृपानुगाः पञ्चदशैव सादिनस्तदपि शिष्टाः स्मितमण्डिताननः।

अवार्यतां चक्रगतस्य किं क्वचिद् गताभिमन्योरपि तादृशीं गतिः।झा0 च0 20।97

इस संग्राम मे रानी की सखी मुन्दर मारी जाती है।वह कहती है–

प्रयामि हे देव्यपुनर्निवृत्तये नतिं गृहाणेत्यघ शुश्रुवे ध्वनिः।

नृपा व्यलोकिष्ट यथा सखी गता विहाय मुण्दर्गुलिकाक्षताधिका।झा0च020।102

इस तरह लंबे समय तक युद्ध करते करते शत्रु ने अवसर पाते ही पीछे से आकर तथा घोडे के पीछे से अपने आपको छुपाकर रानी के सिर पर प्रहार किया–

तदेक आयादरिराशु पृष्ठस्तुरड़.गपश्चार्द्धसगूढ़विग्रहः।

प्रदाय धर्मे सुकृते तिलाञ्जलिं शिरम्यमूं हा प्रजहार दुर्दमः।।20।117झा0च0

अपिच–

असौ पतन्त्येव कपोललम्बनमवामकं तच्छिरसोर्द्धमाश्रयत।

उवाच च प्राप्नुहि पारितोषिकं प्रसन्नचितोलमलं भयेन ते।झा0च020।118

वडी ही वीरता के साथ युद्ध करते–करते रानी घायल हो चुकी थी। राम चन्द्रराव देशमुख रानी को बाबा गंगादास की कुटी पर ले गये–

आसीत्कार्पटिको यतो रणभुवः सामीप्य एव स्थितो,

गंडगादास इति प्रसिद्धधविरूदो राष्ट्रे रतात्माग्रणीः।

दत्वा स्वास्तरण हिमं च सलिलं सोच्छ्वासदैर्ध्य तदा,

भुव्येवोपविवेश सार्त्ति सधमत्कारं समस्तैः समम्।।20।122झा0च0

अपिच–

दासेनरामेण निरीक्ष्यमाणा राज्ञी विसंज्ञा पतिता शयान्तः।

चित्रैश्चलदिभः स्फुरितान्तरात्मा स्वप्नायमाना निजगाद सेत्थम्।। झां0च0 21/1

रानी अपनी मृत्यु के समय अपने शैशव का,अपने मित्रों का,अपने ईष्टदेवो आदि का स्मरण तथा कॉंति के प्रचारीतीन मुल्लाओ का स्मरण करती है–

वन्देसदाक्रांतिवचःप्रचारे निर्भीक मुल्लात्रय मास्तु शान्तिः।

वन्दे सदा वीर करीम नेतः केतुर्गयाया हरितो न वाद्य।।21।36झा0च0

रानी नही चाहती हैकि उनके पवित्र शरीर को अंग्रेजो द्वारा छुआ जाये–

गौङ्गधिक शीघ्रमपेह्यपेहि तीर्थाम्बुपूतां स्पृश मे तनुं नो।

अस्मै त्वया पापधनाय दत्ता यच्छन्तता साधु कृतं तदडग।।21।5झा0च0

इस तरह सबका स्मरण करती हुयी रानी को दो बार हिचकी हुयी और उनके प्राण अंतरिक्ष मे उडगये–

सहसा नृपत्न्यहिक्कत द्विरितो धूतरजश्चयाःपुनः।

असुपक्षिणं आशु लीनतां गतवन्तोह विदीर्णपुष्कराः।। 21/53

इस प्रकार 18जून 1858 को वीरांगना लक्ष्मीबाई का शरीरान्त हो गया–

अष्टादशाह खलपुडगव जूनमासे रोद्यामहे न च दशाह विलोक्यते नः।

नास्या अभावि तव तुष्ट्य ईर्मकोषैर्देदीयते हृदयघातशतानि यन्नः।।21।23झा0च0

अपिच–

वसुपुराणाख्यं, हेशाब्देदं दिनं दधत्

उपदां विपदामेतां, ददन्नो धिड्न लज्जितः।।21।124

रानी की मृत्यु का दिन तथा दिनांक झॉंसी की रानी लक्ष्मीबाई बुन्देलखण्ड का इतिहास आदि पुस्तकों में यही मिलता है। इस प्रकार इन मुख्य ऐतिहासिक घटनाओ का वर्णन झॉंसीश्वरी चरितम् मे अति विस्तृत तथा सजीव रूप में किया गया है तथा इन घटनाओ का विशद विवेचन किया गया है। इनमे जिन घटनाओ का वर्णन हुआ है,वे गदर का इतिहास, स्वतान्त्र समर, सन्1857की कांति बुन्देलखण्ड का इतिहास,झॉंसी की रानी आदि ऐतिहासिक ग्रंथो से मेल खाती है।

झॉंसी राज्य का स्वरुप–

राजा गंगाधर राव के समय तक कंपनी राज्य का सम्पूर्ण विस्तार हो चुका था। भारत का ऐसा कोई राज्य नहीं था जहॉं अंग्रेजो का अधिकार न हो।

रामचन्द्रराव और अंग्रेजों की संधि के अनुसार अंग्रेजो ने उनका अधिकार स्वीकार कर लिया था तथा उत्तराधिकारी के रूप में राजा गंगाधर राव इस राज्य के राजा थे। झॉंसी राज्य मे कुप्रबन्ध ा,कुशासन था।झॉंसी की गद्दी पर राजा गंगाधर राव आसीन थे और राज्य पर अंग्रजी शासन था लेकिन उस समय नगर का शासन गंगाधर राव सभाले हुये थे। विवाहोपरांत राजा गंगाधर राव को शासनधिकार प्राप्त हो गया था।

झॉंसी के पूर्वी परगनों मे पंडवाहा,गरौठा नौटा इत्यादि थे। सागर गढ़कोटा,शाहगढ, मदनपुर मडावरा आदि झॉंसी राज्य के बड़े–बड़े नगर गढ एवं गॉंव थे। पूर्वी तहसील मऊ मे भी एक छोटा गढ

था।

झासी के राज्य मे राजा गंगाधर राव के समय 5000सेना, दोसहस्र गोलपुलिस, 500घोडो का रिसाला, सौ खासपायगा 4 तोपखाने आदि थे।

राज्य मे मूर्धन्य स्थान राजा का था जो अपने मंत्रियो के साथ परामर्श के अनुसार शासन करता था। राज्य के मंत्रिपरिषद के सदस्यो की नियुक्ति राजा द्वारा की जाती थी।

राजा गंगाधर राव के राज्य के समय झाँसी राज्य के प्रधानमंत्री पद पर रामचन्द्र[1], दरबारवकील के पद पर नरसिंह राव[2], न्यायाधीश वृद्धभोपटकर[3] फौजी अफसर दीवान रघुनाथ सिंह[4], जवाहर सिंह[5] आदि अपने–अपने पदो पर आसीन थे।इन सबका उल्लेख दसवे सर्ग मे किया गया है पंचायते थी जो गांव का प्रबंध करती थी। बडे बडे मुकदमे ही राजा गंगाधर राव न्यायाधीश नाना भोपटकर के सहयोग से निपटाता था। दंड का अधिकार भी इन्ही के अधिकार मे था

झासी राज्य मे उस समय तंत्र मंत्र शास्त्री, वैद्य आदि अनेक प्रकार के विशेषज्ञ भी थे। वैद्य का नाम झासीश्वरी चरितम् मे प्रतापशाह वर्णित किया गया है–

वैद्यराजा प्रतापोयमाशानिर्बन्धत श्युतः।

पौनः पुन्येन शून्येक्ष आकाशमवलोकते।।10।22

झासीश्वरी चरितम् मे वर्णित इन नामो से प्रतीत होता है कि राजा की सहायता हेतु मंत्री परिषद होती थी। राजा की उपाधि मिलने के उपलक्ष में राज्य के छोटे बडे समस्त जागीरदारो को पुरस्कृत किया जाता था।झासी की रानी लक्ष्मीबाई मे छोटे जागीरदारो मे आनन्द राय का नामोल्लेख किया गया है जो उस समय मऊ का जागीरदार था।सूबेदार सशक्त थे। गाँवटी पंचायते बनी हुयी थी। राजा गंगाध ार राव के राज्याधिकार मे अंग्रेजो के अधिकार से पूर्व पंचायतो के अधिकार जब्त होकर अदालतो तक नही पहुचे थे। किन्तु अंग्रेजो के लिये यह पंचायते कष्टप्रद प्रतीत होती थी वह जानते थे कि इन पंचायते के नष्ट होने पर ही भारतीय जनता उनके आगे नतमस्तक होगी अतः उन्होने पंचायतो का सर्वनाश किया।

दण्ड देना राजा के अधिकार मे था। अपराधो के लिये राजा कठोर दण्ड देता था। झाँसी की रानी से ज्ञात होता हैकि उस समय विच्छू से कटवाना, घोर अपराधो मे हाथ पांव कटवाना, कटठे मे पैर

---

1. झां0च0 10/48
2. झां0च0 10/33
3. झां0च0 10/29
4. झां0च0 10/38
5. झां0च0 10/39

डालकर भाँजन आदि कठोर दण्ड विद्यमान थे जो उस समय राजा गंगाधर राव द्वारा दिये जाते थे। झासी के राज्य मे एक अंग्रेजी फौज रखी गयी थी जिसका खर्च झासी का राज्य वहन करता था। झासी का पांचवे अंश से अधिक राज्य अंग्रेजो के अधिकार मे था।

राजा गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात् रानी किले वाले महल मे रहती थी तथा सिपाही, प्यादे नीचे का महल हाथी खाना, सेना, घोड़े हथियार सब हाथ मे थे। नगर का शासन सूत्र अधिकार मे था। राज्य की मालदीवानी भी रानी के मंत्रियो के हाथ मे थी। कंपनी सरकार छावनी मे अपनी सेना और तापें बढाने मे व्यस्त थी।

झासी नगर के चारो ओर परकोटा था[1] तथा यहॉ का किला अत्यन्त विशाल था। राजा गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात अंग्रेजी राज्य हो गया, अंग्रजो का आधिपत्य था–

गुरूण्डजातेरघजातमुत्कटं तामेव खादेदघिनीमसंशयम्।

तन्निर्मितं दुर्णय चक्रमुज्ज्वलत्तामेव कण्ठे प्रहरेदिति ध्रुवम्।।झा0च011।19

झासी में विशाल पुस्तकालय था जिसमे वेद, उपनिषद, दर्शन, पुराणतंत्र, आयुर्वेद ज्योतिष, व्याकरण, काव्य इत्यादि ग्रंथ सुरक्षित थे।

झांसी मे बड़ी हिन्दू विरासत थी। यहॉ अंग्रेजो ने भारतीयो को ऊँचे पद पर आसीन नही किया था। झाँसी राज्य मे एक विशाल दुर्ग था–

निर्मितः प्रस्तरै कोटो दुर्जेयोघोरसुन्दरः।

यत्र वज्रमपि व्यर्थ शतध्न्यास्तु कथैव का।। झां0च0 11/44

अंग्रेजो के अधिकार के बाद सम्पूर्ण राज्य पर उनका अधिकार हो चुका था तथा समस्त्र झासी मे एक उत्तेजना तथा विद्रोह की भावना जाग्रत हो चुकी थी तथा इसी विद्रोह ने सन् 1857की काति को जन्म दिया।

झाँसीश्वरी लक्ष्मीबाई का राज्यारोहण–

राजा गंगाधर राव की मृत्युपरान्त रानी का हृदय वज्राद्यात से व्यथित तथा व्याकुल हो गया था।अतिशय मनः शोक संतप्त होने पर भी रानी ने धैर्य तथा, साहस के साथ अपने राज्य मे शिथिलता को आश्रय न देते हुये राज्य के शासन की बागडोर अपने हाथ मे लेकर अपने राज्य तथा वहा के जन समुदाय की सदैव पूर्ण मनोयोग से रक्षा की।

वभूव चर्चाविषयो गृहे गृहे नृपाङ्नासैव तदा यशस्विनी।

निजत्वपूर्णानि जनस्य रेजिरे समस्य झास्थां वचनानि तांप्रति।।9।1

पुनः झासी का पवित्र सिंहासन राजा से स्वाधीनता की सुंदरता से विभूषित हुआ तथा रानी सभी कर्मो को करती हुयी अपने राज्य तथा प्रजा के लिये सदैव तत्पर रही–

---

1. विलोक्यत इतो लध्वीं वरप्राकारवेष्टिता।

श्रेष्ठव्यूहनिवद्वेव राजसेना सुरक्षिता ।। 8/2 झां0च0 पृ0 48

इयाय यत्कर्मकरीसमूहनं तदेक सख्यं गमित तया द्रुतम्।

अवाप्य सेव्यां तदपीश्वरीमम्ूं परं समासादितवन्मुदोवधिम्।।9।2

राज्य का कार्यभार संभालने के पश्चात् रानी अपने देश तथा राज्य की चिंता मे चिंतित रहने लगी–

चिंतासमूहः प्रसमं महेश्वरीं क्षयप्रभं क्षाययतिस्मसर्वदा।

आरोहणार्थ ज्वलितेव सञ्चिता सोभर्तृकायाः कृत आजगाम हा।।11।1

वह अपने राज्य की पूजा करना चाहती थी सोये हुये राष्ट्र के जागरण हेतु प्रयत्नशील थी–

परोपकारे च परेशपूजने, वभूव तज्जीवनमर्पितं सदा।

सुप्ता स्वराष्ट्रार्थजागरीतथा क्षणे क्षणे राष्ट्रदशामचिन्तयत्।।11।2

अंग्रेजों को देशी राज्य हड़पने की दुर्नीति का महारानी द्वारा प्रतिशोध एवं भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के यौद्धिक अभियान में रानी की गतिशीलता–

विदेशियों की पक्की कूटनीति और सफल सैनिक संगठन ने भारतीयो मे फूट अदूरदर्शिता तथा स्वार्थपता पर अट्टाहस किया और उन्हें पराधीनता के पाश मे वांध दिया। इस प्रकार की अनेको वार्तायें रानी लक्ष्मीबाई बचपन से ही पेशवा बाजीराव के द्वारा ही सुनती रहती थी। तथा सर्वस्व अधिकार अंग्रेजो का अपने राज्य पर देखती तो बचपन से अंग्रेजो के प्रति घृणा उनमे कूट–कूटकर भरी थी। बचपन से ही वीरता और पराक्रम की झलक उनके अंदर थी वह हमेशा महान चरितो का स्मरण कर अपने देश पर अंग्रजो के आधिपत्य पर विचार करती रहती थी।

विवाहोपरांत जब कुछ समय पश्चात् राजा गंगाधर राव की मृत्यु हुयी तथा लार्ड डलहौजी की नीति से जब झाँसी राज्य को कम्पनी सरकार के अधिकार में कर लेने की आज्ञा दी गयी तो जो घृणा और देश प्रेम की भावना रानी के हदय मे बचपन से ही पल रही थी उसने भयंकर प्रतिशोध का रूप धारण कर अंग्रेजो को देश से निकालने तथा स्वराज्य की स्थापना हेतु कांति के रूप मे प्रस्फुटित हुआ। अपनी झाँसी को अंग्रेजो के हाथ मे न देने का प्रण उन्होने कर लिया था किंतु अंग्रेजो की कुटिलता से वह पूर्णरूपेण परिचित थी इसलिये उन्होने अपनी प्रतिशोध की भावना को कुटिल नीति से ही अंग्रजो का सामना किया

अव्यार्जवस्यर्जुवरायि भारत प्रभुर्विमोक्षाय सुदेश नो भवः।

सारल्यमस्त्येकमलङ्कृतिर्वरं कौटिल्यमप्यङ्.ग भवेत्सहैव नो।।11।23

रानी का प्रतिशोध कौटिल्य नीति के रूप मे प्रस्तुत हुआ यही उनकी राजनैतिक पटुता थी।

जानीहितत्वं कुटिलोधिमेदिनी ज्यायान् वलीयान् सरलाज्जनात्सदा।

रेखापि वक्राव्यभिचारिसर्जुतो द्राघीयसी सम्भवतीति दृश्यते।।11।28

महारानी लक्ष्मीबाई इन छोटी वाधाओ का डटकर प्रतिशोध करती रहीं। उन्होंने अपने स्वराज्य की धारा को आगे बढ़ाने का वीड़ा उठाया। वह काव्य,साहित्य, शास्त्रवेद आदि का अध्ययन करने वाली

थी अतः वह हमेशा गीता के श्लोको का स्मरण करने वाली फल की चिंता न कर कार्य करती थी आपके हदय मे प्रतिशोध एवं कांति की ज्वाला लगातार धधक रही थी। और यह प्रतिशोध भयंकर एवं भीषण रूप धारण कर अंग्रेजो के विनाशं का कारण बनता है तथा एक युगांतकारी घटना का रूप धारण कर देश मे जाग्रति पैदा करता है। किसी अन्याय और शोषण के लिये प्रतिशोध ही उत्तम है।

शिवाजी महाराज की गौरवपूर्ण स्मृति उनके अन्तःकरण मे सदैव रहती थी अतः ऐसे गौरब पूर्ण महानकार्यो की ऐतिहासिक कथाओ ने प्रतिशोध और कोध की ज्वालाओ को अधिक प्रज्जवलित किया था। रानी के कठोर प्रतिकार से अधिक शक्ति होने पर भी अंग्रेज 31मार्च तक किले मे न घुस पाये थे

प्रतिकार की भावना शनैः शनैः बढ़ती गयी और अवसर पाते ही उसने दावाग्नि का रूप धारण कर लिया था।

पिता मोरोपन्त की मृत्यु के पश्चात उनके मन मे देखिये किस तरह प्रतिशोध की भावना जाग्रत हुयी तथा वह प्रतिज्ञा कर उठती है–

ज्वाला रड़गकीड़ां समरज्वालावलौ करिष्यामि।
दासत्वाऽकं घोरं त्यागाब्धौ मज्जयिष्यामि।।18।44

अपिच–

खड्गं श्रृगं पूर्ण ज्वालारड़गेण संविधास्यामि।
भरतक्षितिशिखि चूर्ण शत्रुभ्यो दर्शयिष्यामि।।18।45

अपिच–

कृत्रिमग्नेश्चूर्ण किं मेहं नैव तत्प्रयोक्ष्यामि।
अस्यार्चिस्तापेरीन् क्वाथत्वं साद्य नेष्यामि।।18।46

स्वाधीनता को छीनने का पाप करने वाले का प्रतिशोध अवश्य लेना चाहिये आज नही तो कल शीघ्र नही तो विलम्व से भयंकर और सर्वभक्षक प्रतिशोध अवश्य लिया जाता है।

रानी की कमर मे लटकती तलवार मानो म्यान से बाहर निकलने के लिये तड़प रही है सारा देह स्वराज्य तथा सर्वधर्म के अपमान का प्रतिशोध लेने की तीव्र आकांक्षा तथा कोध से लाल हो उठी।वह भव्य मूर्ति हमारे मनःचक्षु के समक्ष ख्ड़ी हो जाती है और हमे प्रभावित कर देती है।

अंग्रेजो की गोद हड़पने की नीति और नीच धूर्तता से रानी के आत्माभिमान और प्रतिष्ठा पर ठेस लगी। इस अपमान से उनके कोध की आग धधक उठी। अपना राजनैतिक स्वातंत्रय छीनने के लिये तथा अपनी पितृ भू और पुण्य भू के उज्ज्वल विरद की रक्षा हेतु सशक्त प्रतिकार करने के लिये विग्रह मे उतरने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं था।

यज्ञ वेदी की उफनती अग्नि ज्वालाओ पर तांडव करती हुयी महाकाली इस महायज्ञ की अधिष्ठात्री जैसे स्वयं साकार हो उठी थी। प्रतिशोध को देखकर अत्याचारी राज सत्ता मौत से भी अधिक डरती है।रानी गीता का पाठ करती थी अतः गीता श्लोको का स्मरण कर उनका अंतः करण नूतन प्रेरणा से भर जाता

था।

"काली भवानी नमो नमस्तेऽस्तु सहस्त्र कृत्वा।"

"तस्मात् युद्धाय युज्यस्व सा" उठो लड़ो और इस समय एक ही उपाय युद्ध था हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्ग जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् गीता के यह संदेश उन्हे प्रतिकार के लिये प्रेरित कर रहे थे।

इसी प्रतिशोध को गति देने के लिये विठूर मे एक गुप्त संगठन की स्थापना हुयी। समूचे भारत मे प्रचारको को भेजा गया, रियासतो के शासको को अनुरोध किया गया था कि वह स्वाधीनता की इस कांति मे सहयोग प्रदान करें दिल्ली के दीवान इखास ने कांति का बीज अच्छी तरह जड़ पकड़ रहा था नगर नगर गांव गांव मे मौलवी तथा पंडित फकीर एवं सन्यासी देश के कौने से दूसरे कोने तक यात्रा कर इस राजकीय स्वातान्त्रय युद्ध का गुप्त प्रचार करते थे।

जब विदेशियो की पक्की कूटनीति और सफल सैनिक संगठन ने भारतीयो मे फूट अदूरदर्शिता तथा स्वार्थ परता पर अट्टाहस किया और उन्हें पराधीनता के पाश मे बांध दिया। तब रानी के प्रतिरोध की भावना कई गुना अधिक बढ़ गयी। प्रतिशोध की भावना स्वाधीपता की कांति के बीज के रूप मे प्रस्फुलित हुयी शनैः शनैः उन्होने अपनी इस प्रतिशोध की ज्वाला को गति प्रदान करना आरम्भ किया। वह और भी अधिक सजग हो गयी।

महारानी लक्ष्मीबाई के समक्ष केवल झाँसी राज्य की स्वतंत्रता का ही स्वप्न नही था वरन् सम्पूर्ण देश को स्वराज्य के सूत्र मे पिरोना ही उनका उद्देश्य था और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु महारानी लक्ष्मीबाई की जो गतिशीलता रही वह प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय थी।

जब रानी लक्ष्मीबाई झासी नगर की वधू बनने पर वहाँ की स्त्रियो तथा अपनी सेविकाओ जिन्हे वह सखी मानने लगी थी से मिली तभी उन्होने उनका उत्साह वर्धन कर उनसे अश्वारोहण मलखम्भ तलवार चलाना आदि कलाओ के लिये पूछा तथा नगर की समस्त्र स्त्रियो को इस हेतु प्रेरित किया–

वदन्ति नारीमबलां नरास्तु यां न सा तथेत्यस्ति दृढ़ मतं मम।

भवस्य शक्तिः पुरूषार्धमुन्नतं कदापिमागादबलत्वहीनतामु।।9।18

भारत वर्ष के हित के लिये उन्होने नारी की उपयोगिता बताकर[1] झासी राज्य की नारियों को देश के लिये उनके हृदय मे उठ रही ज्वाला को और अधिक भड़काया। धीरे धीरे उनकी सेविकाओ मे चेतना जाग्रत हो उठी–

सेविका स्फूर्ति युक्तानि श्रावं श्रावं वंचासि ताः।

स्फूर्तिमुद्दीपयामासुर्गेहं गेहमबुद्धयत।।9।29

अपिच–

1. झां०च० 9/17

समागमेषु तेस्वेव क्रांतिबीजमवप्त सा।

समग्रमेव बुन्देलखण्ड चक्रे यशश्चयम्।।9।32

वह हमेशा झासी एवं वहा के जन समुदाय के लिये चिंतित रहती थी तथा अपना जीवन राष्ट्र के जागरण हेतु अर्पित कर दिया था।

उन्होने स्त्रियो को घुड़सवारी तलवार चलाना, भाला, तोपे, बंदूक, तीरंदाजी, आदि मलखम्भ कुश्ती का अभ्यास आरम्भ कराया तथा स्वयं इन सबका निरंतर अभ्यास करती थी क्योकि स्वाधीनता के उस स्वप्न का साकार करने के लिये उनकी यह गतिशीलता अति आवश्यक थी।

झासीश्वरी चरितम् के मत मे नारियों का कर्तव्य गृहकार्य मात्र नहीं था अपितु राष्ट्र रक्षा उनका पावन धर्म था।

यथा विधानं सदनस्य लिप्सितं भवन्त्थैतद् भरतावनेरपि।

नरा यदैव प्रविशन्ति निर्भयं खाङ्.गवान्तः प्रविशाय तत्क्षोद्।। 9/21 झां0च0

महारानी लक्ष्मीबाई ने अपनी सेना का निर्माण किया जिसमे पुरूषो के साथ–साथ स्त्रियो की भी सेना थी जिनमे सुन्दर–मुन्दर काशी मोती जूही आदि प्रमुख थीं।

रानी हमेशा अपनी सेना के समक्ष गौरव आत्मसम्मान विजय आदि के प्रलोभन दे अपने ओजस्वी भाषणो से उनका उत्साह वर्धन करती।[1]

तात्या टोपे, नानासाहब, आदि के साथ–साथ वानपुर के राजा, वांदा एवं शाहगढ़ के राजा से समय समय पर भेट कर यौद्धिक अभियान की योजनाओ को तैयार करती थीं।

रानी मे एक साथ मनुष्य, शासक और राजनीतिज्ञ के अनेक गुण विद्यमान थे। उन्होने अपनी सेना मे डाकू सागर को तथा उसके अनेक साथियो की भर्ती कर अपनी सेना को मजबूती प्रदान की तथा सैनिको मे निरंतर जोश उत्साह एवं चेतना का संचार करती रहीं।

तात्या टोपे समय समय पर सभी रियासतो एवं राजाओ का हाल उन्हे सुनाता था। युद्ध परिस्थितियो पर वार्तालाप कर वह अपने आपको इस क्षेत्र मे और भी अधिक परिपक्व करना चाहती थी।

झासी की प्रजा को उनकी यह दैनिक कियाये उनकी राजगता तथा अपने सैन्य संगठन का प्रबंध करना, निरंतर स्वयं अभ्यास करना तथा समस्त स्त्री सेना को पारंगत करना आदि को देखकर विश्वास होता था कि अकेली रानी ही इन घूर्त अंग्रजो के लिये अधिक है–

राजेश्वरी सा सकलस्य रक्षित्र्यवेक्षते नैव सहायतां नः।

एकापि योद्धुं प्रभत्यरीणां समूहनेनेति जना अवोचन।।13।8

रानी अपनी वुद्धि उत्साह योग्यता एवं कार्य कौशल से अपने यौद्धिक अभियान को जो गति दे रही थीं उसका आभास अंग्रेजो को न हो सका यही उनका वुद्धि चातुर्य था।

---

1. ततो हतोत्साहमवेक्ष्य वीरव्रजं निजं सा निज़गाद राज्ञी।

उद्वोधनाक्तां प्रबलां भ्रमन्ती वाणीं ज्वलन्तीमिव सैन्यमध्ये।। झां0च0 13/71

भारत की जनता मे शनैः शनैः विद्रोह की ज्वाला भभक गयी। समस्त देश मे सुसंगठित तथा सुदृढ़ रूप से कांति को कार्यान्वित करने की एक तिथि निश्चित की गयी। लेकिन इससे पूर्व ही कांति की ज्वाला प्रज्जवलित हो उठी तथा अनेक स्थलो पर भीषण विप्लव हुये इस ज्वाला की लपटे झासी मे भी उठीं।

रानी की युद्ध मे गतिशीलता का एक और उदाहरण देखिये–

एकस्मिन् दिवसे योद्हरयस्त्वां नेत्रीकृत्य योषिताः।

सौदामन्यो भविष्यामो वर्धमाने रिपुव्रजे ।।8।46

वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई ने अपनी सेना को भालो इत्यादि से सज्जित कर लिया–

अङ.गानियानि कुसुमास्तरणेपि पूर्व झासीनरीसमुदयस्य गतान्यशातिम्।

तान्येव हन्त निहातान्यसहन्त कुन्तैर्दण्डश्च सन्ततमहो नितरां व्यथालीम्।।9।36

रानी को अपने देश के प्रति भक्ति उनका शौर्य पराक्रम एवं वीरता देख कर झासी सैनिको का उत्साह दो गुना हो गया तथा साथ ही सैनिको की संख्या भी दो गुनी हो गयी

सङ्ख्या वभूव च पुरि द्विगुणा भटानां हर्षाम्बुधौ सततमज्जनशीलभाजाम्।

तत्सङ्ख्या सहितमेव बभौ तदीय उत्साहराशिरपि स द्विगुण प्रसारः।।9।34

उन्होने अपने लक्ष्य को गति देते हुये जों सेना का निर्माण किया था वह इस प्रकार था– समस्त पुराने सैनिक उन्होने बुला लिये तथा कुछ नये सैनिको को भी उन्होने अपनी सेना मे शामिल किया। समस्त वर्ग के लोग एकत्र किये। विभिन्न पदों के पदाधिकारी उन्होने नियुक्त किये–

प्रधानमंत्री रामचंद्र देशमुख, न्यायाधीश नाना भोपटकर, दरवारी वकील नरसिंहराव, दीवानजवाहरसिंह कर्नल रघुनाथ सिंह, खुदावख्श सभी सेना के कर्नल सुंदर मुंदर काशी, गुप्तविभाग मे मोतीबाई जूही तोपखाने का प्रधान गुलामगौस खॉ, घुड़सवारी का प्रधान स्वयं रानी। उन्होंने तलवारे बंदूके गोले तोपें आदि तैयार करने का कार्य आरम्भ कर दिया।

महारानी लक्ष्मीबाई ने की क्षमता व्यूहरचना ओजस्विता एवं धीरता अपूर्व थी। योग्य व्यक्ति की परख मे वे वेजोड़ थी सेना के लिये विश्वास पात्र तथा योग्य सेना पतियो की नियुक्ति उन्होने कीं। महारानी लक्ष्मीबाई भारतीयो के अस्तगंत शौर्य को बड़ी कुशलता और वीरता से पुनर्जागृत किया। उन्होने देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति, मातृभक्ति की सेवा भाव का तथा आत्मविश्वास का झासी की जनता मे संचार किया।

रानी ने वानपुर के राजा वांदा के नवाव आदि से भी सम्पर्क बनाये रखा तथा इन लोगो ने रानी का पूर्ण सहयोग किया।

अनमदमित भावं प्राप्य वांदाधिपालोप्यधिप उपसतोसौ वामनाम्नः पुरस्य।

अमितमुखमयूखे राजपत्न्याः परीता अविदितनिमिषाक्षिप्रेक्षणे व्यापृतौ तौ।।19।20

इस प्रकार झासीश्वरी निरंतर अपने देश अपने राज्य तथा अपनी प्रजा के लिये चिंतित रही तथा

बिना शांति से बैठे वह नानासाहब रावसाहब तात्या जीनत वांदा के नबाब वानपुर के राजा आदि के साथ मिल कांति की योजनाये बनाती रही तथा अवसर पाते ही अपनी इन योजनाओ को सफल बनाने का अथक परिश्रम कर अंतिम समय तक अपने गतिशील होने का परिचय देती रही।

विविध स्थानो पर अंग्रेजो से हुयी मुठभेड़ मे महारानी का वीरता पूर्वक युद्ध करना तथा वीरगति पाना–

महारानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजो के क्रूर अत्याचार को तथा शासन को समाप्त करने के लिये वह पूर्ण रूपेण सजग थी तथा स्वराज्य की स्थापना के लिये वह पूरी तैयारी कर चुकी थी वस उन्हे प्रतीक्षा थी तो उस अवसर की जब वह अपनी योजना को अंतिम रूप मे कार्यान्वित करती।अंग्रेजो के छल कपट और विश्वास घात की नीति से सैनिक भी अवगत हो गये थे अतः उन्हे भी उचित अवसर की प्रतिज्ञा थी। किंतु निश्चित तिथि से पूर्व ही कुछ सैनिको ने विद्रोह कर डाला और झासी मे भी इस विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी जिसे रानी ने और अधिक प्रज्जवलित किया लेकिन अंग्रेजो ने भी साहस और धैर्य न छोड़ा परिणाम महारानी लक्ष्मीबाई को अनेक स्थलो पर अंग्रेजो का सामना करना पड़ा।

सर्वप्रथम झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के दमन का स्वप्न लेकर 1857मे सरह्यूरोज को एक बड़ी फौज के साथ झाँसी भेजा गया। घोर संग्राम हुआ। दोनो सेनायें पूर्ण उत्साह बल के साथ लड़ रही थी। रानी को अपने सैनिको की वीरता पर पूर्ण भरोसा था और उनके सैनिक उनके इस विश्वास को अधिक मजबूत बना रहे थे। झाँसी का अंतिम युद्ध झासी के दुर्ग पर घमासान गोलावारी के साथ हुआ अकस्मात् रानी को विश्वासघात का विष पीना पड़ा। विश्वासघाती लोगो ने दुर्ग का फाटक खोल दिया जिससे अंग्रेजो ने किले के अंदर प्रवेश कर लिया। लक्ष्मीबाई यह देखकर स्वयं शत्रुओ से भिड़ गयी। अंग्रेजो से उनकी भयंकर मुठभेड़ हुयी। दोनो सेनाओ मे घमासान भीषण युद्ध हुआ–

सैन्य द्वयं घाट्टितवन्महामदं सड.गा आश्वेव वभूव भीषणः।

प्राणा निरस्ता अभवन् प्रियाः परं व्यापादयेहीति वितेनिरे रवाः।। 14/74

रानी ने यहॉ अपनी देशभक्ति तथा स्वराष्ट्र की कल्पना को साकार करने का अति सुंदर परिचय दिया। अनेक अंग्रेजो से घिरी वह निडर हो साहास से उनके छक्के छुड़ाती रही तथा मारकाट मचाती रही–

अन्यत्र रूण्डो न्यपतच्च मुण्डकोप्यन्यत्र नो कस्य क इत्यवैज्जनः।

राशीवभूवुश्चरणास्तथा करा आसीन्महाड़गापण आजिमेदिनी।। 14/83

भीषण अट्टाहसों से सम्पूर्ण वातावरण भयावह हो गया–

घोरः कृपाणो नृपतीश्वरीकरे भीस्माट्टहासेन समं महारयः।

वर्षन्नदआं बिबभौ शिखावली शत्रून विरक्तीकृतवान् रणाड़.गणक।। 14/75

फिर भी रानी का साहस कम नहीं हुआ उन्होने एवं उनकी सेना ने कई अंग्रेजी वीर यौद्धाओं को परलोक पहुँचा दिया। युद्ध करते–करते जब उन्हे शत्रु पक्ष की शक्ति से आभास हुआ कि वह अधिक देर तक टिक नहीं सकती तो वह शत्रु के बीच से मारकाट मचाती हुयी अपने पुत्र एवं कुछ सैनिका के

साथ वहा से निकल भागी भाण्डेरी गेट से निकलकर कुछ दूरी पर प्राण घातक मुठभेड़ अंग्रेजी सैनिक वोकर एवं उसके अन्य सैनिकों से हुयी। उन्होने उन सब को घायल कर पराजित कर दिया तथा सकुशल कालपी पहुँच गयी।

कालपी सकुशल गमयित्वा बैनतेय इव सैन्धवो रये।

पूर्णलक्ष्यव्द्गात् सुरलोकं खण्डयमानतृपतिप्रियाधृतिः ।।16।74

इस प्रकार सर्वप्रथम रानी की अंग्रेजो से झाँसी के युद्ध मे मुठभेड़ हुयी जहाँ रानी ने अपनी वीरता से युद्ध किया।

तत्पश्चात् महारानी लक्ष्मीबाई तात्या टोपे रावसाहब वानपुर के राजा आदि कोंच मे एकत्र हुये तथा पुनः अंग्रेजो के विरूद्ध योजनायें तैयार की गयी। सरह्यूरोज रानी के कोंच आगमन का पता चला। सरह्यूरोज के कोंच पर आकमण की तैयारी आरम्भ कर दी। उसने कोंच को अधिकार मे लेने के लिये सर्वप्रथम लुहारी के किले को अपने अधिकार मे करना उचित समझा तथा उसने लुहारी पर आकमण कर कोंच पर आकमण किया। इस प्रकार रानी लक्ष्मीबाई की अंग्रेजो से द्वितीय मुठभेड़ कोंच मे हुयी जहा अंग्रेजी सेना के साथ पेशबाई सेना तथा महारानी लक्ष्मीबाई का भयंकर युद्ध हुआ जहाँ उन्हे पराजित होना पड़ा लेकिन रानी लक्ष्मीबाईतथा तात्या तोपे अपने कौशल और बुद्धि चातुर्य से अपनी सेना को रोज के चंगुल से बचा कर भाग निकले।

अंग्रेजो की तृतीय मुठभेड़ कालपी के युद्ध मे हुयी। जब युद्ध करते करते सैनिक हतोत्साहित हो रहे थे तब रानी लक्ष्मीबाई ने घोड़े की लगाम मुहं मे दबाकर दोनो हाथो मे तलवार लेकर अंग्रेजी सेना पर वज्रपात किया। उन्होने इतने धैर्य और साहस के साथ युद्ध किया कि अंग्रेजी सेना उनके युद्ध चातुर्य पर हतप्रभ थी पेशवाई सेना भी उनका सहयोग पूर्ण उत्साह से कर रही थी। विग्रेडियर स्टुअर्ट हतोत्साहित हो रहा था। किंतु अचानक रोज के द्वारा किये गये आकमण से रानी की सेना तितरबितर हो गयी और उन्हें हार कर सामना करना पड़ा।

झासीश्वरी लक्ष्मीबाई की अंग्रेजो से चतुर्थ और आखिरी मुठभेड़ ग्वालियर के युद्ध मे हुयी। ग्वालियर को जीतने के पश्चात् पेशवाई सेना पूर्ण रूपेण हर्षोल्लास मे डूब चुकी थी तब विग्रेडियर स्मिथ ने उन पर आकमण किया। 17जून को घमासान युद्ध हुआ। दोनो परस्पर मिटने को तत्पर थी। अंग्रेज बड़ी ही वीरता के साथ युद्ध कर रहे थे बहुत से अपने प्राणो की परवाह किये बिना आहुति दे रहे थे उस दिन रानी से विग्रेडियर स्मिथ को मात खानी पड़ी।

18जून को अंग्रेजों के साथ रानी तथा उनकी सेना ने घंटो युद्ध किया। रानी की सेना युद्ध करते–करते कम होती जा रही थी किन्तु रानी का अदम्य उत्साह तथा पराकम अंग्रेजो को उनका आभास नही दिला रही था। रानी के नेत्रो मे स्वराज्य का प्रकाश फैला हुआ था उन्होने अपने जीवन की रंचमात्र अभिलाषा न की अतः वह दोनो हाथो मे तलवार लिये घोड़े की लगाम मुँह मे दबाये अंग्रेजो पर हमला करती जा रही तभी एक तलवार उनके वक्ष के नीचे लगी फिर भी वह अंग्रेजो में मारकाट

मचा रही थी। एक अंग्रेज की गोली उनको छलनी कर गयी। उनके कुछ साथी उन्हे वहा से लेकर बाबा गंड़गादास की कुटी पर पहुँचे तथा वहाँ वीरता की प्रतिमूर्ति महारानी लक्ष्मीबाई का अंतिम संस्कार किया।

इस प्रकार महारानी लक्ष्मीबाई की अनेक स्थलो पर अंग्रेजो से मुठभेड़ हुयी जहॉ उन्होने अपने युद्ध कौशल से अंग्रेजो को परास्त भी किया तथा वीरता का परिचय देते हुये 18जून 1858 को वीरगति को प्राप्त हुयी।

युद्ध के घावो से घायल और मार्ग के कठिन श्रम से थकी वह गिरपड़ी और 22।23की अल्प आयु मे इस महान वीरांगना की जीवन लीला समाप्त हो गयी।)

समीक्षा–

झासीश्वरीचरितम् में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं के तथा झाँसी राज्य का स्वरूप रानी लक्ष्मीबाई का राज्यरोहण उनका प्रतिशोध गतिशीलता एवं अंग्रेजो के साथ हुयी मुठभेड़ एवं उनकी वीरगति आदि के आद्योपान्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि महाकवि पंत ने इसमें जिन घटनाओं का वर्णन किया है वे अनेक ऐतिहासिक ग्रंथो से मेल खाती है। झाँसीश्वरीचरितम् मे घटनाओं का सूक्ष्म तथा क्रमबद्ध वर्णन किया गया है। मुख्य घटनाओं की तिथियॉ भी सूचित की गयी है। हां कहीं कहीं कवि ने अपने चरित्र नायक का अतिरंजक चित्रण अवश्य किया है किंतु इससे इन घटनाओं पर किसी भी प्रकार की कोई आंच नही आ पायी है। घटनाओं का यथाकम विवरण होने तथा विभिन्न क्रांतियो का सजीव वर्णन है।

इन प्रमुख घटनाओं के साथ ही कवि ने रानी के राज्यारोहण तथा राज्य के स्वरूप का सजीव चित्रण करते हुये उनके अंदर धधकती प्रतिशोध की ज्वाला को अति वीर वाक्यों के साथ उभारा है। वह अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर अपना प्रतिशोध अंग्रेजो के समूल नष्ट की प्रतिज्ञा के माध्यम से व्यक्त करती है।

इस क्रांतिके बीज को अंतिम रूप देने मे रानी को अंग्रेजो से अनेक स्थलों पर मुठभेड़ करनी पड़ी तथा इन मुठभुड़ो मे उन्होंने जिस वीरता साहस कौशल एवं देशभक्ति का परिचय दिया उन सबका वर्णन महाकवि डा0 सुबोधचंद्र पंत ने अत्यधिक सजीव तथा कमबद्धकिया है। इन मुठभेड़ो मे अंग्रेजो से जब ग्वालियर युद्ध में रानी का संग्राम होता है तथा मुठभेड़ होती है तो इस समय युद्ध के अति भयावह चित्र कवि द्वारा खीचें गये है तथा रानी की मृत्यु का कवि ने अति संजीव एवं मार्मिक चित्रण किया है इन समस्त विवरणों के साथ कवि किसी तरह का अतिरिक्त या अनुपयुक्त चमत्कार न दिखलाते हुये प्रसंगानुसार एवं वर्णनानुसार अपनी काव्य कला का चातुर्य दिखलाते हुये अपने महाकवि रूप को सबके समक्ष प्रस्तुत करने मे पूर्ण सफल हुआ है।

घटनाओं की तिथियां तथा स्थलों की पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, पारसनीस कृत झांसी की रानी, बुन्देलखण्ड का इतिहास, गदर का इतिहास, स्वातान्त्रय समर आदि ऐतिहासिक ग्रंथों से होती है।
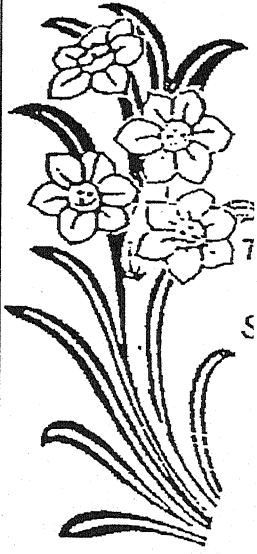
सप्तम अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् का सैन्य विज्ञान की दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन - स्वयं शत्रुपक्ष के बलाबल का परीक्षण सैन्य व्यूह रचना एवं सैन्य संचालन संग्राम में प्रयुक्त विधि शस्त्र सैन्य उपकरण सैन्य शिविर आदि की समीक्षा।

स्वयं शत्रु पक्ष के बलाबल का परीक्षण –

महारानी लक्ष्मी बाई अंग्रेजों की धूर्तता एवं कूटनीति से पूर्ण रूपेण परिचित हो चुकी थीं। रानी की सेना तथा वीरांगना लक्ष्मीबाई के शौर्य पर सम्पूर्ण नगरवासियों को अटूट विश्वास था । रानी लक्ष्मी बाई में एक सफल नेत्री के समस्त गुण विद्यमान थे। उनके मन में केवल झांसी विजय का स्वप्न नहीं था वल्कि अंग्रेजो को पराजित कर स्वराष्ट्र, अपने भारत को बचाने का दृढ़ निश्चय था। वह अंग्रजों की शक्ति का न्यून नहीं समझती थी तथा उनकी प्रत्येक क्रिया, प्रतिक्रिया पर समुचित ध्यान देती थी।

अंग्रजो द्वारा ऐसे अनेक साधनों को उपयोग में लिया जाता था जिससे वह अपने शत्रुपक्ष की समस्त गतिविधियों से अवगत रहते थे तथा रानी के कार्यो उनकी सेना, सैन्य व्यूह रचना, अनेक राजनैतिक गतिविधियों को जानने का प्रयास करते थे। किन्तु वीरांगना रानी भी आलौकिक वुद्धि कौशल की साम्राज्ञी थी वह स्वयं अति चातुर्य के साथ शत्रुपक्ष की समस्त क्रियायें पर ध्यान देते हुये उनकी शक्ति का अवलोकन करती थी। इस कार्य हेतु इन्हें अपनी वृद्धि चातुर्य का पूर्ण परिचय देना पड़ता था। तात्या टोपे आदि के द्वारा वह समस्त राजनैतिक वातावरण को जानती रहती थी कहां कब कैसी राजनैतिक स्थिति है यह सब अपने वीर सैनिकों अर्थात् तात्या टोपे आदि जैसे वीर योद्धाओं के द्वारा ज्ञात करती थी।

रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी वुद्धि चातुर्य का परिचय देते हुये स्त्री गुप्तचर तैयार किये ताकि उन्हें अंग्रेजी छावनियों में होने वाली समस्त राजनैतिक परिस्थितियों का पता चल सकें। वर्मा कृत 'झांसी की रानी ' से ज्ञात होता है कि जूही अंग्रजी छावनियों में जा–जाकर तथा अपने नृत्य आदि से सिपाहियों के हृदयगत भावों को ज्ञात करती थीं तथा अंग्रेजों के प्रति उन सिपाहियों के मन में क्या विचार हैं यह जान भारतीय सिपाहियों को अंग्रेजों के प्रति भड़कती थीं इस तरह रानी अपने शत्रु पक्ष के बलाबल का परीक्षण कर अपनी शक्ति जुटाने में लगी रहतीं थी। अंग्रजों के बलाबल का परीक्षण रानी द्वारा बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि एवं दूरदर्शिता के साथ किया जाता था।

झांसीश्वरी चरितम् की ही भांति रानी के शत्रु के बल और उनकी गतिविधियों का निरीक्षण किस कुशलता से करती थीं। इसका स्वातान्त्रय गाथा आदि से भी प्राप्त होती है –

द्वाराणि दुर्गस्य सुसंवृतानि पुरे च वाह्यचागमनं निषिद्धम् ।

सम्राज्य कार्याणि भटेषु स्वेषु स्वयं निरीक्षादिषु तत्वराऽभूत् ।।36स्वा0गा0ओमप्रकाश पाण्डेय

सैनिक श्रंखला, विचार्य कार्य और शान्ति स्थापना सब में उनकी योग्यता सिद्ध होती है। अंग्रेजों के शिविरों में कब क्या हो रहा है, उनके मोर्चो उनके हमलों आदि को अपने जासूसो द्वारा इतनी सावधानीं से करतीं थी कि अंग्रजों को कानों कान खबर न होती थी। वह दूरबीन द्वारा रणक्षेत्रों का निरीक्षण करती तथा युद्ध के समय अंग्रजों के दुर्बल हिस्सों पर विशेषतः ध्यान देती जिससे वह उन्हीं भागों पर हमला कर उन पर सिंहनी की तरह टूट पड़ती । युद्ध क्षेत्रों को उनके द्वारा अति सूक्ष्मता के साथ देखा जाता था। इस क्रिया से उन्हें मोर्चे बनाने में बहुत सहयोग मिलता था। इनकी रणनीति में इस क्रिया का प्रमुख स्थान था। रानी शक्ति सम्पन्न थी फिर उनका जीवन नैतिकता एवं धार्मिकता से ओतप्रोत था। वह उदारता की साक्षात् मूर्ति और मानवता की सबसे बड़ी पुजारिन थीं। राज्ञी और विजेता के रूप में वह असाधारण प्रतीत होती है।

रानी लक्ष्मी बाई में परिश्रम शीलता, महत्वकांक्षा क्रियात्मक प्रतिमा और दूरदर्शिता के गुण कूट-कूट कर भरे हैं, तभी तो विपत्तियों से न धबराते हुये इन परिस्थितियों में भी वह अपनी बुद्धि को नियंगित कर शत्रुओं की गतिविधियों पर ध्यान देतीं रहती थी जो कि साधारण मनुष्य के लिये दुस्कर ही है। रानी लक्ष्मीबाई की इस विशेषता के पीछे अनेक शक्तियां काम कर रहीं थी ।

रानी की विचार शैली समय से आगे थी। उन्होने समझ लिया था कि अंग्रेजों से कूटनीति से ही कार्य लिया जा सकता है अतः वह शान्त प्रकृति की बन अंग्रेजों की शक्ति की खोजबीन करतीं रहती थी ।

रानी लक्ष्मी बाई झांसी के आस पास के समस्त क्षेत्रों का पूर्ण ज्ञान रखतीं थीं जिससे उन्हें युद्ध में सहायता प्राप्त होती । इस तरह वह युद्ध तथा नीति का समन्वय बनाये रखती थीं।

सैन्य व्यूह रचना एवं सैन्य संचालन -

इसी परिपेक्ष्य में रानी लक्ष्मीबाई ने अपनी सेना का संगठन किया। महारानी लक्ष्मीबाई अंग्रजों की ही भांति सैन्य व्यूह रचना में भी निपुण थीं।[1] वह बचपन से ही सिवाजी[2] आदि की शोर्य गाथा को सुनती थी तथा उनका स्मरण करतीं रहती थीं। शिवाजी की युद्ध नीति में क्षणभार युद्ध का

1. यतश्च भयमाशङ्केत्ततो विस्तार भयेद्बलम्।

पद्मेन चैव व्यूहेन निविशेत सदास्वयम्।। 188 अध्याय 7 मनुस्मृति

2. झांसीश्वरीचरितम् 12/10

प्रमुख स्थान था उसी भांति रानी लक्ष्मी बाई भी छापा मार युद्ध करने में अति कुशल थी। डाकू सागर सिंह से युद्ध के समय उन्होंने अचानक ही उस पर आक्रमण किया जिससे वह हाबड़ा गया था तथा पराजय को प्राप्त हुआ। रानी लक्ष्मी बाई शिवाजी आदि के चरित्र का स्मरण कर उन्हें विस्मृत न करते हुये उनकी प्रमुख बातों युद्ध आदि का अनुकरण करतीं थी।

महारानी लक्ष्मीबाई एक योग्य सौनिक, सफल सेनापति, और कुशल शासिका थीं। उन्होने अपनी प्रशासकीय निपुणता का परिचय आरंभ से ही दिया था। जब उनका बचपन तथा तभी उनकी राजनैतिक एवं शासनगत पटुता प्रस्फुटित होती थी। विवाहोपरान्त एवं राजागंगाधर के देहवसान के पश्चात उनकी प्रतिभा और अधिक विकसित हुयी। वे निरंतर अंग्रजों की पराजय के विचारों में लगी रहती थी।

झांसीश्वरीचरितम् के अनुसार झांसी युद्ध के समय रानी लक्ष्मीबाई ने स्वयं झांसी नगर के कोट के समस्त फाटकों का समुचित प्रबन्ध किया वहाँ उन्होंने छोटी एवं बड़ी तोपो का उचित प्रबन्ध किया। वह युद्ध करने से पूर्व तापों गोलों आदि का मसाला तथा गोलन्दाजों को भी यथा स्थान नियुक्त करती थीं। कोंच युद्ध के समय अति कुशलता से युद्ध करते हुये वह अंग्रेजी सेना के व्यूह में फांसकर तात्या टोपे,नाना साहब,राव साहब तथा अपनी सेना को लेकर बड़ी बुद्धिमत्ता से वहाँ से झाँसी की ओर निकल जाती हैं। अपने व्यूह में अँग्रेजो को डालकर कोंच से निकल भागने के आपके इस कौशल का परिचय निम्नलिखित
श्लोक में देखो:-

ग्वाल्यारम्भं चलत नगरं तद् द्राग विमुक्ति-
दीपं दीप्रं ज्वालयितुमलं स्याम तत्रैव वीराः ।
ईशो नश्चेद भवति स पदं तर्ह्यनाद्या अनन्ताः,
प्रसिष्यामः पुनरपि गलाद् दास्ययोक्त्रं सयत्नम् ।। 19/55 झां0 च0

अपिच -

इत्थं प्रदर्श्य बिबुधा निजदूरदृष्टिं सा कालपीं रहित्यवत्यभया प्रतस्थे।
जित्वापि शत्रु निकरेण पराजयः स्वो ध्वसं विलोक्य विकटं स्वयमेव मेने।। 19/56 झां0च0

इस प्रकार कहाँ सेना को ले जाना है किस प्रकार और कहाँ आसानी के साथ युद्ध किया जा सकता

है । अपने अभीष्ट स्थान पर किस तरह शत्रु को विवश कर युद्ध किया जा सकता है आदि बातों का रानी लक्ष्मीबाई विशेष ध्यान रखती थीं। इन प्रमुख बातों हेतु उन्होने जासूसी विभाग को भी प्रमुखता दी थी। उन्होंने जासूसी विभाग में मोतीबाई, जूहीबाई दुर्गा आदि के नाम प्रमुख है जो अंग्रजी छावनियों अर्थात शिविरों में जाकर वहां के वातावरण, राजनैतिक परिस्थिति आदि का ज्ञान कर रानी लक्ष्मी बाई को बताती थी। झांसी की रानी (वृन्दावन लाल वर्मा) पुस्तक में भी जासूसी विभाग में आये व्यक्तियों में इनके नाम प्रमुख हैं। साथ ही नारायण शास्त्री तथा मेहतरानी जिसका नाम छोटी बतलाया गया है इनके नाम भी जासूसी विभाग में आये है। अंग्रेजी सेना में अच्छी मार्के की दूरबीनें थी किन्तु रानी की सेना में इनकी कमी थी। कोंच युद्ध के समय रानी का अग्रभाग सुद्रढ़ एवं सुसंगठित था किन्तु इनका पृष्ठ भाग इतना व्यवस्थित नहीं था जितना कि होना चाहिये था जिससे इन्हें पराजय का सामना करना पड़ा।

इस समय शत्रुपक्ष के सेनापति सरह्यू रोज का सैन्य व्यूह दर्शनीय था। उसने अपनी सेना के तीन भाग कर कोंच के दायें बायें भेजकर एक भाग पर आक्रमण कर विजय प्राप्त की। कोंच के इस युद्ध के समय रानी के सूचनानुसार सैन्य व्यूह रचना नहीं की गयी थी अतः उसका दुष्परिणाम उन्हें उठाना पड़ा। यह सभी विशाल सैनिक संगठन के अन्तर्गत अनुशासित नहीं थे। संगठन एक हृदय से संचालित नहीं था अतः योजनाओं पर पूर्ण अमल न हो सका। फिर भी रानी ने अपने तथा अपने सैनिकों के उत्साह में कमी नहीं आने दी। रानी सैनिकों की आवश्कता संबंधी सभी वस्तुओं की व्यवस्था करती थी। बारूद वस्त्र, कवच आदि एकत्र करती थी।

सर ह्यूरोज के युद्ध कुशल होने के पश्चात भी रानी लक्ष्मीबाई ने ग्वालियर युद्ध के समय योजनायें अपनी वृद्धि के साथ बनायी तथा ग्वालियर के पूर्व की ओर की रक्षा का भार स्वयं अपने हाथ में लिया। उन्होंने तोपखाने, पीछे पैदल और रिसाले का यत्र–तत्र क्रमानुसार मोर्चा रक्खा। सबस आगे तथा मध्य–मध्य में स्वयं की लाल कुर्ती सेना को रख, तथा उत्तर दिशा का भार तात्या टोपे को सौंप दिया। पश्चिम का भार रावसाहब तथा शहर के भीतर बाहर की रक्षा का प्रबंध बाँदा के नबाब को संभालने के लिये दिया गया।

रानी ने अपनी सैन्य व्यूह रचना में अपनी कुशलता का उत्तम परिचय दिया। सेना के साथ सम्पर्क रखने का कार्य भी कुछ लोगों को वीरांगना लक्ष्मीबाई सौंप दिया करती थी जिससे आस पास की समस्त बातों की जानकारियां उन्हें प्राप्त होती रहती थीं। वह विल्कुल निडर होकर युद्ध किया करती

थी। शिन्दे से हुये युद्ध के समय वह अपने सैनिकों को लेकर गोलों और तोपों के बीच घुस पड़ी तथा महाराज शिन्दे की सेना की तोपों को बंद कर दिया ।

रणकुशलता, व्यूह रचना और आत्म रक्षा की योजना रानी ने देखी थी। तथा महाराज शिवाजी की व्यूह रचना की बातें सुनीं थीं वह पीछे हटने आगे बढ़ने और भागती सेना पर हमला करने के कौशल से पूर्ण परिचित थीं। झांसी युद्ध के समय उन्होंने झांसी के आस पास का समस्त प्रदेश अपनी आज्ञा से उजड़वा दिया था ताकि शत्रुओं को किसी प्रकार की रसद प्राप्त न हो सके।

रानी अपने राज्य की सर्वोच्च संचालक थी जिस प्रकार उन्होनें अपने स्नेह भाव एवं बौद्धिक कुशलता से अपना प्रभाव अपने राज्य पर बनाये रखा था उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वह एक चतुर एवं कुशल शासिका थी। उनकी यह कुशलता मात्र सामान्य परिस्थितियों में ही नहीं वरन् विपरीत परिस्थितियों में भी प्रदर्शित होती थी। युद्ध के समय वह अति साहस, धैर्य एवं कुशलता से सैन्य व्यूह रंचना करतीं थी कि शत्रु भी उनकी कुशाग्र बुद्धि पर आश्चर्य चकित हुये बिना नहीं रह सकते थे। सेना का गठन करके उसको किस तरह आगे बढ़ने के लिये प्रेरित किया जाता था इस श्लोक में देखें –

तुमुलमुदभवद् द्राग् धाव धावेति घोरं,

मनसि भयमसीमं शात्रवाणों विवेश ।

मरण दृढ़ मनस्कश्चैकतः पक्ष आसीत्,

प्रलयमुपगतोभूदेकतोसौ विपक्षः ।। झां०च० 19/46

इस तरह विपत्ति के समय वह अपनी सेना को प्रेरित कर सैन्य संगठन में अपनी वुद्धि कुशलता का पूर्ण परिचय प्रस्तुत करतीं थी जिससे उनकी सेना का और अधिक उत्साह बढ़ता था। एक नारी की इस तरह की वीरता को देखकर मनुष्यों का उत्साहित होना स्वाभाविक था। वह अपनी सेना से विभिन्न परिस्थितियों पर चर्चायें करती थी जिससे उन्हें व्यूह रचना में सरलता रहती थी।

रानी लक्ष्मी बाई सागर सिंह से युद्ध के समय खुदावख्श को उस पर आक्रमण करने के लियें भेजती है। खुदावख्श के धायल होने का समाचार पाकर अपनी सेना तथा अपनी सेविकाओं के साथ निकल पड़ती है। सागर सिंह पर आक्रमण करने से पूर्व वह अपनी सेना के दो भाग करती हैं तथा एक का स्वयं नेतृत्व कर चल पड़ती है। उनकी कुशल व्यूह रचना का यह उदाहरण देखें–

श्री मुन्दरा प्रचलिताश्वनुशम्यमाना मोर्ती,

विसृज्य पृतनापति सान्त्वनायै।

क्रोशान् दशावह्नदहो हरिणोह्यमानां,

साह्याय चाप खिसिनीमधिपा सुरम्याम्।। झां0च0 12/56

वीरांगना लक्ष्मीबाई व्यूह रचना, संचालन तथा सैन्य संगठन के कार्य में निपुण थीं किन्तु उनकी सेना में अंग्रेजी सेना का भांति अनुशासन नहीं था फिर भी व्यूह रचना, सैन्य संचालनकी पटुता के कारण ही वह ग्वालियर दुर्ग पर विजय प्राप्त कर सकीं थीं।

अंग्रजों के पास भारतीय सैनिको की अपेक्षा सैनिकों की संख्या तथा हथियार आदि अधिक उत्तम थे। रानी के पास स्थायी एवं कुशल सेना कम थी, लेकिन रानी की युद्ध प्रियता तथा रण कौशल के कारण समस्त सैनिक उनसे स्वतः प्रसन्न रहते थे। उनकी व्यूह रचना में चन्द्र व्यूह, गज व्यूह एवं चक्रव्यूह आदि प्रमुख व्यूह थे।

रानी के साथ-साथ सर ह्यूरोज की सैन्य व्यूह रचना भी अति प्रशंसनीय थी। देखिये किस तरह वह हाथी को व्यूह के आगे लाकर मार्ग को काटता है –

स रोज आयन्मुषितेव पृष्ठतः

क्रमेलकव्यूहयुतो नृपाभटान्।

चकर्त्त मार्ग कृतवांश्च तां गतः,

सरोज वक्त्रां निजधान चैककाम्।। झां0च0 20/84

कानपुर युद्ध के समय 16 जुलाई को पैदल सवार और गोलंदाज करीब 5 हजार सेना के साथ बढ़े। कानपुर से चारमील दक्षिण अहरवा नामक स्थान पर जमे। बायीं ओर गंगा दाहिनी ओर एक गांव और आमों का बाग था वायीं ओर गंगा की करारों में बड़ी-बड़ी तोपे लगायीं दक्षिण की ओर आम के बाग और गांव की ओर भी तोपे लगायीं रास्ते के मिलने की जगह पैदल सेना और पैदलों से पीछे सवार अर्द्धचन्द्राकार व्यूह बनाकर खड़े किये गये । नाना साहब की विशाल सेना और व्यूह देखकर सेनापति हावेल आश्चर्य चकित हुआ।

युद्ध के समय तात्या ने भी बड़ी वुद्धिमानी से अपना किला बनाया था। पहले तोपों को बढ़ाकर उनसे युद्ध किया। पीछे फौंजे किला बनाकर खड़ी थींजो अंग्रेजी सेना आगे बढ़ती थी उसी समय घिर जाती थी। भागती सेना तोपों की मार से विछौना हाने लगी तोपो की मार इतनी प्रबल थी कि सैनिक

आगे न बढ़ सके।

इस प्रकार रानी सैन्य व्यूह रचना में इतनी निपुण थी कि अंग्रेज भी उनकी प्रशंसा किये वगैर न रह सकते थे। वह अपनी वुद्धिमत्ता से अंग्रेजों के छक्के छुड़ाती थीं।

यह सत्य है कि महारानी लक्ष्मीबाई विद्वान थीं और उनके मानसिक गुणों में उनकी समता कोई नहीं कर सकता था। उनकी स्मरण शक्ति, अनुपम बुद्धि कलात्मक रूचि और विद्या प्रेम से लोग चकाचौंध में पड़ जाते थे। इन गुणों के साथ–साथ वह समय पर स्वयं सेना का संचालन करती थीं तथा उनकी सेना सहित वह युद्ध क्षेत्र में वीरता के साथ युद्ध करती थीं।

रानी लक्ष्मीबाई युद्ध संचालन और राज्य की व्यवस्था संभाले रखाती थीं तथा दिन और एक करके शक्ति और संग्रह में जुट गयी थीं। उनके अन्दर बचपन से ही संगठन का गुण पाया जाता था। आप बचपन से ही नाना, और राव तथा अन्य बच्चों को संगठित कर तरह तरह के वीरता के खेल करती थीं और स्वयं उनकी सरदार बन जाया करती थी। उसी गुण के कारण आप झांसी राज्य की शासिका बनीं। उनकी अभूतपूर्व सैनिक प्रतिभा और नियंत्रण का गुण उन्हें योग्य तथा कुशल सेनानायक बना देते थें। युद्ध के संकट काल में वह एक सफल सेनापति की तरह सदा धैर्य से काम लेतीं थी। इसलिये हार कर भी बड़े से बड़े शत्रु के समक्ष आप विजयी हुयीं अंग्रेजो से जमकर कई महीनों युद्ध करना, झांसी से अंग्रेजों से बचकर कुशलता पूर्वक निकल जाना, कोंच से सकुशल निकलना तथा ग्वालियर पर आक्रमण कर विजय प्राप्त करना इन्हीं गुणों के कारण संभव हो सका। आपकी क्रियात्मक बुद्धि कभी आपको धोखा नहीं देती थी। और किस काम को कब और कैसे करना चाहिये इसे वह भलीभांति जानती थीं। स्वतन्त्रता की प्रथम क्रान्ति की पृष्ठ भूमि आपके द्वारा ही तैयार की गयी तथा इस क्रांति का नेतृत्व वीरांगना लक्ष्मीबाई द्वारा ही किया गया। उन्होने लोगो में चेतना की भावना जागृत की। अपने कुछ भक्त सैनिकों को संगठित किया तथा इन सैनिकों की सहायता से सुदृढ़ सेना के निर्माण का कार्य किया। उन्होंने सैनिकों को प्रशिक्षण दिया और सेना का नेतृत्व एवं संचालन स्वयं अपने हाथ लिया और सौनिकों में अत्याधिक जोश, उत्साह एवं चेतना आदि की धारा अजस्र रूप में प्रवाहित की।

महारानी लक्ष्मी बाई में अटूट शक्ति एवं अदम्य उत्साह का सम्मिश्रण था उनमें अपार शौर्य तथा तेज स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता था। महारानी लक्ष्मीबाई ने नारियों की सेना सुसंगठित की, उनमें अलौकिक दैनिक शक्ति का आभास प्रतीत होता था। सेना में बुन्देलखण्डी नारियों ने अपनी वीरता का

अनुपम परिचय दिया हैं। उनमें कुछ नारियाँ तोप चलाने, घुड़सवारी, कुछ तलवार, भाला आदि चलाने में निपुण थी। अंग्रेज सेनापतियों ने भी रानी की इस नारी सेना के धैर्य और उत्साह की अधिक प्रशंसा की है। इन नारियों में सुंदर, मुंदर, काशीबाई, मोतीबाई, झलकारी बाई आदि के नाम प्रमुख है। वीरांगना जूही की तोपों की कुशलता की अंग्रेजो ने भी सराहना की। रानी लक्ष्मीबाई ने इस स्त्री सेना का संगठन कर एक अनुपम तथा अद्भुत कार्य किया था और इस सेना का स्वयं संचालन कर उनमें इतना उत्साह भर दिया था कि वह किसी भी समय युद्ध के लिये तत्पर हो जाती थीं। स्त्री सेना के संगठन का वर्णन कृष्णदत्त शर्मा शास्त्री प्रणीत झांसी राज्ञी शतकम् वत्तीसवें श्लोक में भी वर्णित है।[1] सेना का संगठन कर आपने अपनी सेना को बढ़ाया साथ ही उनके उत्साह को भी सैन्य बल का उदाहरण देखें–

संख्या वभूव च पुरि द्विगुणा भटाना ,

हषम्बुिधौ सततमज्जनशील भाजाम् ।

तत्संख्यया सहितमेव वभौ तदीय,

उत्साह राशिरपि स द्विगुणप्रसारः ।। झां0च0 9/34

थोड़े से समय में सुशिक्षित अंग्रेजी सेना के मुकबिले में लड़ाई की तैयारी करना सहज काम नहीं था पर लक्ष्मीबाई उस कठिन समय में लड़ाई के लिये तैयार हुयी। अब तक उन्होंने राज्य शासन में योग्यता दिखाई थी अब संग्रम की तैयारी में उनकी योग्यता लोगों के समक्ष आयी। उनके पास वुन्देला तथा अफगान सेनायें थी पर शिक्षित सेनाओं की तादाद अधिक न थी। आत्मरक्षा और राष्ट्र निर्माण हेतु वह कपटी शत्रुओं के वध के लिये तैयार हुयीं। उन्होंने लोगों में नवजीवन, नवशक्ति और नवबल प्रदान किया जिससे हिन्दुत्व के जर्जर एंव क्षतिग्रस्त वृक्ष में नई पत्तियां और शाखायें फूट निकलीं, झाँसी राज्य पुनः जाग्रत होकर हुकाँर कर उठा जिससे उसके समक्ष विशाल अंग्रेजी साम्राज्य भी नगण्य हो गया। लक्ष्मीबाई ने एक प्रबल विजयबाहिनी का संगठन किया उन्होंने अपनी सेना को भालों इत्यादि से सुसज्जित किया–

अड़गानि यानि कुसुमास्तरणेपि पूर्व

झांसी नरीसमुदायस्य गतान्यशान्तिम्।

---

1. विपत्प्रतीकारपरायणा वै, सभाव्य घोरा विपदं महोग्राम।

दुर्गस्थनारीजन सैन्यमेकम्, संस्थापयामास मनस्विनी सा।। 32 राज्ञीशतकम् कृष्णदत्त शर्मा शास्त्री

तान्यवे हन्त निहतान्यसहन्त कुन्तैर्दण्डैश्च

सन्ततमहो नितरां व्यथालीम् ।। झां0च0 9/36

रानी झाँसी की एक कुशलह संचालक थी तथा कुशल नेत्री थी। इस बात का परिचय सुबोध चन्द्र पन्त द्वारा दिये गये इस श्लोक में स्पष्ट परिलक्षित होता है –

नेच्छयामो द्लाक्छ्मननगर्ली म्लेच्छमेवं वदन्तः,

सर्वे बाला असि कुशलतां रेजिरे दर्शयन्तः।

राजद्रोहे निरतमनसोतेजयंस्तान्युवानः ,

सम्यगवृद्धा रणसमुचितां निर्मुमः कल्पनालीम् ।। झां0च0 22/7

उन्होने अपनी सेना को किस तरह सुरक्षित किया इसका अवलोकन करें –

अरिः सितः पंचनदाहितानिति प्रवद्य तानेव जयोपकारिणः ।

निन्दव्यधी तेषु जितेषु युद्धयते कथं महाकूटयुतं सुरक्षितः ।। झां0च0 11/22

इतिहास लेखक मालसेन के अनुसार युद्ध के समय रानी की सेना ग्यारह हजार थी। रानी ने सेना तैयार कर सेनापति का पद स्वयं ग्रहण किया। किले की मरम्मत करबाई उस पर तोपें चढ़वाई और नाना साहब को अपनी मदद के लिये पत्र लिखा इन सब बातों से उस वीर नारी के कर्तव्य ज्ञान का पता चलता है कहा जाता है कि झांसी की वीर नारी स्त्रियां भी महारानी की मदद के लिये तैयार हुयी रानी ने शिक्षित अंग्रेजी सेनापति के मुकाबले ऐसी शीध्रता से तैयारी की कि देखकर अंग्रेजी सेना को भी हैरान होना पड़ा । बाद में अंग्रेजी सेनापति ने भी आश्चर्य प्रकट किया।

लक्ष्मीबाई हर जगह खड़ी रहतीं जो जगह युद्ध के समय खाली होती वहां शीध्र अन्य नियुक्त किया जाता उनकी नजर चारों ओर थी जहां कमी देखती उसे पूर्ण करती।

उन्होने अपने राज्य में जिस मंत्रिपरिषद की नियुक्ति की तथा जिन लोगों को विभिन्न पदों पर नियुक्त किया वह इस प्रकार है –

प्रधान मंत्री के पद पर रामचन्द्र देशमुख, वख्शी और तोपे ढालने वाला भाऊ, प्रधान सेनापति दीवान जवाहर सिंह, पैदल सेना के तीन कर्नल दीवान रघुनाथ सिंह, मुहम्मद जमाखाँ तथा खुदावख्श। घुड़सवारी की प्रधान स्वयं रानी लक्ष्मीबाई रहीं क्योकि वह उसमें अति कुशल थी। कर्नल सुन्दर, मुन्दर, काशी गुलाम गैस खाँ को तोप खाने का प्रधान बनाया गया। नायब दीवान दुल्हाजू नाना भोपट कर

न्यायाधीश कमठाने के प्रधान रानी के पिता मोरोपन्त । जासूसी विभाग की प्रमुख मोती बाई थीं नायब जूही तथा रानी लक्ष्मीबाई ने पुलिस, दान धर्म विभाग, माल विभाग इत्यादि के भी कर्मचारी नियुक्त किये थे। तहसीलो के तहसीलदार बनाये गये। मऊ का परगना काशीनाथ तथा आनन्दराय को सौंपा गया। द्रढ़ता से अपने-2 कार्य करने का आदेश रानी द्वारा दिया गया था। सेना में भर्तियों के साथ पुराने सिपाहियों को भी एकत्र किया गया । योग्य व्यक्तियों की परख में वे वेजोड़ थी सेना के लिये योग्य तथा विश्वास पात्र सैनिको, सेना पतियों की नियुक्ति की।

रानी लक्ष्मी बाई ने सेना और सैनिक गुणों के आधार पर ही सैन्य संचालन किया और बड़े-बड़े योद्धाओं से लोहा किया। उन्होने अपनी सेना के संगठन पर विशेष ध्यान दिया और उसे शक्तिशाली बनाने का भरपूर प्रयास किया। उनकी सेना में स्वयं सेवक सेना, लालकुर्ती सेना, पैदल सेना, अश्वसेना आदि प्रमुख था। कहीं-2 ऊँट सेना का भी उल्लेख हुआ है। छोटी सी रियायत होने के कारण हाथी सेना आदि अधिक मात्रा में नहीं थे।

उस समय राजा गंगाधर राव के राज्य में पांच हजार सेना, दो सहस्र गोल पुलिस, पांच सौ धौड़ो का रिसाला, सौ खास पायगा तथा चार तोप खाने थे। धोड़ा, पैदल, तोपखाना ये तीन विभाग सेना के प्रमुख थे।

राजा गंगाधरराव के समय सेना लगभग आठ से दस हजार के करीब थी

1. स्थायी सेना -

सेना के महत्व को बढ़ाने के लिये रानी ने स्थायी सेना रखने की व्यवस्था की जिसमें उनकी स्त्री सेना प्रमुख थी जो सदैव स्थायी रूप से उनके साथ रहा करतीं थी। उनके सैनिको में पुनीत राष्ट्रीयता के भाव भरे थे और इसका पूर्ण श्रेय रानी लक्ष्मीबाई को ही था। सैनिकों की भर्ती में जाति पाति का भेदभाव नहीं था। सभी जाति के लोग सेना में सामिल थे इस तरह साम्प्रदायिकता का भाव था। स्थायी सेना में कुछ अश्वारोही, पैदलसेना, छोटी रियासत होने के, हांथी सेना कम थी ऊँट सेना का नाम एक जगह आया है जहां सरजू रोज कोंच युद्ध के समय रानी के पृष्ठ भाग पर अपनी ऊँट सेना से ही आक्रमण करता है।

असीतसमाप्तिमनु सा सकलापि लीला दैवेन किंतु विहितं विपरीतमेव।

उष्ट्रैः सिताड़गवलितै रण उष्ट्रकायैर्धूतरलम्भि विधुरे समये सुरक्षा।झां0च0 19/52

आपके पास अच्छा तोप खाना था जो राजा गंगाधर राव के समय से ही उनके पास था।

2. घुड़सवार सेना –

रानी की सेना का सर्वाधिक शक्तिशाली और प्रमुख अंग अश्वारोही वर्ग का था। रानी स्वयं एक कुशल धुड़सवार थीं। राज्य की बनावट और लुकछिप कर युद्ध करने की प्रणाली में इस प्रकार की सेना का अधिक महत्व था यह सेना लाभदायक भी सिद्ध हुयी। इस धुड़सवार सेना का सेनापति होता था।

धुड़सवार सेना का उल्लेख इस श्लोक में मिलता है–

पुरतउपगता सा सैनिकानां वहन्ती स्फुरितकरणमङ्गं स्पन्दमानं च वक्षः।

अरूणवसनदीप्राः संड्गता अश्ववाराः सुखमपरिमितं तच्चक्षुषोस्तेनिरे ये।झां0च0 19/18

धुड़सवारो की प्रधान स्वयं रानी थी। कर्नल सुन्दर मुन्दर और काशीबाई।

झांसी में पराजय के पश्चात ग्वालियर युद्ध के समय उनके अन्तिम काल में उनके साथ पन्द्रह धुड़सवार ही थे फिर भी वह निडर, मुस्कराती हुयी बिना रूक सकने वाली गति से मण्डलाकार होती वह निकल गयी –

नृपानुगाः पञ्चदशैव सादिनस्तदापि शिष्टाः स्मितमण्डिताननः ।

आवर्यतां चक्रगतस्य किं क्वचिद् गताभिमनयोरपि तादृशीं गतिः।। झां0च0 20/97

3. पैदल सेना –

अंग्रेजों आदि की तरह ही सेना में दल आदि होते थे। सेनाओं के गठन में पदाधिकारी होते थे। पैदल सेना का उल्लेख झांसीश्वरीचरितम् के इस श्लोक से मिलता है।

अवाप राज्ञी निकषैव कोटकीसरायमेषा लधुसैन्यनेतृताम ।

न हीश्वरी विप्रललाप किञ्चन विचिन्त्यन्ती प्रतनानुशासनम्।। झां0च0 20/54

इस काल में सेनापति को वलेशः कहा जाता था। प्रत्येक सेना का दलो में विभाजन था–

दलपुट्कमवेक्ष्यातापिना च्छिद्यमानं वहति

शिशुरनल्पां भीतिमत्तां यथैव ।

भटशतमवलोक्योत्कृत्तमुण्डं कृपाण्यां

भयमभजत तद्वद घोरघोर गुरुण्डः ।झां0च0 19/38

लक्ष्मीबाई की सेना को स्वराज सेना तथा उन्हें स्वराज बाहिनीं नाम से सम्बोधित किया जाता था। स्वराज सेना[1] तथा स्वराज वाहिनी[2] का उल्लेख श्रवण कुमार त्रिपाठीकृत क्रान्ति पथ से प्राप्त होता है। रानी लक्ष्मीबाई के पास एक अच्छा तोपखाना था, खुदावख्श, गुलाम गौस खां आदि आपके मुख्य तोपची थे। पैदल सेना का उल्लेख इस श्लोक से भी मिलता है।

धाव धाव सपदि प्रकुलिन हे पार्ष्णिनेरयतिं वत्स जनोयम्।

आपतेद् यदि रिपुस्तदन्तरे दालयाड्घ्रिभिरनल्पकोपनः ।। झां0च0 16/62

अंग्रेजो की सेना बड़ी थी उसमें संगठन भी उत्तम कोटि का था। अंग्रजों की अपेक्षा रानी की सेना का नियन्त्रण और संचालन बहुत अधिक तो नहीं किन्तु कुशल था। अंग्रजों की सेना में अनेक दल थे उनके संचालन का भार-भी भिन्न-भिन्न सेना पतियों पर था। इसके अतिरिक्त रानी के पास तोपें अच्छी थीं उनके आगे टिक पाना असम्भव था। पैदल सेना के तीन कर्नल थे दीवान रधुनाथ सिंह, मुहम्मद जमाखां, खुदाबख्श इस तरह रानी की सेना का प्रमुख तथा मजबूत हिस्सा अश्वसेना तथा पैदल सेना ही था।

4. तोपखाना -

पैदल तथा अश्वसेना की ही भांति तोपखाना सेना का प्रमुख विभाग था। रानी को युद्ध में तोपखाने से ही अति सहयोग प्राप्त हुआ। तोपखाने का प्रधान गुलाम गौस खां था। जिसके रहते रानी को अपनी विजय पर कोई संदेह नहीं था। तोपची में खुदाबख्श भी प्रमुख था। इन दोनो का उल्लेख इस श्लोक में देखें -

तूष्णी शतघ्नीं कुरू वारयात्मनाः श्रांन्तिं खुदावख्श जितंत्वयात्वितः।

सन्देहमन्दो विजयः कदापि नो गोलोस्त्यमोघो हि गुलाम गौस ते।झां0च0 14/32

अंग्रेजों के पास भी बहुत अच्छी तोपे थी। रानी के पास भी उत्तम तोपे थी जिनके आगे टिकना असंभव था। 23 मार्च सन 1858 को जब झांसी का ऐतिहासिक युद्ध आरम्भ हुआ तब कुशल तोपची गुलाम गौस खां ने रानी के आदेशानुसार धनगर्जन करती तोपो से गोले वरसाकर अंग्रेजी सेना के छक्के छुड़ा

---

1. स्वराज सेना दिनभर से लड़ रही थी............ पृ0 179 क्रान्तिपथ - श्रवण कुमार त्रिपाठी

2. 22 मई के प्रातः सरह्यूरोज सेना लेकर स्वराज वाहिनी पर टूट पड़ा। पृ0 182क्रान्तिपथ श्रवण कुमार त्रिपाठी

दिये थे। झांसी युद्ध के समय तोपे गोले बरसा रही तथा तोपची पूर्ण उत्साह सहित अपने मोर्चो को संभाले हुये अपना तथा अपनी तोपों का प्रभाव अंग्रेजो पर छोड़ रहे थे। लाल गोले बरसाती हुयी तोपो का वर्णन देखे कितना सजीव किया गया है।

रक्तः स गोलो ददृशे कदाचन कालः कदाचिच्च परं न्यभाल्यतः

पीतात्मतां भीष्मतरां क्वचिद्दधौ मायामयत्वं विरूदं सितं तथा।। झां0च0 14/43

तोपो में प्रमुख नाम– शतंघ्नी, धनगरज, कड़क विजली, आदि नाम आये है जिनका उल्लेख आगे किया जायेगा।

5. गजसेना –

झांसी एक छोटी रियासत होने के कारण इसमें गज सेना कम ही थी। राजा गंगाधर राव के समय लगभग दस हांथी ही उनके राज्य में थे ऐसा उल्लेख झासी की रानी में हुआ है झासीश्वरी चरितम में भी गजसेना का कहीं प्रमुख रूप से वर्णन नहीं हुआ है।राजा गंगाधर राव ने कुछ हाथी इकट्ठे किये थे उनमें सिद्धवक्स नाम का उनका प्रिय हांथी था जिसका नामोल्लेख इस श्लोक में मिलता है।

स सिद्धवक्साख्योयं निःसहायोगजेश्वरः।

रोदितिवाचि वक्त्रं हा यौष्माकीणं विलोकयन।। झां0च0 10/61

हांथी सेना का उल्लेख 20 सर्ग के 53 श्लोक में मिलता है

6. ऊँट तोपखाना –

झांसीश्वरी चरितम् में ऊँट तोपखाने का वर्णन एक ही जगह मिलता है। कोंच युद्ध के समय सरहूरोज अपने ऊँट तोपखाने से हमला किया जिससे पेशवाई सेना तितर वितर हो गयी तथा रानी को पराजय का मुंह देखना पड़ा –

आसीतसमाप्ति मनु सा सकलापि लीला दैवेन किं तुं विहितं विपरीतमेव।

उन्द्रैः सितांगवलितै रण उष्ट्रकायैर्धूतै रलम्भि विधुरे समये सुरक्षा।। झां0च0 19/52

झांसी में जो उपरोक्त सेना रखी गयी थी। उसमें धुड़सवार और पैदल सिपाही ही थे यानि केवेलरी और इन्फोन्ट्री[1] पर यह सेना आधारित थी।

---

1. झांसी नया गजेटियर पृ0 50–51

झांसी की रानी में भी इनके अतिरिक्त लालकुर्ती सेना, हुजर सेना, आदि का भी नामोंल्लेख किया गया है झांसीश्वरी चरितम् में प्रमुख रूप से अश्वसेना तथा पैदल सेना का ही वर्णन मिलता है जिससे प्रतीत होता है कि ये अन्य सेनाओं की अपेक्षा ये सेनायें महत्वपूर्ण थी। रानी भी एक कुशल धुड़सवार थीं। अश्वसेना का विशेष महत्व होना संभव ही है।

संग्राम में प्रयुक्त विधि अस्त्र शस्त्र सैन्य उपकरण –

युद्ध में जितना महत्व और योगदान सेना और सेनापतियों का होता है उससे कहीं अधिक महत्व युद्ध में प्रयुक्त की गयी विधि अस्त्र शस्त्र एवं सैन्य उपकरणों का होता था। सन् 1857 में हुये ऐतिहासिक युद्ध के समय जिन सैन्य उपकरणों का प्रयोग किया गया, उनका उल्लेख डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने बड़ी ही कुशलता के साथ किया है इन उपकरणों में प्रमुख रूप से जिनके नामोल्लेख किये गये है उनमें छुरा, तोपें छोटी एवं बड़ी, गोले, कटार, हांथी, घोड़ा, बन्दूकें, भाले, वर्छी, वल्लम, तलवार आदि है। सौनिकों की सुरक्षा हेतु इन उपकरणों का उनके पास होना अति आवश्यक होता था जिससे सैनिक अपनी सुरक्षा के साथ–साथ शत्रु पक्ष पर वार कर उन्हें पराजित कर सकता था। वीरांगना लक्ष्मी बाई तोपों को ढालने, वर्छी तलवार आदि अस्त्रों को ठीक रखने आदि का प्रवंध स्वयं करती थी। तथा उन्होनें अस्त्रों की देखभाल हेतु प्रमुख विभाग बनाये थे जो इन्हें बनबाता तथा उनकी सुरक्षा करता था तथा आवश्यकता पड़ने पर सैनिकों को उपलब्ध कराया जा सकता था।

रानी स्वयं बचपन से ही अस्त्र शस्त्रों में पारंगत थीं। उन्हें भाला चलाना, तलवार चलाना, कुश्ती करना, अश्वारोहण आदि बहुत भाता था। झांसीश्वरी चरितम् में रानी की वीरता के वर्णन के समय सर्वप्रथम जिन–अस्त्रों का नाम मिला है वह है–

शरासनं चैव शरं भुशुण्डी सदा शतध्नीं गुलिकायुधं य।

जानन्त्यजानन्त्यथवा प्रवीरा चर्चातिथीकर्तुमभूद्महोत्का।। झां0च0 5/20

प्रस्तुत श्लोक में शरासन, शतघ्नी, भुशुण्डी आदि का वर्णन किया गया है। झांसीश्वरी चरितम् में ऐसे अनेकों श्लोक है जिनमें शतघ्नी तोप, भुशुण्डी बन्दूक आदि का वर्णन मिलता है जिससे प्रतीत होता है कि यह अस्त्र उस समय प्रमुख अस्त्र रहे होगें इस श्लोक में भी शतघ्नी आदि का वर्णन देखे–

लक्षत्रयं चण्डरणः शतध्नी स विशंति दण्डित माददानः।

चचाल तस्मात्पथि कालपीं स्वे पराप्नुवन् स्नेहमनुस्मरन् मे।। झां0च013/22

अपिच–

पश्यारि सेना मनु हन्त लग्नश्चकार खण्डप्रलयस्य।

विमुञ्चत् दाक् सुभटाः शतध्न्याः सर्वङ्कषा गोलततीं सवेगम्।। झां0च0 13/27

भुशुण्डी का वर्णन निम्नलिखित श्लोक में देखें –

नवां भुशुण्डीमनयस्तदा में कथं लभेते स्म दृशी विकासम् ।

विलोक्य ते चाग्रज कस्य हेतोर्विमुञ्चति स्मामितश्रुवारि ।। झां0च0 13/30

शतध्नी तोप किस तरह शत्रुओं के रक्त का पान करतीं हुयी अंग्रजों को भयाक्रान्त कर रही है इस श्लोक में देखें –

हा हन्त तात्याः प्रबलाः शतध्न्यः कालं रिपौ रक्तमपातयन् याः।

व्यावर्त्तमाना निजमेव सैन्य ता आपदो हाव किरन्त्वभीक्षणम्।। झां0च0 13/68

शतध्नी तोप, भुशुण्डी का सुन्दर चित्रण चतुर्दश वसर्ग के चौदहवें श्लोक में देखने को मिलता है। इस वर्णन में ऐसा प्रतीत होता है जैसे कवि युद्ध के समय स्वयं उपस्थित रहा हो तभी तो युद्ध का सजीव चित्रण कर सका। इस श्लोक का अवलोकन करें– अस्त्र शस्त्रों का कितना सुन्दर बिम्ब ग्राही चित्रण किया है।

गोलः शतध्न्यः कृतधांव धांव वाग्रे धाव धावेति जगाद सन्ततम।

ऊचे भुशुण्डेर्गुलिका गुडुं गुडुं शब्दैरये गुण्डय गुण्डय द्रुतम् ।। झा0च0 14/14

श्री बोनस (अंग्रेज सेनापति) का भुशुण्डी किस तरह स्वागत करती है। देखियें–

श्री बोनस स्वागतमस्ति ते महन् फाक्साधिकोत्साह समीपमम्यताम्।

इत्थं वदन्त्यो गुलिकानध्व्दलात् प्राणान् भुशुण्डयोरिदलस्य जहिरे।। झां0च0 14/46

अपिच –

यावदेव निरियाय भुशुण्डीनालिका विवरतो गुलिकाली।

तावदेव ददती द्विषते सा विस्मयं परमियाय योजनम् ।।झां0च0 16/58

इस तरह अनेक श्लोकों में शतध्नी तोप एवं भुशुण्डी के नामोल्लेख किये गये है अतः ये प्रमुख अस्त्र थे जो युद्ध के समय प्रयुक्त किये जाते थे तथा जिनकी सहायता से युद्ध जीतने एवं शत्रुओं को पराजित करने में अति सहायता मिलती थी। इन अस्त्रों के अतिरिक्त सागर सिंह से हुये रानी लक्ष्मी बाई

से युद्ध के समय 'छुरा' आदि अस्त्रों का भी उल्लेख हुआ है–

सज्जीकरोतु हयमाशुतरं नियन्ता वक्षस्यंरिं दलतु यः क्षुरपातघातैः।

वोभूयतां रणवने प्लवनृत्यलग्नः सोयं वने च सुशिखः प्लवगश्चमन्तः।।झा0च0 12/14

छुरा के साथ–साथ कुछ श्लोकों में कटार का भी उल्लेख हुआ है। इस श्लोक को देखें–

शीघ्रं यथायतनमीश्वरयोषिता सा तं पार्ष्णिनैरयत सैन्धववंशमुख्यम्।

प्राप्मोच्च दस्युदलनेतुरुदान्तमश्वं कौक्षेयकं यमकटाक्षसमं वहन्ती।।झा0च0 12/63

निम्नलिखित श्लोक में गोले वाण, भाले आदि के साथ तोप का वर्णन किया गया है किस तरह तोपों से गोली निकलीं और अनेकों लोग धायल हो गये–

गोलेषु भीषणतरेष्वहसं शतध्न्यश्चिक्रीड़ देवि गुलिकानिवहैर्भुशुण्डया।

निस्त्रिंशकुन्तविशिखात्र् शतशश्च सेहे वक्षस्यनागतभयं सहसा विमुच्य।।झां0च0 12/95

तोपो, कटार, छुरा आदि के साथ–साथ तलवार और भाले का अनेक स्थलों पर वर्णन किया गया है रानी वीर थीं तथा तलवार चलाने में वह कुशल थीं। पैदल सेना या अश्वसेना के लिये यही अस्त्र उपयुक्त थे अतः रानी की सेना तथा स्वयं रानी इन अस्त्रों का पूर्ण कौशल के साथ प्रयोग करतीं थी तथा उनकी सेना और वह इन अस्त्रों को चलाने में पूर्ण दक्ष थीं। वचपन से ही वह इन अस्त्र शस्त्रों को चलाने का अभ्यास करती थी।

झांसी पहुचकर रानी ने अपनी सेना को भालों आदि से सुसज्जित कर लिया था।[1] तलवार और भाले का उल्लेख इस श्लोक में देखें–

खड्गा झणत्कारभरं वितेनिरे कुन्ताः खणत्कारमतीव भीषणम्।

दधुः खणत्कारचयं फलान्यपि दोषो भटानामतितीव्रमस्फुरन्।।झां0च0 21/40

तलवार में निपुण ज्वाला खां का मृत्यु के समय रानी द्वारा स्मरण किया गया है जिससे ज्ञात होता है कि ज्वालाखां तलवार चलाने में कुशल रहा होगा।

वन्दे सदा त्वां निशितो विदूरे ज्वालाप्रसादैतु रणान्नं खड्गः।

वन्दे सदा सिंह तफज्जुलासि स्वातान्त्रयभानुः प्रसूतेद्धमानुः।। झां0च0 14/18

---

1. झां0च0 9/36

झांसी युद्ध के समय दूल्हाजू के विश्वासधात पर सुन्दर का तलवार कौशल देखें–

खडगं पर खण्डितमेव चण्डिका दीप्तं दधत्यैत्फलदित्सुरुद्धरम्।

भीत्या वहन् नर्त्तिततारकां दृशं दूल्हा अनृत्यन्मदमत्तसन्निभः ।। झां0च0 14/54

सागर सिंह से युद्ध के समय मुन्दर का खड़ग कौशल देखें –

दस्युस्तु मुन्दरमुपैतुमलं वभूव व्यावृत्य तावदवधान सुरक्षितात्मा।

खडगं न्यपातयत मुन्दरमुं परं तु स्वेनासिना कृतवती विफलप्रयासम्।।झां0च0 12/64

युद्ध के इस भयानक दृश्य में देखें किस तरह भालों और तलवारों सहित तात्या की सेना समीप आ गयी–

कोलाहलं स्याद् धननाद धोरं शत्रुव्रजेसुव्यसनं भवेद् द्राक्।

पश्याथ तात्याः सुसमीप एव पश्याथ कुन्तान् स्फुरतश्च खड्गान्।। झां0च0 13/28

इस तरह उस समय युद्ध में जिन अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग किया जाता था। उनमें तोप जिन्हें अंग्रेजो ने राजा गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात नष्ट कर दिया था तथा रानी ने उनका पुनः निर्माण करवाया था। रानी ने स्वयं तीर वन्दूक छुरी विछुआ रैकुला इत्यादि में पहले दर्जे की श्रेष्ठता अमीर खां वजीर खां से प्राप्त की थी। बन्दूक जिनकी संख्या अंग्रजी सेना में अधिक थी तलवार, छुरा, कटार भाले आदि प्रमुख थे तथा सैनिक इनके प्रयोग में पूर्ण दक्ष होते थे।इन समस्त अस्त्र शस्त्रों का उल्लेख झांसीश्वरी चरितम् में किया गया है। नाना के शस्त्रागार में पैनी फौलादी तलवारें लंबे निशाने की अधावत् बंदूके तथा छोटे बड़े मुंह की तोपे थी।

सैन्य शिविर –

युद्ध के समय सैन्य शिविरों का अधिक महत्व होता था। युद्ध में संग्राम भूमि से हटकर ही सैन्य पड़ाव डाले जाते थे। ये पड़ाव विभिन्न प्रकार के तम्बुओं से बनाये जाते थे। इन शिविरों में खान–पान संवंधी, सुरक्षा संवंधी एवं अन्य उपयोगी साधन समाहित होते थे।इन शिविरो में युद्ध आदि के समय धायल हुये योद्धाओं को देखभाल उनका उपचार आदि किया जाता था। इन शिविरों को छावनी शिविर आदि नामो से अभिहित किया जाता था।

डाकू सागर सिंह से युद्ध के लिये रानी खुदावख्श को भेजती है खुदावख्श डाकू सागर सिंह पर आक्रमण करता है जब धायल होता है तो लौटकर शिविर में आता है जो कि उसने वरूआसागर में डाला

था जहां उसका उपचार होता है वह अपने घोड़े को छोड़ शिविर में आता है यह उल्लेख झांसीश्वरी चरितम् के इस श्लोक से मिलता है–

वख्शस्य तामतितरामनुभूय पीड़ां स्थातुं

शशाक क्षणमप्यधिपा न मध्ये।

अश्वं स्वतन्त्रमकरोत्पतनाय नाके,

स्वःस्त्रयाभमस्य शिविरे व्रणिनोवतीर्णा।। झां०च० 12/53

इस प्रकार शिविर में घायल खुदावख्श और उसके सिपाहियों का उपचार किया गया अतः सैन्य शिविर में मरहम पट्टी आदि होते थे यह स्पष्ट प्रतीत होता है। खुदावख्श ने शिविर डाला था इसका स्पष्ट उल्लेख मिलता है। शिविर के उल्लेख से सम्बन्धित इस श्लोक को देखें –

सम्भ्रामयामोद्य सुभीष्मवात्याः प्रवर्त्तयामः प्रलयं प्रकाण्डम्।

निपातयामः शिविराभमक्षं धरां समग्रां परिवर्तयामः।। झां०च० 13/35

झांसी युद्ध 23 मार्च को आरंभ हुआ क्योकि 23 मार्च को सरहह्यू रोज ने झांसी पर आक्रमण किया था। सूरह्यू रोज ने भी युद्ध से पूर्व झांसी के पास ही अपना शिविर डाला था। उसके शिविर और शहर तथा किले के बीच कुछ फूटे बंगले, शहर के पास कुछ मंदिर बहुत से इमली के वृक्ष थे। बहुत दूर तक पहाड़ ही पहाड़ चले गये थे। इन पहाड़ो के बीच से कालपीं का रास्ता था। बाई और पहाड़ तथा दतिया राज्य था। उत्तर की ओर उन्नत पहाड़ पर झांसी का प्रसिद्ध किला था। प्रकृति की शक्ति और मनुष्य के शिल्प दोनो ने मिलकर झांसी के किले को सबल बनाया वह ऊँचे पहाड़ पर था चारो ओर मजबूत दीवारें थीं। किले के पश्चिम और दक्षिण को छोड़कर बाकी और दिशाओं में झांसी नगर वसा था। झांसी की परिधि साढ़े चार मील की थी। चारो ओर अठारह से तीस फुट दीवारे थीं। फसीलो में गोलियां चलाने के लिये छेद और तोप रखने के भी स्थान थे।

इसी तरह तात्या टोपे भी झांसी की रक्षा हेतु आये तब वेतवा किनारे अपनी छावनी अर्थात शिविर डाला। उसके सामने धना जंगल था इस जंगल की घास और पेड़ सूख गये थें। जब अंग्रजों से तात्या का युद्ध हुआ और तात्या को अचानक पराजय का सामना करना पड़ा तब तात्या ने इस घास और सूखे पेड़ों में आग लगादी तथा अंग्रेजी सेना रुकी और तात्या टोपे कालपी पहुंच गया। इस तरह ये शिविर उचित जगह देखकर ही बनाये जाते थे जहां उन्हें सभी प्रकार की उपयोगी वस्तु मिल सकें।शिविरों में

ही युद्ध के पश्चात् सैनिक विश्राम आदि भी करते थे।

रानी ने अपना शिविर कालपी में भी बनाया था। झांसी में पराजित होने के पश्चात वह धोड़े पर सवार होकर अपने पुत्र को अपनी पीठ पर बांधकर रात में ही भागी तथा कालपी पहुंची वहां उन्होनं अपना शिविर डाला तथा नाना साहब, तात्या टोपे आदि से मिलकर आगे की गतिविधियों को तैयार किया।

कानपुर युद्ध के समय कम्पवैल ने अपना शिविर गंगा की नहर के दूसरे किनारे पर डाला था। रानी लक्ष्मी बाई ने अपना दूसरा शिविर कोंच डाला था जहां उन्होने पेशवाई सेना सहित अंग्रेजो से युद्ध किया। जहां पेशवाई सेना के अनुशासित न होने के कारण उन्हे असफलता प्राप्त हुयी।

कोंच शिविर के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई ने ग्वालियर की ओर प्रस्थान किया। युद्ध से थका हारा दल ग्वालियर पहुँचा ।

ग्वाल्यारम्भं चलत नगरं तद् यरं द्राग् विमुक्ति

दीपं दीप्रं ज्वलयितुमलं स्याम तत्रैव वीराः।

ईशो नश्चेद् भवति स पदं तर्ह्यनाघा अनन्ताः।

प्रासिष्यामः पुनरपि गलाद् दास्ययोक्त्रं सयत्नम् ।। झां0च0 19/55

पेशवाई सेना भी भागकर कालपी पहुंची थी जहां सरहूरोज ने पुनः आक्रमण किया तो पेशवाई सेना कालपी छोड़ रानी सहित वहां से निकल गयी तथा यह दल गोपालपुरा में जा टिका जो ग्वालियर के नेतृत्व में 46 मील की दूरी पर था। रानी नें यहीं अपना शिविर डाला –

इतीव राज्ञी विममर्श सव्यथं पराप गोपालपुरं रमम्।

ददर्श तात्या सह रावमात्मना वभूव यो ग्वालियरस्य पेशवाः।।झां0च0 20/24

इस शिविर में रानी लक्ष्मीबाई राव साहब बांदा के नबाव, बानपुर के राजा सभी ने एकत्र होकर गुप्त मंत्रणा आदि कर ग्वालियर पर आक्रमण की योजना बनायी जिसमें उन्हें सफलता प्राप्त हुयी। झांसी की रानी में लिखा है कि गोपाल पुरा में जब राव तात्या आदि आगे की योजना बना रहे थे तब रानी अपने शिविर में थी।

इस प्रकार युद्ध के समय जगह जगह पर शिविर डालना उचित था। इन शिविरों में युद्ध के समय घायल हुये सैनिको का उपचार भोजन विश्राम आदि के साधन समाहित होते थे। जिससे सैनिकों को

अनेक सुविधायें प्राप्त होती थीं। गोपालपुरा के शिविर में हुयी गुप्त मंत्रणा में ग्वालियर पर आक्रमण की तैयारी हुयी तथा ग्वालियर पर आक्रमण कर राव साहब रानी तात्या आदि ने ग्वालियर के राजा को पराजित कर विजय प्राप्त की।

महारानी लक्ष्मीबाई धार्मिक प्रवृत्ति की थी अतः वह धार्मिक क्रिया आदि कार्य भी शिविर में करतीं रहतीं थीं।

युद्ध से पूर्व शिविर अवश्य ही बनाये जातें थे युद्ध की क्रिया में ये शिविर प्राचीन से लेकर आजतक अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है।

समीक्षा –

इस प्रकार झांसीश्वरी चरितम् के सैन्य विज्ञान के आलोचनात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है रानी वीरता की प्रतिमूर्ति थी तथा वह स्वयं शत्रु पक्ष की वीरता उनकी शक्ति आदि का ज्ञान रखाती थीं। वह जहां जाती वहां चारों ओर का अति कुशलता से निरीक्षण करती थी। वह अपनी सेना के प्रत्येक अंग को बलबान बनाती थीं क्योकि वह नही चाहती थी कि उनकी सेना का कोई भी अंग निर्बल हो। व्यूह रचना और संचालन तथा संगठन के कार्य में वह कुशल थी किन्तु उनकी सेना में अनुशासन की कमी थी शायद इसी कारण उन्हें विभिन्न स्थलों पर इतनी रण कुशल होने पर भी पराजय का मुंह देखना पड़ा । रानी की युद्ध प्रियता तथा रण कौशल के कारण समस्त सैनिक उनसे स्वतः प्रसन्न थे। उन्होने सैन्य संगठन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं आश्चर्यजनक कार्य स्त्री सेना बनाकर किया । उन्होने स्त्रियों में अदम्य उत्साह भर दिया था। वह एक ओर शांति बनाये रखती दूसरी ओर सेना का उत्साह कम नहीं होने देती थी। एक ओर भूखी सिंहनी की तरह हमला करती दूसरी ओर माता की तरह अपनो को स्नेह करती है।

सैन्य उपकरणों आदि के अध्ययन तथा सेना के प्रमुख अंगो के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस सेना के प्रमुख अंग तीन ही थे अश्वसेना, पैदलसेना, तोपखाना, वैसे चतुरंगिणी सेना का परिचय हर जगह मिलता है। चतुरंगिनी सेना में उपर्युक्त तीन अंगो के साथ–साथ गज सेना का भी अति महत्व होता है लेकिन उसमें अश्वसेना प्रमुख थी गजसेना की कमी थी तथा पैदल सेना और तोपखाना भी प्रमुख स्थान रखाते थे। सैन्य उपकरणो में तलवार, छुरा, तोप जिसमें शतघ्नी, धनगर्जन कड़कबिजली, भुशुण्डी आदि प्रमुख उपकरण थे इनके साथ– साथ भाले का भी अति महत्व था रानी ने स्वयं तीर, वंदूक, छुरी

विछुआ रैकला इत्यादि में पहले दर्जे की श्रेष्ठता अमीरखां, जमीरखां से प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त शेल गोले (जो भीतर से पोले होते है जहां अन्दर लोहे के चाकू छुरी नुमा चीजें भरी होती है) गिरते ही ये फूटते है और उनके अन्दर से हत्यार इधर–उधर के जीवो का प्राण संहार करते है। सैन्य शिविर का भी अधिक महत्व था। इनमें सैनिकों के उपयोगी साधन समाहित रहते थे तथा धायल होने पर सैनिको के आराम उनकी मरहम पट्टी आदि का सामान भी इन शिविरो में रहता था जिससे शीध्र ही सैनिकों को उनके उपयोग संबंधी वस्तुयें प्राप्त हो सकती थी।

इन सब का अध्ययन करने से कवि के यौद्धिक ज्ञान का परिचय मिलता है। युद्ध मे कई प्रकार के अस्त्रशस्त्र का वर्णन मिलता है जो कवि के यथेष्ट यौद्धिक ज्ञान की पुष्टि का प्रमाण है महाकवि को तोप बन्दूक आदि आग्नेयास्त्रों का विशेष ज्ञान रहा है अन्य महत्व पूर्ण आयुधों में खड्ग, शतध्नी, छुरा आदि उल्लेखनीय है। कवि रक्षात्मक एवं आक्रामक अस्त्रशस्त्रों से पूर्ण परिचित प्रतीत होता है। वैसे शरीर रक्षा के लिये यौद्धाओं के कवच शिरस्त्राण आदि से भी वे अनभिज्ञ न थे।
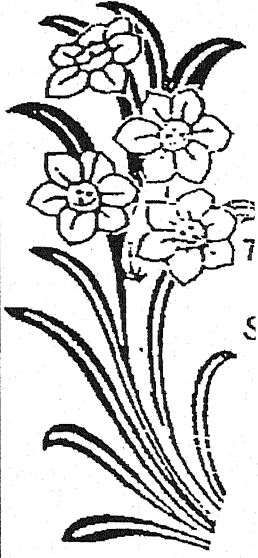
अष्टम अध्याय

झांसीश्वरीचरितम् का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन-बुन्देलखण्ड का सामाजिक, पारिवारिक एवं लोक जीवन, धार्मिक भावनायें, रीतिरिवाज, पर्व उत्सव, लोक कलायें-संगीत, नृत्य, वाद्य आदि का निरूपण तत्कालीन राजनैतिक दशा और झांसी राज्य, झांसीश्वरी लक्ष्मीबाई का प्रभाव

बुन्देलखण्ड का सामाजिक पारिवारिक एवं लोकजीवन :-

झांसीश्वरी चरितम् के आद्योपान्त अध्ययन से तत्कालीन, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक जीवन पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

महाकवि अपने समय की तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों भावनाओं, प्रकृतियों को साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से साहित्य का सृजन करता है।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने इस महाकाव्य में एक कुशल कवि कुशल चित्रकार की भांति उस समय की परम्पराओं, रीति रिवाजों, संस्कृति एवं सभ्यता तथा राजनैतिक जीवन का चित्र चित्रित किया है।

साहित्य में समाज का प्रतिबिम्ब प्रत्यक्ष रूप में कदाचित् दृष्टिगोचर न हो किन्तु महाकवि पन्त ने अपनी कल्पना भावना तथा भाषा के रूप में उसे अवश्य विद्यमान रखा है।

बुन्देलखण्ड सर्वदा ही सभ्यता, संस्कृति कला तथा साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इन सभी दृष्टियों से वुन्देल खण्ड की एकता स्पष्ट रूप से निखरती है।

झांसीश्वरीचरितम् के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि उस समय तक यद्यपि अंग्रेजी शासकों का पूर्ण प्रभुत्व था तथापि सभ्यता संस्कृति का बुन्देलखण्ड के मानव हृदय में ठोस एवं उज्ज्वल रूप व्याप्त था फिर भी जब भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा धर्म पर अंग्रेजों ने कुठाराघात किया तब यह असहनीय हो गया और झांसी राज्य विद्रोह कर उठा। इससे यह ज्ञात होता है कि उस समय लोग धर्म आदि से ओत प्रोत थे। यदि बुन्देलखण्ड का मानव संस्कृतिवान, धर्मवान, न होता तो शायद वह परतंन्त्रता को स्वीकार कर लेता। झांसीश्वरीचरितम् के अनुसार तत्कालीन समाज में वर्ण व्यवस्था पूर्णतया प्रतिष्ठित थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र अपनी-अपनी अवस्थानुसार अपने कर्तव्यों का पालन करते हुये कार्य करते थे। लेकिन ये निम्न जातियां भी उन्नति की ओर अग्रसर हो रहीं थीं। ब्राह्मण झांसी नगर में अधिक थे तथा उनका स्थान आदरणीय था।

ब्राह्मणों का पण्डित्य कर्म था। तत्कालीन समाज में ब्राह्मणों का सम्मान भी होता था। तथा उन्हें उच्चस्थान प्राप्त था यो कहिये कि समाज में अतिथि सत्कार को सर्वोपरि माना जाता था। अतिथि में सब देवताओं का वास होता था। अतिथि सेवा तथा सत्कार को अधिक महत्व था। या यों कहिये कि अतिथि सेवा को सर्वोपरि माना जाता था[1] क्योंकि माना जाता था कि नीच भी घर आये तो उसकी

1. अतिर्थ्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रति निर्वतते। स तस्मै दुष्कृतं दत्वा पुण्यमादाय गच्छति।
1. उत्तमस्यापि वर्णस्य नीचोऽपि गृहमागतः। पूजनीय यथा योग्यं सर्वदेवमयोऽतिथिः।।

यथा योग्य पूजा करना चाहिये। राज्य का राजा भी ब्राह्मण के सम्मान तथा अतिथि सेवा भाव से ओत प्रोत था। यह श्लोक इस बात को दृष्टिगोचर करता है –

श्री तात्यादीक्षितो भूपं गङ्गाधरमुपागतः।

आतिथेयस्य भाग्याय सर्व ईर्ष्याम्बिभूवं ना।। 7/1

विप्रं तात्या दीक्षित के आगमन पर राजा गंगाधर राव उनका सादर सत्कार कर स्वयं को धन्य समझते हैं –

तात्यादिर्दीक्षितः श्रीमान् गुरुर्मे कष्टपूर्वकम्।

अहो अत्रैव सम्प्राप्तो मन्ये नो धन्यतां कथम्।। 7/7

अतः तत्कालीन समाज में ब्राह्मण का स्थान सर्वोपरि था तथा ब्राह्मण, अतिथि का सत्कार करना लोग अपना सौभाग्य समझते थे। आतिथ्य सत्कार उस समय पुण्यकाम समझा जाता था। धर्मशास्त्रों में लिखा है कि अतिथि को साक्षात् नारायण मानकर उनकी सेवा करनी चाहिये। कठोपनिषद में भी इस आतिथ्य को सर्वोपरि माना गया है।[1]

उस समय झांसी में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जनेऊ धारण करते थे शूद्र जाति को इसका अधिकार नहीं था। वैश्यों का कार्य व्यापार करना था। व्यापार कार्य बड़ा ही समृद्ध था। इसका वर्णन झांसीश्वरी चरितम् अष्टम सर्ग के झांसीनगर वर्णन में मिलता है।

आपणा नवला एते प्राप्य पौरान् सुसज्जिताः।

वैश्यपुत्रैर्वचोदक्षैर् सभ्यैरिव विलस्यते ।। 8/19

उस समय झांसी में तन्त्र शास्त्री, मन्त्र शास्त्री रणविद् वैद्य आदि विशेषज्ञ थे।

समाज में वैवाहिक जीवन को अधिक महत्व था तथा वैवाहिक बन्धनों को अति शुभ माना जाता था। कन्या हेतु वर पिता ही खोजता था अथवा ब्राह्मणों या सगे सम्बन्धियों द्वारा यह कार्य सम्पन्न होता

---

1. तिस्रो रात्रीर्यदवात्सीर्गृहे मे, अनश्नन् ब्रह्मन्नतिथिर्नमस्यः।

   नमस्तेऽस्तु ब्रह्मन् स्वस्ति मेऽस्तु, तस्मात्प्रति त्रीन् वरान् वृणीस्व।। 1/1/9 कठोपनिषद्

   आसनावसथौ शय्यामनुव्रज्यामुपासनाम्।

   उत्तमेषूत्तम कुर्याद्धीने हीनं समे समम् ।। 3/107 मनुस्मृति अध्याय 3

था इस बात का प्रतीक झांसीश्वरीचरितम् में वर्णित तात्या दीक्षित द्वारा बताये गये गृह में मनु का विवाह सम्पन्न होना है हिन्दू समाज के लिये विवाह एक महत्वपूर्ण कर्तव्य माना जाता था। बाल विवाह प्रथा का भी प्रचलन था।

विवाह से पूर्व जन्मपत्रिका के मिलान का प्रचलन था तथा योग्यवर चुनकर ही विवाह किया जाता था। विवाह पूर्व सगाई की प्रथा का प्रचलन था जिसे वर्तमान की तरह लग्न या तिलक के नाम से अभिहित किया जाता था। इस श्लोक का अवलोकन करें –

झांस्यामेव विवाहः स्यात् समं निश्चित्य पेशवा ।

प्रशस्यं लग्नमुक्त्वेष्टं तात्या झांसी न्यवर्त्तत ।। 7/36

तत्यश्चात् तेल मण्डप टीका भांवर आदि रस्मे पूरी की जाती थी।

राजा गंगाधर राव की मंगनी की रस्म बिठूर में हुई थी। रानी सीमन्ती आदि विवाह की रीतियां झांसी से ही सम्पन्न हुयी थी। किसी भी शुभ कार्य से पूर्व गणेश पूजन भारत वर्ष की अति प्राचीन परम्परा है, जो कि आज तक विद्यमान है तथा उस समय भी भक्ति भाव से उसका पालन किया जाता था। वैवाहिक कार्यक्रम आरम्भ होने से पूर्व गणेश पूजन का उल्लेख झांसीश्वरीचरितम् के सांतवे सर्ग के विवाह कार्यक्रम से पूर्व मिलता है –

विनायकस्तु तत्रासीद् रतः संस्कार ऋत्विजः ।

संमर्दश्च जनस्याभूत् परिहास्परायणः ।। 7/44

भांवर पड़ते समय गांठ बांधने की रीति का भी उल्लेख किया गया है–

विध्यन्तराणि सम्पाद्य क्लान्तः साप्तपदे द्विजः ।

क्षिप्रकृद् धूपरुद्राक्षो ग्रन्थिबन्धरतोभवत् ।। 7/45

अतः उस समय बुन्देलखण्ड में लग्न, तेल, मण्डप, टीका, भांवर गाँठ बांधना आदि वैवाहिक क्रियायें अपने उत्तम रूप में प्रचलित थी। विवाह के समय कन्या का लाज से चुप रहना स्वाभाविक है किन्तु रानी के विवाह के समय पंडित गांठ बांध रहा था, तब उनके हांथ कांपने पर रानी ने उससे कहा था कि गांठ ऐसी बांधना कि वह कभी न खुले यह रानी के चंचल स्वभाव होने का परिचय है यह सुनकर सारी झांसी में एक खुशी की लहरसी दौड़ गयी थी। ऐसा कुछ पुस्तकों में वर्णित है तथा झांसीश्वरी चरितम् के इस श्लोक में भी इसका वर्णन है –

क्षिप्रकारित्वतः कार्य सम्पन्नं स्यात्कथं क्वचित्।

बिलम्बो भून्मनूस्वांन्तं चापल्याय प्रणोदितम् ।। 7/46

विवाह के समय स्त्रियां रेशमी वस्त्र धारण करती थी जिन्हें इन शुभअवसरों पर पहनना शुभ माना जाता था –

विमानेन तमैश्वर्य श्रीमल्लोको व्यलोकयत्।

कौशेय प्रतिसीरान्तः स्त्रियो हृष्टाः सहर्षणाः।। 7/39

तत्कालीन समाज में साड़ी का भी प्रचलन था स्त्रियां साड़ी धारण करतीं थीं तथा आभूषणों आदि से सुसज्जित रहतीं थीं।

आत्मन्येव जहासासौ धृतशाटीविभूषणा।

यथा स्यादट्व्हासो नो तथाधात्सावधानताम् ।। 7/41

धार्मिक कार्यें के समय का क्षौम (रेशमी) वस्त्र धारण करना शुभ माना जाता था।

राजाओं के विवाहोपरान्त दरबार में नगर न्यौछावर की रीति का भी उल्लेख झांसी की रानी लक्ष्मीबाई में मिलता है जिससे प्रतीत होता है कि उस समय लोग राज्य के राजा के विवाह पर नजर न्यौछावर करते थे तथा राजा द्वारा उन सबको पुरस्कार स्वरूप कुछ न कुछ भेंट अवश्य दिया जाता था।

विवाह के अवसर पर वीणा, शहनाई आदि मधुर वाद्यों की परम्परा थी –

निकषोपयमस्याहन्युपेते वाद्यसंहतिः ।

माधुर्यावाद्यतायाता भूदाली देवसन्निभाः ।। 7/37

स्त्रियां अपने केशों को पुष्पों आदि से सज्जित कर सुन्दर सुन्दर आभूषण धारण करतीं थी। इन शुभ अवसरों पर राजमहलों में उत्सव की धूम धाम अपनी चरम सीमा पर रहती थी। नव वधू को पालकी में बिठाकर विदा किया जाता था।[1] तत्कालीन बुन्देलखण्ड में साधारण रूप में भी स्त्रियों का पहनावा साड़ी, लंहगा चुनरी, करधनी, गले में कण्ठहार, कर्णफूल, मणिक मोती हार आदि विभिन्न प्रकार के आभूषण उस समय बुन्देलखण्ड में प्रचलित थे। पुरूष, कुर्ता, धोती, कोट आदि सिर पर साफा, पगड़ी आदि पहनते थे। पुरूषों को भी आभूषण प्रिय थे अतः सम्पन्न लोग आभूषण का प्रयोग करते थे।

तत्कालीन स्त्रियों का लज्जा आभूषण था। पतिवृत धर्म का सम्मान था[2] रानी लक्ष्मी बाई एक पती

---

1. झां0च0 7/58
2. झां0च0 10/68

वृता थी इस का उल्लेख झांसीश्वरी में मिलता है। सती प्रथा, दास प्रथा आदि का कुछ–2 प्रभाव था। दासी प्रथा का होना रानी की दासियों से स्पष्ट होता है लेकिन दासों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाता था। इसका सजीव चित्रण हमें झांसीश्वरी चरितम् में मिलता है। रानी लक्ष्मीबाई अपनी सेविकाओं के साथ सेविका सा नहीं वरन् मित्रवत् व्यवहार करतीं थीं।

गोद लेने की प्रथा भी प्रचलित थी। राजा गंगाधर राव ने पुत्र प्राप्ति न होने पर अपने किसी कुटुम्बी के पुत्र दामोदर राव को गोद लिया था।

दत्तात्रेयः सुपुपत्रोयं तावकीनोतिलालितः ।

उत्संग उपविष्टो हा रोदनानुपमोभवत् ।। 10/13

समाज का संगठन कुटुम्ब की परिपाटी पर आधारित था पारिवारिक जीवन उत्तम था। लोग संयुक्त परिवार में रहते थे परिवार का मुखिया पिता या कोई बुजुर्ग ही होता था जिसके संरक्षण में सम्पूर्ण कार्य सम्पन्न होते । परिवार में पुत्र का महत्व अधिक था किन्तु पुत्री का पालन भी बड़े ही लाड़ प्यार के साथा किया जाता था। पुत्रों की ही भांति उनकी शिक्ष दीक्षा का समुचित प्रबन्ध होता था। इसका उल्लेख झांसीश्वरी चरितम् में मिलता है मनु का पालन पोषण बड़े ही दुलार के साथ कर तथा समुचित शिक्षा प्रदान की गयी थी।

लोकाचार तथा लोकरीतियों का भी बुन्देलखण्ड में इस युग में विकास हो चुका था नामकरण, मुण्डन, कन्छेदन, जनेऊ, विवाह अन्त्येष्टि आदि संस्कारों का भी प्रचलन था। जनेऊ, नामकरण विवाह आदि का उल्लेख झांसी की रानी में भी मिलता है तथा नामकरण, आदि का उल्लेख डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने भी महाकाव्य के चतुर्थ सर्ग में किया है–

सा मनूरिति वभूव ललास सद्म सद्म मनुमन्वितिपूर्णम्ः

अधिमुक्तिरलसत्प्रतिचित्तं व्याधिमुक्तिरलसत्प्रतिदेहम् ।। 4/36

झांसी की रानी में जनेऊ संस्कार का वर्णन किया गया है । झांसी की रानी के पृष्ठ 199 पर मुण्डन संस्कार का वर्णन भी किया गया है जिससे ज्ञात होता है कि महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार विधवा होने के कारण रानी अपने बाल मुड़वाना चाहती थी । इसी हेतु वह काशी जाना चाहती भी थी। वही से राजनैतिक परिस्थियों से भी अवगत होना चाहती थी।

डा0 सुबोध चन्द्र पन्त जी ने वास्तव में तत्कालीन समाज में व्याप्त रीतियों का अति सुन्दर चित्रण

किया है इस श्लोक का अवलोकन करें –

ततः सुधीशः स्वगतं जगाद ध्रुवा स्वराज्याप्तिरथाबिलम्वम्।

कृतेः फलं ज्ञास्यति गौरदेहो रिपूर्द्रुतं गोर्हनने पटीयान् ।। 6/13

उस समय लोग गाय की हत्या करना दुष्कर्म, पाप समझते थे अंग्रेजो के ऐसा करते हुये कदापि हिचकिचाहट न होती थी जबकि तत्कालीन समाज में गौहत्या का निषेध था। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई में इस की पुष्टि होती है। **Jhansi during the British rule**[1] से भी बात की पुष्टि होती है। झलकारी बाई द्वारा एक गाय के बछड़े की हत्या से उसे पंचायत ने दण्ड दिया था। जन्म पर उत्सव मनाया जाता था तथा दीप जलाकर रखना उनकी मान्यता थी।

एकोनत्रिंशतं दीपान् कृत्वामायामुतामराः ।

अस्या नीराजनां नित्यं कुर्वते नव्यतायुताम्।। 3/20

पुत्र या पुत्री की प्राप्ति पर लोग पुरस्कार आदि वितरित करते थे। राजा गंगाधर राव को पुत्र प्राप्ति पर हर्ष के साथ सोने के कड़े सिरोपाव आदि वितरित कि ये थे। तथा झांसी इन्द्रपुरी बम गयी थी।

राजा का राज्याभिषेक बड़ी धूमधाम से किया जाता था तथा उत्तराधिकारी के रूप में राजा के ज्येष्ठ पुत्र को प्रमुखता दी जाती थी। जब ग्वालियर पर रानी ने अधिकार कर लिया तब वहां के पेशवा राव साहब का राज्याभिषेक कर गद्दी पर विठाया गया।

बभूव राजस्वभिषेकमंगल प्रभुत्परः सौख्यशये भटावलिः ।

सुखातिरेकः कुपथं प्रवर्त्तयत्यथालसीकृत्य विनाशयत्यपि ।। 20/48

गांवो में पचायत की व्यवस्था होती थी प्रायः नगरों में किले बन्दी होती थी। खेती के अतिरिक्त बढ़ई, लुहार, स्वर्णकार, जुलाहे, चर्मकार, जौहरी, चित्रकार आदि का पेशा होता था पुत्र या पुत्री की प्राप्ति पर लोग पुरस्कार आदि वितरण करते थे तथा नृत्य गान आदि भी होता था राजा गंगाधर राव के पुत्र प्राप्ति पर हर्ष के साथ सोने के कड़े, सिरोपाव आदि वितरित किये तथा आमोद प्रमोद के साथ झांसी इन्द्रपुरी बन गयी थी व्यापार काफी अच्छा था बाहरी देशों से व्यापार होता था। साधारणतया देश सुखी और सम्पन्न था। पुत्र प्राप्ति के अवसर पर उस समय पगड़ी बांधने की प्रथा थी तथा पगड़ी बांधने वाले को पुरस्कार दिया जाता था। झांसी की रानी के अनुसार उस समय श्याम चौधरी नाम के व्यक्ति के घराने वाले ही इन अवसरों पर पगड़ी बांधते थे।

---

1. The Introduction of Cow killing also offended the people and perticularly the Hindus."
Joshi E.B. Uttarpradesh District Gazetteer Jhansi, Lucknow, 1965.

डा० सुबोध चन्द्र पन्त ने झांसीश्वरी चरितम् में झांसी नगर की तथा वहां की सम्पत्ति का अति मनोहारी रूप प्रस्तुत किया है – झांसी का यह रूप देंखे –

तत्र झांसीपुरी रम्यां निरीक्षस्वायि लालसे ।

उत्थितां हृदयप्रान्ताद् रसाया इव लालसाम् ।। 8/1

नगर तालाबों की शोभा से सुशोभित थे।

गृहणत्वकुवलयद्वन्दं पुण्डरीकमिदं रमम्।

झांसीकीर्तितडागस्य शोभा भूयादनुत्तमा ।। 8/10

तत्कालीन समय में गलियों आदि का सुन्दर निर्माण होता था –

नवीनाः सुन्दरा वीथ्यो रत्नराशिसमाकुलाः ।

मन्येत्राब्धिरभूदद्य ससूक्ष्मावार्य पासरत् ।। 8/22

तत्कालीन लोग धन धान्य से सम्पन्न थे नागरिक जीवन बड़ा ही भव्य और समृद्ध था। भवन आदि सुन्दर बने हुये थे

समाज में साम्प्रदायिकता का भाव था रानी के सैन्य वर्णन का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि उस समय किसी प्रकार का कोई जाति पांति भेदभाव नहीं था। रानी के सैनिको में मुस्लिम, पठान, कोरी, काछी आदि सभी शामिल थे जिससे साम्प्रदायिकता के न होने का परिचय मिलता है। उस समय कुंकुं उत्सव के समय रानी सबसे गले मिला करती थी चाहे वह निम्न जाति की हो अथवा उच्च जाति की उनके लिये सब समान थे। उनकी सेना का मुख्य तोपची गुलाम गौस खां मुस्लिम था खुदाबख्श मुस्लिम था झलकारी, मोती क्रमशः कोरी तथा मुस्लिम थी। इस तरह रानी ने साम्प्रदायिकता का भाव नहीं बनाये रखा था।

झांसीश्वरी चरितम् के पर्यालोचन से ज्ञात होता है कि उस युग में बुन्देलखण्ड धार्मिक, सांस्कृतिक और सभ्यता की दृष्टि से भी अपनी उच्चगरिमा बनाये हुये था। सदैव से ही बुन्देलखण्ड अपने अंचल में परम्पराओं, रीतिरिवाजों, धार्मिक मान्यताओं, साहित्य, कला संगीत आदि को समेटे हुये था। समस्त धर्म को मानने वाले परमात्मा की सर्वव्यापी तथा अप्रतिहत शक्ति में विश्वास रखते है।

उस युग में भी धार्मिक भावना का मानव मन में पूर्णरूपेण संचार हुआ था। तत्कालीन समाज में देवी–देवताओं के अनेको मंदिर पाये जाते थे। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, लक्ष्मी ,गणेश आदि की पूजा प्रमुख

थीं। समस्त नगर वासी इन सभी देवी देवताओं के समक्ष समान रूपेण नतमस्तक हो पूर्ण श्रद्धा एवं भक्ति भाव से अर्चना करते थे। झांसी में उस समय किले में ही महादेव मन्दिर (यह ऐतिहासिक दुर्ग में स्थित था) शिव की प्रसिद्ध मूर्ति जो अति प्राचीन है और गणेश का मन्दिर था। शिव का मन्दिर प्रसिद्ध ऐतिहासिक दुर्ग में स्थित था गणेश मंदिर का निर्माण रघुनाथ राव के काल में हुआ था। इसमें लम्बोदर विघ्नविनाशक गणपति गणेश की विशाल प्रतिमा स्थापित है। महालक्ष्मी का मंदिर प्रमुख था जिसमें लक्ष्मी की प्रतिमा विराजमान है गुप्तमार्ग से लक्ष्मी जी इस मंदिर में पूजन हेतु जाया करती थीं। मुरलीमनोहर का मंदिर भी प्रमुख था जिसमें वीरांगना नित्य पूजा अर्चना करती थी। ये प्रमुख मंदिर उस समय थे जिससे ज्ञात होता है कि वहां मनुष्य इन प्रमुख देवताओं की विशेष रूप से पूजा करते थे। रानी तथा अन्य स्त्रियां मन्दिर में जाकर थाल, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से भक्ति भाव से भागवान की पूजा करतीं थी। नवरात्रि में गौर प्रतिमा बनाकर उनका पूजन करना की प्रमुख था। महालक्ष्मी का मन्दिर भी प्रमुख था जहां महारानी लक्ष्मीबाई पूजा के लिये जाती थीं। कुंवार के महीने में श्राद्ध आदि रीतियां वर्तमान की ही भांति उस समय बुन्देलखण्ड में थीं स्त्रियां मंदिरों में घी के दीप प्रज्ज्वलित करती थी।

वेदो तथा उपनिषदों पर लोगों का विश्वास था। महारानी लक्ष्मीबाई द्वारा शास्त्रों का तथा काव्यों के अध्ययन का डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने जो वर्णन किया है उससे तत्कालीन समाज की वेद, उपनिषदों तथा अपने धर्म के प्रति आस्था का चित्र प्रस्तुत होता है –

अध्यैष्ट सा भारतनाम काव्यं प्रत्यक्षरं नीतवती स्मृतिं तत्।

अनुस्मरन्ती च दशामतुल्यां तां भारतीयामपतद्विषादम् ।। 5/9

सभी लोग रामायण, महाभारत तथा गीता को अपना पथप्रदर्शक समझते थे। गंगा, यमुना नर्मदा वेतवा उनके लिये पवित्र थी तथा उस समय भी इनमें स्नान करना धार्मिक कृत्य माना जाता था। अयोध या, वृन्दावन, काशी, प्रयाग, रामेश्वरम् समान रूपेण सर्व बुन्देलखण्ड वासियों के लिये वर्तमान की ही भांति पवित्र तीर्थ स्थान के रूप में मान्य थे। इनकी श्रेष्ठता एव विशेषता का उल्लेख डा0 पन्त जी ने भी अति सुन्दरता से किया है –

सैव प्रयागो मथुरा च धारा काञ्चीपुरी चोज्जयिनी तथैव ।

त एव सर्वे निषधादयोपि तदेव सम्प्रत्यपि तत्र सर्वम् ।। 5/153

अपिच –

त एव सर्वे बदरींश्वरश्च रामेश्वरो द्वारवती पुरी च ।

तान्येव वेदाश्चपुराणशास्त्राण्यास्तिक्यमातिथ्यमथानुकम्पा ।। 5/54

इस प्रकार तत्कालीन समाज धार्मिक भावनाओं से ओत प्रोत था तथा कुछ समय ईश्वर भक्ति में विताकर अपने जीवन को सफल बनाया जाता था।

समाज में शिष्टाचार का विशेष ध्यान रखा जाता था। रानी जीवन धर्म से ओत प्रोत था वह नित्य प्रातः उठकर भक्ति भाव से भजन पूजन करती थी तथा भजन सुनती थी नियम पूर्वक सन्ध्योपासना भी करती थी। गीता आदि का नियम से पाठ करती थीं।

रीतिरिवाज –

उस समय पिण्डदान आदि के लिये पुत्र का होना अति आवश्यक माना जाता था। धर्म के विधान के अनुसार औरस पुत्र न हो तो दत्तक पुत्र भी पिडदान कर सकता था। मनुस्मृति मे भी इसका उल्लेख किया गया है[1] कि पिण्डदान के लिये पुत्र आवश्यक है। राजा गंगाधर राव से विवाह संवधी वार्तालाप करते हुये तात्या दीक्षित के मुख से इस बातका उल्लेख किया गया है कि पुत्रहीन को पापी समझा जाता है –

गेहरत्नं तनुजो वै तेनैवास्ति कुलोद्धृतिः ।

पठ्यते भारते काव्ये सुतहीना हि पापिनः ।। 7/21 झां0 च0

अपिच –

इति वृत्तं वदत्येव पुराणं चापि तन्मतम् ।

छित्वा सुकृतिसन्तानं निरये पच्यते सुतः ।। 7/22 झां0 च0

वाण ने भी अपनी कृति कादम्बरी में उत्तरभाग पृ0 239 'विलासवती दुःख प्रश्न वर्णन' में इस तरह का उल्लेख किया है।

इस प्रकार तत्कालीन समाज में धर्म का अति महत्व था लोग अपने धर्म के लिये अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिये भी तत्पर रहते थे। लोग अपनी प्राचीन धार्मिक भावनाओ को सरलता से छोड़ना

---

1. सहपिण्डक्रियायां तु कृतायामस्य धर्मतः।

अनयैवावृता कार्यं पिण्डनिर्वपणं सुतैः।। 248 मनुस्मृति अध्याय 3

नहीं चाहते थे। यद्यपि उस समय अंग्रेज ईसाई धर्म के प्रचार में प्रयासरत् थे। तथापि भारत वासी अपने धर्म के लिये मर मिटने को तैयार थे। महारानी लक्ष्मीबाई नित्य पुराण, गीता आदि का अध्ययन करतीं थीं तथा दान धर्म आदि धार्मिक कृत्य करतीं थी। पितरों के लिये श्राद्ध और यज्ञादि क्रियायें भी प्रचलित थी। वह महालक्ष्मी की भक्त थी तथा दर्शन एवं पूजन हेतु नित्त मंदिर जाया करतीं थी। उस समय गौरी पूजन, गणेश पूजन आदि देवताओं की पूजा होती थी। गौर प्रतिमा बनाकर उत्सव मनाया जाता था सभी उत्सवों का किसी न किसी तरह से ईश्वर पूजा ही उद्देश्य होता था रानी वचपन से भाक्ति भावना से ओत प्रोत होता था तथा ईश्वर मे पूर्णरूपेण आस्था रखतीं थीं। धार्मिक कृत्यों से मनुष्यों को आत्मशान्ति तथा साहस प्राप्त था। लोगों का शुभ-अशुभ सब ईश्वर पर आश्रित था। अधिकतर लोग उस समय आस्तिक हुआ करते थे।

पर्व उत्सव -

बुन्देलखण्ड की सभ्यता एवं संस्कृति में पर्व उत्सव एवं लोक कलाओं का विशेष स्थान था। तत्कालीन समाज मे दशहरा दीपावली, नवदुर्गा, गौरपूजन, रक्षाबन्धन, होली, हरदी कुं कुं ,ईद आदि पर्व एवं उत्सव प्रमुख थे। ये समस्त प्रमुख सांस्कृतिक पर्व एवं उत्सव वुन्देलखण्ड की सभ्यता एवं संस्कृति के प्रतीक थे।

दीपावली पर्व पर सम्पूर्ण नगर को दीपकों से सजाया जाता था तथा समस्त स्त्री पुरूष अपने–अपने गृहे में दीपक जलाकर लक्ष्मी पूजन करते थे। नगर का बाहरी रूप जगमगा उठता है। दीपावली पर्व का उल्लेख झांसीश्वरी चरितम् के चतुर्थ सर्ग में हमें मिलता है जिससे प्रतीत होता है कि उस समय यह पर्व अति उत्साह के साथ मनाया जाता था –

दीपपर्व दिनपूर्वमुपेतं क्षिप्रकारि मनसा समवृत्ति।

रेजिरेलमिजिरेजिरे आशु दीपकावलम्ब आत्तमहाभाः ।। 4/3

रक्षा बन्धन का भी विशेष महत्व था। बहिने भाइयों की कलाई पर धागा बांधती थी और भाई उनकी रक्षा का वचन देते थे। रक्षाबन्धन पर्व का उल्लेख झांसीश्वरीचरितम् के त्रयोदश सर्ग में किया गया है–

इयन्ति वर्षाणि गतानि रक्षासूत्रं स्वयं ते न करे बबन्ध।

जीवामि चेदद्य तदा करिष्याम्यमूं सदिच्छां हृदयस्य पूर्णम ।। 13/29

मराठी में लिखे गये ग्रन्थ 'भारतीय स्वातान्त्रय समर' (हिन्दी अनुवादक गणेश रघुनाथ वैशंपायन) इस बात का उल्लेख है कि रानी लक्ष्मीबाई भैया दूज पर नाना साहब को सोने की थाली में नीरांजन रखकर अपने हाथों नाना की आरती उतारती थी।

इस पावन पर्व पर भाई अपनी बहिन की रक्षा हेतु वचन लेते है। तीज त्यौहार और पर्व आदि के आगमन से कुछ क्षणों के लिये मनुष्य अपनी आन्तरिक वेदनाओं पीड़ाओं तथा चिन्ताओं को त्यागकर परमानन्द को प्राप्त हो जाते थे।

गौर पूजन में गौर की प्रतिमा बनाकर स्त्रियां उसका पूजन कर हल्दी कुं कुं या सिन्दूर एक दूसरे के माथे पर लगाती थीं तथा नाचती गाती थी। रानी यह उत्सव अति हर्ष के साथ समस्त स्त्रियों के साथ अपने महल में गौर प्रतिमा बनाकर करतीं थीं। टीका लगाकर परस्पर एक दूसरे के पतियों के नाम पूछा करती थीं। पहले स्त्रियों के द्वारा अपने पतियों के नाम नहीं लिये जाते थे और जब सखियां नाम पूछती थीं तो स्त्रियों के चेहरे लालिमा युक्त हो जाते थे स्त्रियाँ अति साज सज्जा के साथ उपस्थित होती थी, तथा हर्षोन्माद से ओतप्रोत रहतीं थी। उस समय, भाईदूज, रक्षावन्धन, होली, दीवाली, गौरपूजन, नवदुर्गा गणकौर, सावनतीज, दशहरा, नागपंचमी, गणेशोत्सव आदि अनेकों पर्व उत्सवों का वर्तमान समय की तरह ही प्रचलन था। ये पर्व उत्सव भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता की परम्परा के प्रतीक थे। ईद का उल्लेख भी अन्य पुस्तकों में मिलता है।मुस्लिम त्यौहारों में ईद मुहर्रम आदि अति उत्साह के साथ मनाये जाते थे। मुहर्रम का उल्लेख झांसी की रानी लक्ष्मीबाई वृन्दावन लाल वर्मा के पृष्ठ 280 पर मिलता है हिन्दू जल विहार आदि भी मनाये जाते थे।

झांसीश्वरी चरितम् के अनुशीलन से तत्कालीन समाज की लोक कलाओं पर अच्छा प्रकाश पड़ता है

लोक कलायें -

संगीत, नृत्य, वाद्य आदि का निरूपण -

झांसीश्वरीचरितम् के अनुशीलन से तत्कालीन समाज की लोक कलाओं पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। बुन्देलखण्ड विद्या, कला सभ्यता, संस्कृति आदि क्षेत्र में सदैव गौरवान्वित रहा है तत्कालीन समाज में चित्रकला, काव्य कला, नृत्य, बाद्य ध्रुपद वीणा, संगीत कला आदि अपनी उन्नतावस्था में थी।

राजा गंगाधर राव उस समय साहित्य एवं ललित कलाओं में विशेष रूचि रखते थे। उन्हें नाटक आदि में भी अधिक अभिरूचि थी। उनके दरबार में चित्रकार, गायक वादक, कवि आदि प्रमुख स्थान प्राप्त करते थे। प्राचीन चित्र कला राजा गंगाधर राव के शासन काल में विकसित हुयी अनेकों चित्रकारों ने इसका विकास किया। राजा गंगाधर राव के दरबार मे चित्रकला का जो चित्रकार था उसका नाम सुखलाल था। जिसका वर्णन झांसीश्वरीचरितम् के दशम सर्ग में डा० सुबोध चन्द्र पन्त जी ने किया है –

चित्रकृत्सुखलालोसौ रेखालीं विदधाति याम् ।

दूषयत्यश्रुजालं तं कम्पनं वक्रयत्यलम् ।। 10/28

राजा गंगाधर राव को काव्य कला का भी विशेष अनुराग था। काव्य पाठ का श्रवण कर वह अति हर्ष में डूब जाते थे। उनके दरबार में दो कवि हीरालाल जिनका उपनाम हृदयेश था तथा दूसरे श्रंगार रस के कवि पजनेश थे। इनका उल्लेख इस बात का प्रतीक है कि तत्कालीन समाज में काव्य कला भी अपने प्रमुख रूप में मुखरित हो रही थी। इन दोनो कवियों के नाम डा० सुवोध चन्द्र पन्त जी ने अंकित कर झांसी की काव्य कला का परिचय दिया है –

हृदयेशापराख्योसौ हीरालालः कवीश्वरः ।

हृदयेशः क्व हेत्युक्त्वा काव्यं नैजं छिनत्तयहो ।। 10/30

श्रंगार रस के कवि पजनेश का उल्लेख दशम सर्ग के ही इकत्तीसवें श्लोक में मिलता है–

श्रंगार मादकं त्यक्त्वा पजनेशो महाकविः ।

म्लानवेशो ब्रवीत्यार्त्तः करुणः केवलोरसः ।। 10/3

झांसी में उस समय ये दो ही कवि उत्तम थे। गायन, वादन कला भी विशेष स्थान रखाती थी। ध्रुवपद के गायक मुगलखां थे –

धत्ते ध्रुवपदं गायन् कण्ठे मुगलखां व्यथाम् ।

गानबेवाश्रुरूपेण निर्याति छिन्नलोचनम् ।। 10/27

राजा गंगाधर राव के काल में नाटक कला अधिक विकसित हुयी। बुन्देलखण्ड में नाट्य कला का भी प्रादुर्भाव अपने चरमोत्कर्ष पर था। राजा गंगाधर के समय एक नाट्यशाला थी। जहां जो विभिन्न नाटकों का अभिनय करतीं थी उनमें मोती बाई प्रमुख थी। नृत्यकला में भी यह परिपक्व थी। नृत्यकला

की पुजारी जूही का भी नामोल्लेख किया गया है जूही, मोतीबाई की भांति अभिनय में उतनी कुशल नहीं थी तथापि नृत्य कला का अच्छा ज्ञान था। इनके उल्लेख से तत्कालीन नृत्यकला तथा नाट्य अभिनय कला पर भी प्रकाश पड़ता है –

जूह्याश्चरणयोराप्तं कम्पन्नृत्यमनन्तताम् ।

चाटुमिर्या शतेनापि नानृत्यत् सुभगा क्वचित् ।। 10/37

समाज में स्त्रियों एवं पुरूषों को गायन की विशेष अभिरूचि थी। वह अपना कार्य करते हुये भी गाते रहते थे। विभिन्न उत्सवों के समय स्त्री पुरूष हर्षोन्मद हो उठते थे तथा गाना गाते थे। बुन्देलखण्ड के चित्रों में काव्यों में आत्माभिव्यक्ति रहती थी जो अत्यन्त मौलिक एवं सजीव रहती थीं।

इस प्रकार गायन, वादन नृत्य आदि मनो विनोद के साधन थे। राजा गंगाधर राव ने विशाल नाट्य भवन का निर्माण कराया था। महारानी लक्ष्मीबाई इन सम्पूर्ण कलाओं की परिपोषक हुयीं। वात्स्यायन ने 200 ई0 पू0 नारियों को 64 कलाओं में निपुण माना है।[1] काव्य कला की साहित्यिक अभिरूचि नारियों की वैदिक काल से दृष्टगत होती है इन 64 कलाओं में युद्ध कला भी एक कला रही होगी जिसमें रानी लक्ष्मीबाई निपुण थी।

नारीशिक्षा –

परवर्ती संस्कृत साहित्य में स्त्रियों द्वारा पुरूषों के साथ सह शिक्षा प्राप्त करने के अनेक उल्लेख प्राप्त होते है। वाल्मीकि आश्रम में अरून्धती का लवकुश के साथ शिक्षा ग्रहण करना तथा कामन्दकी का भूरिवसु: एवं देवरात के साथ शिक्षा ग्रहण करने से आठवीं शती तक समाज में सहशिक्षा की सुव्यवस्था विद्यामान थी। महारानी लक्ष्मीबाई ने भी युद्ध कला आदि शिक्षा को नाना साहब तथा राव साहब के साथ ग्रहण किया था। उस समय की नारी शिक्षा व्यवस्था समाज में प्रचलित होकर अनेक लोकोपयोगी विषयों का ज्ञानार्जन कर नारियां रचनात्मक अनेक कार्यों को करती हुयी सुप्रतिष्ठित रही है। मनु ने माता को अति महत्वपूर्ण स्थान दिया है उनकी धारणा है कि उपाध्याय से दशगुना अधिक गौरवशाली आचार्य है, आचार्य से सौगुना अधिक पिता से हजार गुना गौरव शालिनी माता है।[2] इस तरह

---

1. अभ्यास प्रयोजाश्च चातु: षस्टिकान योगान कन्या रहस्ये काकिन्यभ्यसेत्।।

2. उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।

सहस्रांतु पितृन् माता गोरवेणातिरिच्यते ।।

इस समय की माता को उच्च स्थान प्राप्त था। उस समय स्त्रियों में विशेषतः नृत्य ज्ञान में असाधारण उन्नति प्राप्त की थी साथ ही शस्त्र आदि का भी अध्ययन करती थी।

उस समय शहनाई, ढोल, मृदड़ग, तबला, नगाड़ा ढोलक आदि वाद्य प्रमुख थे।

राजा साहित्य के भी प्रबल पोषक थे। उन्होंने अपने काल में एक विशाल पुस्तकालय बनवाया[1], जिसमें विभिन्न ग्रंथ एकत्रित कर अपने विशाल पुस्तकालय को भर दिया था। वेद, उपनिषद, पुराण, आयुर्वेद, ज्योतिष, दर्शन व्याकरण काव्य इत्यादि इस विशाल पुस्तकालय में एकत्रित किये थे। इस बात की पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, (वृन्दावन लाल वर्मा) Jhansi During the British rule डा० एस. पी.पाठक आदि पुस्तक से होती है।

अंग्रेजो ने इस विशाल पुस्तकालय को झांसी विध्वंस करते समय जला दिया। इस बात का उल्लेख झांसीश्वरी चरितम् में वर्णित आगजनीं की घटना तथा अंग्रेजों द्वारा झांसी पर अत्याचार का वर्णन के डा० पन्त के वर्णन से ज्ञात होता है इसके साथ ही झांसी की रानी से भी पुस्तकालय के जलकर नष्ट होने के विवरण मिलते है तथा Jhansi During the Britis Rule By Dr. S.P. Pathak [2]से भी।

बुन्देलखण्ड को चन्देल काल में चन्देलों ने संस्कृति, कला और साहित्य में चरम सीमा पर पहुंचा दिया था। खजुराहो की कला और वास्तुकला बुन्देलखण्ड की सर्वोत्कृष्ट कला के उदाहरण हैं।

बुन्देलखण्ड के चित्रकारों की विशिष्ट शैली भारतीय चित्रकला के इतिहास में अपना विशेष स्थान रखाती है कई वर्ष प्राचीन चित्रकला के उदाहरण झांसी के पास वाघाट ग्राम में मिलते हैं बुन्देलखण्ड के कुछ दुर्ग, चंदेरी दुर्ग, देवगढ़, ओरछा दुर्ग, अजयगढ़, कालिंजर दुर्ग तथा झांसी दुर्ग भी तत्कालीन

1- "The famous liberary of sanskrit manuscripts which had been built up by Raja Gangadhar rao and the other earlier rulers was to tally destroyed during the sack of jhansi 1875". Sen. S.N. Eighteen fifty seven cal 1958 P. 288

2- The literature destroyed during the great revolt has been described by Dr. Mahor as the " Maryeed Literature"

National Herald Luck. dated Oct 20, 1957 Jhansi During the British rule Delhi 1987 P.1

उत्कृष्ट कला के प्रतीक है जिससे प्रतीत होता है कि इस समय तक वास्तुकला, चित्रकला आदि कलायें अपनी चरम सीमा पर थीं। भित्ति चित्रों से उस समय की सभ्यता एवं संस्कृति पर भी प्रकाश पड़ता है। बुन्देलखण्ड की सभ्यता तथा संस्कृति का अवलोकन पुराणों, यात्रा वृतांतों तथा काव्य ग्रंथों से ही किया जा सकता है उस समय बुन्देलखण्ड में धार्मिक सहिष्णुता अधिक कट्टर थी तभी तो अपने धर्म पर अंग्रेजों का हस्तक्षेप देख उस समय बुन्देलखण्डी क्रान्ति कर उठे।

झांसीश्वरीचरितम् में कुछ उदाहरण ऐसे मिलते है जिससे चित्रकला पर प्रकाश पड़ता है तत्कालीन समय में मन्दिर, भवन आदि पर चित्रों का पूर्णरूपेण विकास था –

मन्दिरावलिरेषात्र शंखपदमादिचित्रिता ।

विमाना इव देवानां भ्लाशन्ते लक्षवर्णमाः ।। 8/32

झांसी के विभिन्न मंदिरों तथा प्राचीन प्रासादो में प्राचीन चित्रकला की सुन्दर झांकिया आज भी दृष्टव्य होती है। लक्ष्मीबाई की वीरता और व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके चित्रों को जिन चित्रकारों ने बनाया उनमें प्रमुख चित्रकार सुखलाल ही थे। रघुनाथ राव तथा लक्ष्मी बाई के समय में कुछ मन्दिरों का निर्माण हुआ जिनमें देवी देवताओं की विशालतम् मूर्तियां है जो तत्कालीन मूर्तिमला सौन्दर्य की साक्षात् प्रतिमा है।

संगीत क्षेत्र का भी राजा गंगाधर राव के काल में अधिक विकास हुआ संगीत को उच्चशिखर पर पहुंचाने का श्रेय इन्हीं को ही है इनके दरवार में गीतज्ञों को यथोचित सम्मान प्रदान कर प्रोत्साहन तथा पुरस्कार दिया जाता था। सर्वसाधारण का संगीत होना सरलता पूर्वक समझ आ जाना ही बुन्देलखण्डी संगीत की विशेषता है

इस तरह राजा गंगाधर राव के काल में तथा रानी के समय में समस्त कलायें अपनी उन्मुक्त धारा में प्रवाहित होती थीं। राजा गंगाधर राव इन कलाओं के परम पोषक तथा विकासक थे। रानी ने भी इनके विकास में पूर्ण सहायक सिद्ध हुयीं। कला आदि के बिना वास्तव में मनुष्य पशु के समान ही होता है।

साहित्य संगीत कला विहीनः।

साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीनः।।

अतः तत्कालीन समाज बुन्देलखण्ड में इन समस्त कलाओं का पूर्ण विकास हुआ तथा वह चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुयीं।

तत्कालीन राजनैतिक दशा और झांसी राज्य :-

अंग्रेज भारत के व्यापार में होने वाले लाभ की बातें सुनकर भारत में प्रवेश करने का अवसर खोज रहे थें तब महारानी एलिजाबेथ की स्वीकृति से इण्डिया कम्पनी की स्थापना की गयी ।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माध्यम से अंग्रेजों का व्यापार करने के लिये भारत में आगमन हुआ तथा शनैः शनैः अंग्रेजों ने मुगल सम्राटों के सहयोग से व्यापार आरंभ कर दिया। दिया तथा कम्पनी के संचालकों ने भारत की राजनीतिक कमजोरी से लाभ उठाकर व्यापार के क्षेत्र से और अधिक बढ़ने का प्रयास किया। वे भारत पर राजनीतिक प्रमुखता स्थापित करने का विचार करने लगे। उनका यह सपना सच होने लगा जैसे–जैसे समय परिवर्तित होता गया अंग्रेजो का भारत की राजनीति में प्रभुत्व आरम्भ हो गया।

सम्पूर्ण भारत पर अंग्रेजों का आधिपत्य हो चुका था तथा बुन्देलखण्ड भी पूर्णरूपेण अंग्रेजों के अधिकार में पहुंच गया था।

अंग्रेजों ने अपनी कूटनीति से अनेक राज्यों को अपना मित्र बना लिया। अंग्रेजों की वित्तीय नीति से बुन्देलखण्ड में स्थिति को सुदृढ़ बनाने में अधिक सहयोग मिला। अंग्रेजो ने अपनी कूटनीति द्वारा अनेक रियासतों के अधिकार अपने हाथ में ले लिये तथा राजाओ को अपने चंगुल में कर लिया। राजाओं को इतना कमजोर कर दिया गया कि वे कम्पनी का विरोध करने का दुस्साहस नहीं कर सकते थे। रियासतों के राजाओं को राजा की पदवी दे उनके समस्त बाहरी कार्यों को अंग्रेजो ने अपने हांथ में ले लिया।

अंग्रेजो ने अवध, सिन्ध, पंजाब अनेक रियासतों को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। सन् 1804 के समय पंत प्रधान वाजीराव पेशवा के समय में शिवराम भाऊ झांसी के शासक थे और वह सूबेदार कहलाते थे। पेशबाई नष्ट हो चुकी थी तथा सूबेदार सशक्त थे। राजा अधिकतर लोलुपता का त्याग नहीं कर सकते थे। अतः आपसी झगड़े अपने चरम सीमा पर थे जिसका लाभ अंग्रेजों को मिला।

बुन्देलखण्ड में अनेक करों के माध्यम से अंग्रेजी सरकार ने अपनी आय को बढ़ाया। आयकर, सम्पत्ती कर आदि लगाये जाने लगे थे तथा इनमें माल गुजारी कर प्रमुख था। यह कर भारत में अत्यन्त प्राचीन है।

अंग्रेजो ने भारत देश की विविध राज शक्तियों के आपसी झगड़ो में हस्तक्षेप करके अपनी सत्ता स्थापित करना आरम्भ किया। भारत की राजनीतिक दुर्दशा से लाभ उठाकर अंग्रेजों ने भारत पर अपनी सत्ता को स्थापित किया ।

भारत के विविध राजाओं, नबाबों व मुगलों सूबेदारों के पारस्पिरिक झगड़ों का लाभ उठाकर अंग्रेजों ने भारत के अनेक प्रदेशों पर अठारहवीं सदीं के अन्त से पूर्व ही अपना शासन स्थापित कर लिया।

कम्पनी के राज्य का पूर्ण विस्तार हो चुका था भारत का ऐसा कोई राज्य नहीं था जहां अंग्रेजों का आधिपत्य न हो ये अंग्रेज व्यापारी से शासक बन चुके थे बुन्देलखण्ड अंग्रेजो के शोषण का शिकार होने लगा था। समस्त बुन्देलखण्ड पर अंग्रेजो का आधिपत्य था।[1]

अंग्रेज धीरे–2 सभी जगह अस्थिरता फैलाना चाहते थें। हमीरपुर जिले मे छोटी–2 रियासतें बचीं थीं उनमें भी अंग्रेजों ने अस्थिरता फैलाना आरम्भ किया। बचे हुये इन राज्यों में डलहौजी ने अपनी राज्य हड़पने की नीति (Doctrine of l ap s) से अंग्रेजी सत्ता के अधीन कर कम्पनी के राज्य में मिला लिया। कम्पनी के अनुमति के बिना कोई भी राज्य अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नही कर सकता था तथा अंग्रेजी सरकार की अनुमति के बिना गोद लेने का अधिकार भी उन्होने छीन लिया था। उसी नीति से उन्होने सतारा झांसी नागपुर अवध तथा अन्य छोटे–2 राज्यों को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया था। कर्नाटक तथा तंजौर के राजाओं की उपाधियाँ उनसे छीन ली गयी। पेशवा को मिलने वाली पेंशन से उन्हें वंचित कर दिया गया। निजाम से ऋण के चुकता के रूप में बरार ले लिया। इस प्रकार डलहौजी के शासन काल तक कम्पनी के साम्राज्य की सीमा पूर्ण हो चुकी थी।

सम्पूर्ण भारत देश अंग्रेजो के अधिकार में आ चुका था। सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड की राजनैतिक दशा में उथलपुथल मची हुयी थी।

अंग्रेजों का उद्देश्य बुन्देलखण्ड के वैभव शाली नगर कालपी को क्षति पहुचाना तथा उसे अपने आधीन करना था। जिसमें उन्हें सफलता प्राप्त हुयी। भोपाल के नबाव अंग्रेजी सेना के सहायक बन गये। कालिंजर के किलेदार को भी अपनी ओर कर लिया जिससे केन नदी किनारों से आगे जाने में अंग्रेजो

1. झां0च0 11/19

को सहायता मिली उन्होने सिंधिया को पराजित किया तथा 1839 में अंग्रेजो का मराठों से युद्ध और तत्पश्चात उनसे संधि हुयी।

बुन्देलों के आपसी झगड़ों के कारण अंग्रेजों का बुन्देलखण्ड पर आधिपत्य निश्चित था । युद्धों के कारण बुन्देल भूमि वीरों से वंचित हो गयी थी। मराठों की भी शक्ति क्षीण हो चुकी थी। वाजीराव पेशवा, होलकर आदि ने अंग्रेजों को उखाड़ फेकने का प्रयास किया किन्तु असफलता ही मिली।

इस समय तक बुन्देलखण्ड का अधिकांश भाग अंग्रेजों के आधिपत्य में आ गया था। बाजीराव द्वितीय पेंशवा, नागपुर के भोंसले, सागर के विनायक राव चांदोरकार आदि अंग्रेजो से पराजित हो चुके थे तथा इनकें राज्य अंग्रेजो द्वारा छीन लिये गये थे। 1802 में बाजीराव पेशवा ने अंग्रजों से संधि कर ली तथा पूना में अंग्रेजी रेजीडेण्ट रहने लगा।

अब बुन्देली राजाओं के पास अंग्रजों से सन्धि करने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं था अतः अंग्रेजों से बुन्देली राजाओं ने सन्धियाँ करना आरम्भ कर दिया ओरछा के राजा, छतरपुर के राजा, चरखारी के राजा, समथर, विजावर, जैतपुर, आदि के राजाओं ने अंग्रेजो से सन्धि कर ली । सन्1817 ई0 में पन्तप्रधान वाजीराव से अंग्रेजो की अंतिम संधि में पेशवा ने सम्पूर्ण ठोस एवं खोखले अधिकार ईष्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिये।

उन्नीसवी शताब्दी में बुन्देलखण्ड में आपसी मत भेद हो चुके थे। बुन्देलखण्ड के इस समय तक कई टुकड़े हो चुके थे। आपसी एकता नष्ट हो चुकी थी। संगठित ने हाने के कारण पारस्परिक विवादों से राज्य का प्रवन्ध उचित नहीं था और इन्ही परिस्थितियों का लाभ अंग्रेजो को मिला उन्होने बुन्देलखण्ड पर अपना अधिकार कर लिया। जालौन, अंग्रजो के अधिकार में था ही अब अंग्रेजो की आंखे झांसी पर टिकी हुयीं थी।

गंगाधर राव उस समय झांसी का राजा था क्योकि रामचन्द्रराव और अंग्रेजो की संधि के अनुसार झांसी के राज्य पर रामचन्द्र राव का अधिकार स्वीकार कर लिया गया था उन्हीं के उत्तराधिकारी के रूप में राजा गंगाधर राव का झांसीपर अधिकार था। राजा गंगाधर रांव झांसी की गद्दी पर आसीन थे और शासन की प्रबन्ध अंग्रेजों के द्वारा चलता था नगर का शासन ही राजा गंगाधर राव के हाथ था और समस्त राज्य का अधिकार अंग्रेजों के हांथों में था। अंग्रेजों कों बस उस अवसर की प्रतीक्षा थी जब झांसी राज्य को भी वह कम्पनी राज्य मे मिला लेंगे। झांसी में बड़ी हिन्दू रियासत थी।

राजा गंगाधर राव नाटकों में विशेष रूचि रखते थे। उतः उनका ध्यान राज्य की ओर कम ही था उनके लिये यह पर्याप्त था कि झांसी की गद्दी पर उनका अधिकार है।

झांसी के राजा गंगाधर राव निःसंतान थे अतः अंग्रेजो के लिये झांसी का राज्य हड़पने का यह सुअवसर था। राजा गंगाधर राव ने दामोदर नामक पुत्र को गोद लिया राजा गंगाधर राव की मृत्यु के उपरांत गवर्नर जनरल डलहौजी की नीति दयावसान का सिद्धान्त (Doctrine of l.aps) के अनुसार दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी स्वीकार नहीं किया जा सकता था। डलहौजी ने हिन्दू धर्म शास्त्रों के अनुसार औरस पुत्र के अभाव में दत्तक पुत्र को उत्तराधिकारी मानने की परवाह नहीं की क्योंकि उसके लिये राज्य हड़पने की यही उचित नीति थी। अतः अवसर आते ही उसने अपनी इस नीति के सहारे झांसी राज्य को अपने राज्य में मिला लिया। झांसी के अतिरिक्त उसने इसी नीति के सहारे सतारा नागपुर और सम्भलपुर की रियासतें भी औरस पुत्र के अभाव में अंग्रेजी राज्य में मिला लीं और उन्हें गोद लेने की अनुमति प्रदान नही की गयी । झांसी प्रदेश का शासन मेजर एलिस के हाथों सौपा गया। रानी लक्ष्मीबाई को पेंशन देकर कंपनी सरकार नें झांसी राज्य को अपने अधिकार में ले लिया। अंग्रेजों की इस नीति से बुन्देलखण्ड एवं झांसी के वातावरण में उथल–पुथल मच गयी। पेशवा वाजीराव के दत्तक पुत्र नाना साहब की पेंशन भी बंद कर दी गयी। इसी प्रकार कर्नाटक और तंजौर के राजाओं की उपाधियों भी जब्त कर ली गयी।

अनेक शासन सम्बन्धी परिवर्तन किये गये। नये विजितं सूबों का प्रबन्ध विशेष प्रकार से किया गया। बचत और वित्त विभाग का नये ढंग से प्रबन्ध किया गया। झांसी राज्य की जनता का शोषण होने लगा। वहां की सम्पदा और लोगों के श्रम का उपयोग युद्ध की पूर्ति के लिये होता रहा।

झांसी राज्य के सामाजिक और आर्थिक जीवन पर भी अंग्रेजो के शोषण का प्रभाव पड़ा।

अंग्रेजों ने भारतीय सस्कृति को तुच्छ समझा भारतीय को छोटे–2 पद पर ही रखा वह नहीं चाहते थे कि भारतीय उच्च पद पर पहुंचे । बड़ी रियासतों को सबक सिखाने के लिये छोटी–2 रियासतों पर अत्याचार करना यह सब अंग्रेजो की प्रकृति थी।

अंग्रेज अपनी सफल कूटनीति, छल, छन्द, धूर्तता पूर्ण चालों तथा देश की अकर्मण्यता निष्क्रियता तथा फूट के फलस्वरूप देश के भाग्य विधाता बन चुके थे। जो हर तरह से झांसी की जनता का भी शोषण कर रहे थे। आर्थिक दृष्टि से देश बिल्कुल खोखला होता जा रहा था। बाह्य रूप से अंग्रेज जनता

के शुभ चिन्तक बने हुये थे, पर आन्तरिक रूप से आर्थिक शोषण करने में तल्लीन थे।

अभिमानी अंग्रेजों में प्रभुता स्थापित करते ही अगणित राजकुलो को पददलित किया रियासतें अपने राज्य में मिलाने लगे। उद्योग धन्धों को नष्ट कर भारतवासियों की जीविका छीनने लगे। जमीदारों की जमीदारियां छिन गयी।

अंग्रेज नीतिज्ञ यह भली भांति जानते थे कि किसी जाति को अधिक समय पराधीन रखने के लिये उसमें किसी प्रकार का राष्ट्रीय अभिमान या स्व श्रेष्ठता अथवा अपने प्राचीनत्व की आन का विचार नहीं रहने देना चाहिये। उस समय भारत वासियों को अपने धर्मपर अधिक अभिमान था यह उनकी प्रमुख आन थी अतः उन्हें धर्मच्युत कर देना उनके राष्ट्रीय अभिमान ओर उमंगों को दीर्ध काल के लिये अन्त कर देना था। अनन्त काल तक उन्हें विदेशी राज्य के भक्त और उसकी विनीत प्रजा बनाये रखने का यहीं सबसे उत्तम उपाय हो सकता था।

अतः ईसाई मत प्रचार को सहायता ओर उत्तेजना दी जाने लगी न्यायालयों में अंग्रेज सरकार हिन्दू या मुस्लिम धर्मशास्त्रों और धार्मिक रिवाजो को कोई स्थान न दिया जाने लगा। हिन्दू एवं मुसलमानों के धार्मिक कृत्यों को बंद कर दिया गया।

भारतीय सिपाहियों के साथ भी कम्पनी अफसरों का व्यवहार अच्छा न रहा। वेतन से मकान आदि की परेशानी रहती थी। अंग्रेज हिन्दू सिपाहियों को टीका लगाकर नही आने देते थे। इस प्रकार हिन्दू सिपाहियों में रोष पैदा हो गया था। चर्बी वाले कारतूस को छूने से इनकार कर देने पर सिपाहियों का कोर्ट मार्शल हुआ। आज्ञा न मानने के अपराध में दस दस वर्ष का घोर कारावास तथा वर्दियाँ उतरवाली गयी।

राजाओं तथा जनता पर अंग्रेजों के इन अत्याचारों से कुठाराघात हुआ। यह अत्याचार वह सहन नहीं कर सकते थे अतः झांसी सहित बुन्देलखण्ड के अन्य भागों में वातावरण विद्रोही और क्रांतिपूर्ण हा गया इस नीति से झांसी में सर्वत्र घोर असन्तोष फैल गया। जिसका कुपरिणाम कम्पनी को सन् 1857 ई० में भोगना पड़ा। झांसी में बड़ी हिन्दू रियासत थी।

सभी सैनिक तथा जनता बौखला गयी और विद्रोह कर उठी सर्व प्रथम दमदम की छावनी , वौरकपुर मेरठ, कानपुर आदि छावनियों के सैनिक विद्रोह कर उठे। झाँसी को विद्रोह का प्रमुख स्थल माना जाता हैं। वहाँ के सिपाही ने भी रानी की आज्ञा से पहले ही विद्रोह कर दिया।

इस तरह जब विदेशियों की पक्की कूट नीति और सफल सैनिक संगठन ने भारतियों में फूट अ.दूरदर्शिता तथा स्वार्थपरता पर अट्टाहस किया और उन्हें पराधीनता के पाश में वांध दिया तब रानी में प्रतिशोध की भावना जाग उठी।

झांसी राज्य –

झांसी राज्य उत्तर प्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी कोने पर 24.11 और 25.57 और 78.10 तथा 79.25 के अन्दर स्थित है। यह बुन्देलखण्ड में धसान नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। (धसान को दशाण भी कहा गया है यह बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध नदी है तथा यह अपने जल से बुन्देलखण्ड के भू भाग को हरा भरा बनाती है) झांसी के चारो ओर ग्वालियर समथर राज्य स्थित है दक्षिण में ओरछा राज्य स्थित है (झांसी दतिया और टेहरी राज्य झांसी के क्रमशः 6 मील तथा डेढ़ मील दूर है जब उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश में विभाजित नहीं था तो उस समय झांसी संयुक्त प्रांत (Central provins) के अन्तर्गत आता था। 1903 में जब संयुक्त प्रान्त टूटकर उत्तर प्रदेश तथा मध्यप्रदेश निर्माण हुआ तब उस समय झांसी का कुल क्षेत्रफल 5806 वर्ग कि0 मी0 था जबकि इस जनपद के अन्तर्गत वन का कुल क्षेत्रफल 304.37 वर्ग कि0मी0 था।[1] झांसी राज्य मराठों का था तथा औरछा पर बुन्देलो का राज्य था। सागर, गढ़कोटा, शाहगढ़, मदनपुर, मड़ावरा आदि झांसी राज्य के पड़े–पड़े नगर गढ़ एवं गांव थे। झांसी के पूर्वीय परगनों में पछौर, कुरैरा, मऊ, पंडवाहा, विजयगढ़ गरौठा आदि आते थे। पूर्वी तहसील मऊ में एक छोटा गढ़ था।

उत्तर की ओर उन्नत पहाड़ पर झांसी का प्रसिद्ध किला था। प्रकृति की शक्ति और मनुष्य के शिल्प दोनों ने मिलकर झांसी के किले को सबल बनाया था। वह ऊँचे पहाड़ पर था चारों ओर मजबूत दीवारे थीं। किले के पश्चिम और दक्षिण को छोड़कर बाकी और दिशाओं में झांसी नगर वसा था। उस समय झांसी की परिधि साढ़े चार मील की थी। चारों ओर अठारह से तीस फुट तक ऊँची दीवारे थीं। फसलो में गोलियां चलाने के लिये छेद और तोप रखने के भी स्थान थे।

शहर के महल के ठीक सामने विशाल राजकीय पुस्तकालय था जिसमें वेद, उपनिषद, आरण्यक आदि महान ग्रंथ थे। झांसी राज्य सभी क्षेत्रों में उन्नत था। इसीलिये अंग्रेजों के चक्षु इस पर लगे हुये थे।

रानी का प्रभाव –

महारानी लक्ष्मीबाई ऐसे पवित्र कार्य में उद्यत हुयीं थी जिसमें मरना भी श्रेयस्कर था इस भावना से युक्त रानी का प्रभाव समस्त जन समूह पर अपनी अमिट छाप छोड़ने में पूर्ण रूपेण समर्थ था।

झांसी का समूचा जन समूह क्रांति का वीज अंकुरित करने वाली वीरांगना महारानी लक्ष्मीबाई से प्रभावित हुये बिना न रह सका। ऐसी रानी के लिये समूचा जनसमूह झांसी के समस्त स्त्री पुरूष उन पर अपने प्राण न्यौछावर करने हेतु सन्नद्ध थे। उन्होने अपने वाह्य सौन्दर्य से ही नहीं अपितु आन्तरिक सौन्दर्य से सभी को प्रभावित किया था। उनका लोगों के प्रति अपूर्व स्नेह और आत्मीय भाव सदैव रहता था। वह साधारण नारी नहीं थी वह समस्त शक्तियों को अवतार थी।

ज्योतिषी संभूय समानितानि केन्द्रे महाशक्ति युतान्यभूवन्।

देशो यथाऽयं जडतारतोऽभवत् दीपाधृत स्नेह इव प्रशाम्यन्।। 1/25 झां0च0

झांसी के समस्त निवासी तो उनके भक्त थे ही साथ ही वहां का प्रत्येक निवासी जो कि बाहर निकल गया था वह भी झांसी के लिये अपना सर्वस्व वलिदान करने के लिये उद्यत थे। लोग उन्हें देवी का अवतार मानते थे तथा साक्षात् दुर्गा, गौरी का रूप समझकर उनके आगे नतमस्तक रहते थे। तथा उन पर लोगो की अपूर्व श्रद्धा थी। काव्य के आरम्भ में ही कवि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त ने शक्ति का लक्ष्मीबाई के रूप में अवतरित होना बतलाया है

तान्येव लक्ष्मीरिति जन्म लेभे, लक्ष्म्याश्च चण्डयाश्च विमिश्रितं या।

युद्धे मुनिप्राणवसूडुपारूय ईशाब्दस्ते प्रसिता बभूव ।।

अपिच

तेजस्तदोत्तममवाप्य महेश्वरीतो दुर्गा बभूव महिला महिला नगर्याम् ।

देशं सुदूरमपि विश्रुतयः परापुर्लक्ष्मया अनुत्तमविकासपरा अमुष्याः ।।

महारानी लक्ष्मीबाई जिन पर राज्य करती थी वे हृदय से उनके अनुगत थे वह अपने सैनिकों की युद्ध के समय घायलावस्था में पुत्रवत् उनकी सेवा करतीं थी, तथा स्नेहमयी माता की भांति उनके सिर पर हांथ रखकर आंसुओं से भरी आंखो से उन्हे देखाती थी। दयामयी माता को देखकर लोग अपना काष्ट भूल जाते थे। तथा उनके इस दयामयीस्नेहमय व्यवहार से प्रजा उन्हें माता कहतीं थी।

रानी की भाषा भी उन्ही की भांति प्रभाव पूर्ण थी। उनके वीर वचनो से स्त्रियों ओर बच्चों तक

में वीरता का भाव आ जाता था।

यह रानी का प्रभाव ही था जिसने राजा गंगाधर की कठोर प्रकृति में परिवर्तन कर उन्हें नम्र हृदय वाला बना दिया था। राजा का स्वभाव विवाह से पूर्व अत्यन्त कठोर था किन्तु रानी के प्रभाव से उनकी प्रकृति भी परिवर्तन की ओर चली और बदली थी। राजा से जनता भयभीत रहती थी किन्तु रानी पर मुग्ध थी। जब राजा के कठोर शासन में कुछ दया का आभास होता तो प्रजा रानी के प्रभाव का स्पष्टरूपेण आभास कर लेती थी।

रानी का प्रभाव भारतीयों पर ही नहीं अपितु अंग्रेजी सेना पर भी पड़ा जो रानी की प्रशंसा किये विना न रह सके । रानी का वहां के जन, मन, धर्म, कर्म आदि सभी पर प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। अंग्रेजी सेनापति ने लिखा है –

" रानी अपने वंश के गौरव से गौरवान्वित थी सैनिकों और नौकरों पर उनकी विशेष उदारता थी विघ्न और विपत्तियों मे वह सदा दृढ़ थी। इन गुणों के कारण वह हमारे समक्ष शक्तिशालिनी शत्रू थीं। सर जनरल रोज ने भी लिखा है –

"She was the best and bravest of them all"

इस तरह रानी का प्रभाव मात्र भारतीय सैनिकों या भारत निवासी पर ही नहीं अपितु वह अंग्रेजों के मानस पटल पर भी अपनी वीरता अपने चातुर्य एवं रण कुशलता एवं देशभक्ति की अमिट छाप छोड़ गयी।

इसके साथ ही उन्होंने सम्पूर्ण क्रान्ति को प्रभावित किया उन्होंने ही क्रांति का बीज प्रस्फुटित कर देश की ओर सभी का ध्यान आकृष्ट कर स्वतन्त्रता हेतु उत्साहित किया। इस तरह उनका प्रभाव मानस पटल पर कुछ इस तरह पड़ा कि भारत का परतंत्र मानव स्वतंत्रता हेतु तत्पर हो उठा और उसने इसे प्राप्त करने के पश्चात ही दम लिया।
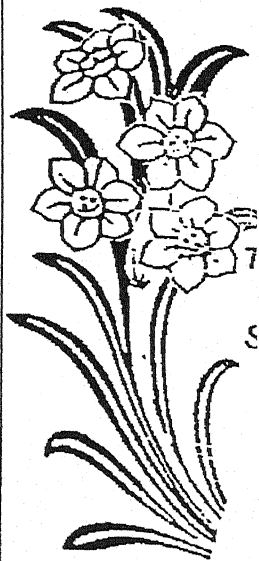
नवम अध्याय

उपसंहार शोध निष्कर्षों का संक्षिप्त निरूपण

"झांसीश्वरीचरितम् का साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध-ययन" के शोध निष्कर्षो का मूल्यांकन :-

विगत अध्यायों में झंसीश्वरीचरितम् के साहित्यिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचनात्मक अध्ययन का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया और उस अध्ययन के फलस्वरूप जो निष्कर्ष प्राप्त किये गये है तत्तत् स्थलों पर समीक्षात्मक रूप में प्रस्तुत किये जा चुके है। अब यहां पुनः संक्षेप में उन पर दृष्टिपात करना अनुचित न होगा। विगत अध्यायों में दिये निष्कर्षो का मूल्यांकन इस प्रकार है :-

संस्कृत साहित्य की महाकाव्य परम्परा में प्राचीन महाकाव्य अपना विशेष महत्व रखते है। रामायण एवं महाभारत से परिगृहीत उक्त महाकाव्य परम्परा अद्यावधि प्रवाह मान दृष्टिगोचर हो रही है। उक्त परम्परा में प्राचीन महाकाव्य से लेकर अर्वाचीन महाकाव्य भी ऐतिहासिक तथा काव्य शास्त्रीय विशेषताओं से युक्त है।

प्राचीन महाकाव्यों के पश्चात् अर्वाचीन महाकाव्यों शिवराज्योदयम्, छत्रपतिचरितम्, श्रीजवाहरज्योतिर्महाकाव्यम् मालवीयचरितम्, गांधीचरितम्, स्वराजविजयम्, गांधीगौरवम्, गान्धिविजयम्, भारतीस्वयवरम्, सुभाषचरितम्, मानवंशमहाकाव्यम्, कच्छवंशम्, जयवंश महाकाव्यम्, स्वामीविवेकानन्दचरितम्, गुरूनानकदेवचरितम्, लेनिनामुतम्, मौर्यचन्द्रोयम्, चालुक्य राज्य अययऽवंशचरितम्, आदि का अध्ययन करने के पश्चात निष्कर्ष निकला कि यह सम्पूर्ण महाकाव्य वर्ण्यविषय, रसाभिव्यंजना, प्रकृति चित्रण भाषा शैली के साथ–साथ रस, छंद अलंकार आदि समस्त दृष्टियों से उत्कृष्ट है तथा इनमें ऐतिहासिक घटनाओं का प्रमाणिक एवं तथ्य परक वर्णन मिलता है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि उक्त सभी ऐतिहासिक महाकाव्य ऐतिहासिकता तथा समस्त कलापक्षीय विशेषताओं से समन्वित है इन महाकाव्यों का अध्ययन करने के पश्चात, डा० सुबोध चन्द्र पन्त के महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् महाकाव्य के अध्ययन के पश्चात जो निष्कर्ष निकला वह इस प्रकार है :-

कलापक्ष एवं भावपक्ष दोनों दृष्टियों से झांसीश्वरीचरितम् संस्कृत काव्य साहित्य की अनुपम निधि हैं अनेक ऐतिहासिक महाकाव्यों में अब तक पुरूष पात्र को लेकर ही वीर रस प्रधान महाकाव्य लिखें गये लेकिन, नारी पात्र को लेकर वीररसप्रधान यह प्रथम महाकाव्य लिखा गया है। इस प्रकार अन्य महाकाव्यों की अपेक्षा यह

संस्कृत काव्य धारा की अनुपम निधि बन गया है। इस प्रकार कुछ अद्वितीय विशेषताओं से परिवेष्टित होने के कारण यह महाकाव्य उच्चकोटि का बन पड़ा है। समस्त महाकाव्यों के आद्योपान्त अनुशीलन से यह कहना अनुचित नहीं है कि सुगठित कथावस्तु की योजनामें ओजस्वी वातावरण की अवतारणा में वीररस की अभिव्यंजना में तथा वैयक्तिकता से मण्डित पात्रों के चित्रण में झांसीश्वरीचरितम एक उच्चतम महाकाव्य है। काव्योचित गरिमा से आपका काव्य महाकाव्य परम्परा में ऐतिहासिक महत्व रखता है।

डा0 सुबोधचन्द्र पन्त के जीवन परिचय व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा भाषा शैली के साहित्यिक सौष्ठव के अध्ययन से ज्ञात होता है कि डा0 सुबोध चन्द्र पन्त का व्यक्तित्व महाकवि के रूप में संस्कृत साहित्य जगत पर एक अमिट छाप छोड़ता है। उन्होंने अपनी भाषा शैली को छंदानुकूल, रसानुकूल अलंकारों तथा प्रसंगानुकूल ही प्रस्तुत किया है। आपकी भाषा शैली कहीं–कहीं क्लिष्ट होते हुये भी सरल, सरस तथ प्रवाहमयी है। भाषा की सरलता और भावों की उत्कृष्टता का समन्वय ही कवि की प्रमुख विशेषता है। आपका महाकाव्य भाषा शैली से अलंकृत रस पेशलता से युक्त मानव मन में सुख का संचार कर देता है। आपकी भाषा शैली की प्रशंसा जी0सी0 त्रिपाठी ने इन शब्दों में की है।

" The language of the work is chaste and polished. Corresponding to its central theme; it is vigours and forceful in nature."

प्रो0 चण्डिका प्रसाद शुक्ल ने इस महाकाव्य की भाषा की प्रशंसा इन शब्दों में की है – 'भाषा गुणमयी अलंकृत तथा भावपूर्ण है। इसका रचयिता सर्वथा साधुवाद का पात्र है।''

प्रो0 बदरीनाथ शुक्ल के अनुसार– पुस्तक नितान्त मौलिक है। तथा उत्कृष्ट रचनाओं में स्थान पाने योग्य है। विषय वस्तु, भाषा और शैली तीनों दृष्टि से पुस्तक उत्तम है।

इस प्रकार आपकी भाषा का साहित्यिक सौष्ठव दर्शनीय, अविस्मरणीय एवं हृदय ग्राही है। भाषा की सरलता पदों की सुन्दरता, समासों की समान रूपेण प्रयोग, वाण वन्धनों की विकटता सब मिलकर कवि के भावों से अनुस्पूत होकर आपकी काव्य कला में चमत्कार प्रस्तुत करते है।

झांसीश्वरी चरितम् की कथावस्तु एवं महाकाव्य के रचना विधान की दृष्टि से उसका पल्लवन नायिका एवं अन्य पात्रों का चित्रांकन ऐतिहासिक की दृष्टि से नायिका सहित पात्रों के

चित्रण में कथावस्तु की समीक्षा इसका अध्ययन अद्योपान्त करने से ज्ञात होता है। कि झांसीश्वरी चरितम् एक विकसित कोटि का काव्य है जिसमें कथावस्तु का स्वाभाविक विकास हुआ है। विकसित कोटि का काव्य है जिसमें कथावस्तु का स्वाभाविक विकास हुआ है। महाकाव्य के लिये जो आदर्श संस्कृत के विद्वानों ने प्रस्तुत किये है वे सब इस महाकाव्य में विद्यमान है। इसकी कथावस्तु ऐतिहासिक है। वीररस प्रधान इस महाकाव्य की नायिका इतिहास प्रसिद्ध महारानी लक्ष्मीबाई है काव्य महान बनता है कथावस्तु की महानता से और कथावस्तु की महानता निर्भर करती है। चरित्रों की महानता पर। झांसीश्वरीचरितम् एक ऐतिहासिक महाकाव्य है। तथापि महाकवि पन्त ने अपने महाकाव्य में कथावस्तु के साथ ही साथ चरित्र चित्रण कुशलता का सम्यक परिचय दिया है। इस महाकाव्य में काव्योचित पात्रों की अवतारणा हुयी है। महाकाव्य में वर्णित सभी पात्र ऐतिहासिक है। सर्वप्रथम इस महाकाव्य की नायिका भारतीय ऐतिहासिक है। सर्वहप्रथम इस महाकाव्य की नायिका भारतीय ऐतिहासिक क्रान्ति की जन्मदात्री वीरांगना लक्ष्मीबाई है जो कि इतिहास प्रसिद्ध है तथा इनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद है। रानी के चरित्र एवं व्यक्तित्व के विषय में लेखक सुन्दर लाल ने लिखा है। – "निःसन्देह महारानी लक्ष्मीबाई का समस्त जीवन जितना पवित्र और निर्मल तथा निष्कलंक था उनकी मृत्यु उतनी ही वीरोचित थी, संसार के इतिहास में कदाचित विरले ही उदाहरण इस तरह की स्त्रियों के मिलेंगें जिन्होने अपनी इतनी छोटी आयु में इस प्रकार पवित्र जीवन व्यतीत करने के बाद लक्ष्मीबाई की सी अलौकिक वीरता और असाधारण युद्ध किया हो अथवा इस प्रकार अपने अधिकार के लिये लड़ते लड़ते प्राण दिये हो।

रानी लक्ष्मीबाई की सेविकाओं तथा सखियों के रूप में वर्णित सुंदर–मुंदर काशी की ऐतिहासिक युद्ध में रानी के सहयोग तथा वलिदान की गाथा समस्त ऐतिहासिक युद्ध में रानी के सहयोग तथा बलिदान की गाथा समस्त ऐतिहासिक ग्रंथों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुये है। इनके अतिरिक्त मोतीबाई, जूही, तात्याटोपे, नाना साहब, रावसाहब, गुलाम गौस खां, खुदावख्श रामचन्द्र देशमुख इन सभी की ऐतिहासिकता की पुष्टि झांसी की रानी (पारसनीस कृत) झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बुन्देलखन्ड का इतिहास, स्वातान्त्रय समर, गदर का इतिहास आदि अनेक ऐतिहासिक ग्रंथो से प्रमाणित होती है।

प्रतिनायिको में सरह्यूरोज, प्रधान सेनापति सर कॉलिन कैम्पवेल, लार्ड कैनिंग, विग्रेडियर स्मिथ, वॉकर आदि के नाम भी ऐतिहासिक ग्रंथों में वर्णित है तथा ऐतिहासिक पात्रों में उल्लेखित

है।

इस प्रकार अनेक ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर महाकाव्य में वर्णित पात्रों के ऐतिहासिकता प्रमाणित होती है। पन्त ने इन पात्रों को अपनी कल्पना के मणिकंचन योग से सजाया संवारा अवश्य है पर इससे इनकी ऐतिहासिकता पर कोई आंच नही आ पायी है।

अस्तु झांसीश्वरीचरितम् ऐसा महाकाव्य है जिस की ऐतिहासिकता अक्षुण्ण हैं इसमें महाकाव्य विषयक, परम्परागत लक्षणों का सामान्यवतया निर्वाह दृष्टिगोचर होता है।

अस्तु झांसीश्वरीचरितम् के साहित्यिक सौष्ठव के अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है। कि डा0 सुबोधचन्द्र पन्त ने महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् को कला तत्व एवं भाव तत्व दोनों दिशाओं में विकासशील बनाने का समीचीन प्रयास किया है।

झांसीश्वरीचरितम् काव्य कला की उत्कृष्टता और भावों के औदात्य का उदाहारण है। वीररसानुकूल जिस शब्द शैली का चमत्कार किया जाना चाहिये वह पन्त ने अपनी शैली में सफलता पूर्वक किया है जो कि शौर्य तथा भावों का पोषण है। युद्ध वर्णन रानी की वीरता – आदि वर्णन ओजस्विता और विराट चित्र संजीवता के द्योतक है। आपका प्रकृति चित्रण भी अत्यन्त सजीव एवं अनूठा बन पड़ा है। आपने अपने वर्णनों के माध्यम से पाठकों के हृदय को आत्मविभोर करने का सफल प्रयास किया है। आपने अपने काव्य में उद्दीपन, आलम्बन, मानवीकरण, कोमल, कठोर प्रकृति के अनेक रूपों का स्वाभाविक अंकन किया है। प्रसंसानुकूल रसों का उद्रोक कर काव्य को रसाप्लावित कर दिया है। आपने भाषा, छंद, गुण, अलंकार आदि काव्य के आधायक तत्वों से अपने काव्य को परिपुष्ट किया है। अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है। कि महाकाव्य झांसीश्वरीचरितम् में पन्त की संशक्त अभिव्यंजना कौशल के दर्शन होते है। काव्य के समस्त उपकरणों में आपने कुशलता दिखलाई है केवल कुशलता ही नहीं वरन कितने कथनों पर तो आपकी मौलिकता के दर्शन होते है। आपकी मौलिकता केवल मौलिकता प्रस्तुत करने के लिये ही नहीं अपितु अत्यन्त सहज स्वाभाविक है।

पंचम अध्याय झांसीश्वरीचरितम् पर पूर्ववर्ती रचनाओं का प्रभाव मौलिकता एवं अनुहरण का अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकलता है कि डा0 सुबोधचन्द्र पन्त के महाकाव्य पर पूर्ववर्ती महाकाव्यों कुमार संभव, रघुवंश, मेघदूत, बुद्ध चरित्पुराण, वेद, मनुस्मृति, रामायण, महाभारत, आदि काव्यों का प्रभाव दृष्टि गोचर होता है। महाभारत की तो मानो यह महाकाव्य अनुच्छाया ही है। किन्तु काल

परिवर्तन के कारण आपकी रचना में आपकी मौलिकता केवल मौलिकता प्रस्तुत करने के लिये नहीं अपितु अत्यन्त सहज स्वाभाविक है।

झांसीश्वरी मे वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं के तथा झांसी राज्य का स्वरूप रानी लक्ष्मीबाई का राज्यरोहण उनका प्रतिशोध गतिशीलता एवं अंग्रेजो के साथ हुयी मुठभेड़ एवं उनकी वीरगति आदि के अद्योपान्त अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि महाकवि पंत ने इसमें जिन घटनाओं का वर्णन किया है वे अनेक ऐतिहासिक ग्रंथो से मेल खाती है। झांसीश्वरीचरितम् में घटनाओं का सूक्ष्म तथा क्रमबद्ध वर्णन किया गया है। मुख्य घटनाओं की तिथियॉ भी सूचित की गयी है। हां कहीं कहीं कवि ने अपने चरित्र नायक का अतिरंजक चित्रण अवश्य किया है। किंतु इससे इन घटनाओं पर किसी भी प्रकार की कोई आंच नही आ पायी है। घटनाओं का यथाक्रम विवरण होने तथा विभिन्न क्रांतियों का सजीव वर्णन है।

इन प्रमुख घटनाओं के साथ ही कवि ने रानी के राज्यारोहण तथा राज्य के स्वरूप का संजीव चित्रण करते हुये उनके अंदर धधकती प्रतिशोध की ज्वाला को अति वीर वाक्यों के साथ उभारा है। वह अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर अपना प्रतिशोध अंग्रेजो के समूल नष्ट की प्रतिज्ञा के माध्यम से व्यक्त करती है।

इस क्रांति के बीज को अंतिम रूप देने में रानी को अंग्रेजों से अनेक स्थलों पर मुठभेड़ करनी पड़ी तथा इन मुठभेड़ों में उन्होने जिस वीरता साहस कौशल एवं देशभक्ति का परिचय दिया उन सबका वर्णन महाकवि डा0 सुबोधचन्द्र पन्त ने अत्यधिक सजीव तथा क्रमबद्ध किया है। इन मुठभेड़ों में अंग्रेजों से जब ग्वालियर युद्ध में रानी का संग्राम होता है। तथा मुठभेड़ होती है तो इस समय युद्ध के अति भयावह चित्र कवि द्वारा खीचें गये है। तथा रानी की मृत्यु का कवि ने अति सजीव एवं मार्मिक चित्रण किया है इन समस्त विवरणों के साथ कवि किसी तरह का अतिरिक्त या अनुपयुक्त चमत्कार न दिखलाते हुये प्रसंगानुसार एवं वर्णनानुसार अपनी काव्य कला का चातुर्य दिखलाये हुये अपने महाकवि रूप को सबके समक्ष प्रस्तुत करने में पूर्ण सफल हुआ है।

घटनाओं की तिथियों तथा स्थलों की पुष्टि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, पारसनीस कृत झांसी की रानी, बुन्देलखण्ड का इतिहास, गदर का इतिहास, स्वातान्त्रय समर आदि ऐतिहासिक ग्रंथो से होती है।

इस प्रकार झांसीश्वरी चरितम् के सैन्य विज्ञान के आलोचनात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष

निकलता है कि रानी वीरता की प्रतिमूर्ति थी तथा वह स्वयं शत्रु पक्ष की वीरता उनकी शक्ति आदि का ज्ञान रखती थी। वह जहां जाती वहां चारों ओर का अति कुशलता से निरीक्षण करती थी। वह अपनी सेना के प्रत्येक अंग को बलबान बनाती थीं क्योंकि वह नही चाहती थी कि उनकी सेना का कोई भी अंग निर्बल हो। व्यूह रचना और संचालन तथा संगठन के कार्य में वह कुशल थी किन्तु उनकी सेना में अनुशासन की कमी थी शायद इसी कारण उन्हें विभिन्न स्थलों पर इतनी रण कुशल होने पर भी पराजय का मुंह देखना पड़ा। रानी की युद्ध प्रियता तथा रण कौशल के कारण समस्त सैनिक उनसे स्वतः प्रसन्न थे। उन्होने सैन्य संगठन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं आश्चर्यजनक कार्य स्त्री सेना बनाकर किया। उन्होने स्त्रियों में अदम्य उत्साह भर दिया था। वह एक ओर शांति बनाये रखती दूसरी ओर सेना का उत्साह कम नहीं होने देती थी। एक ओर भूखी सिंहनी की तरह हमला करती दूसरी ओर माता की तरह अपनो को स्नेह करती है।

सैन्य उपकरणों आदि के अध्ययन तथा सेना के प्रमुख अंगो के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस सेना के प्रमुख अंग तीन ही थे । अश्वसेना, पैदलसेना, तोपखाना वैसे चतुरंगिणी सेना का परिचय हर जगह मिलता है। चतुरंगिनी सेना में उपर्युक्त तीन अंगो के साथ–साथ गज सेना का भी अति महत्व होता है लेकिन उसमें अश्वसेना प्रमुख थी गजसेना की कमी थी तथा पैदल सेना और तोपखाना भी प्रमुख स्थान रखते थे। सैन्य उपकरणों में तलवार, छुरा, तोप जिसमें शतघ्नी, धनगर्जन कड़कबिजली, भुशुण्डी आदि प्रमुख उपकरण थे इनके साथ–साथ भाले का भी अति महत्व था रानी ने स्वयं तीर, बंदूक, छुरी विछुआ रैकला इत्यादि में पहले दर्जे की श्रेष्ठता अमीरखां से प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त शेल गोले (जो भीतर से पोले होते है जहां अन्दर लोहे के चाकू छुरी नुमा चीजें भरी होती है) गिरते ही ये फूटते है और उनके अन्दर से हथियार इधर उधर के जीवों का प्राण संहार करते है। सैन्य शिविर की भी अधिक महत्व था। इनमें सैनिकों के उपयोगी साधन समाहित रहते थे तथा धायल होने पर सैनिकों के आराम उपयोग संबंधी वस्तुयें हो सकती थी।

इन सब का अध्ययन करने से यौद्धिक ज्ञान का परिचय मिलता है। युद्ध में कई प्रकार के अस्त्रशस्त्र का वर्णन मिलता है। जो कवि के यथेष्ट यौद्धिक ज्ञान की पुष्टि का प्रमाण है। महाकवि को तोप बन्दूक आदि आग्नेयास्त्रों का विशेष ज्ञान रहा है। अन्य महत्व पूर्ण आयुधों में खड़ग, शतघ्नी, छुरा आदि उल्लेखनीय है। कवि रक्षात्मक एवं आक्रामक अस्त्रशस्त्रों से पूर्ण परिचित प्रतीत होता है। वैसे शरीर रक्षा के लिये यौद्धाओं के कवच शिरस्त्राण आदि से भी वे अनभिज्ञ न थे।

झांसीश्वरीचरितम् का सामाजिक सांस्कृतिक एवं राजनैतिक दृष्टि से अध्ययन करने पर निष्कर्ष निकलता है। कि तत्कालीन समाज में सभ्यता संस्कृति तथा कलाओं का पूर्ण विकास था। जब भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा धर्म पर अंग्रेजों ने कुठाराधात किया तब यह असहनीय हो गया और झांसी राज्य विद्रोह कर उठा। इससे यह ज्ञात होता है कि लोग उस समय धर्म आदि में ओत प्रोत थे। ब्राह्मणों का स्थान उस समय ऊँचा था। लेकिन रानी लक्ष्मीबाई ने साम्प्रदायिकता का प्रचार किया उनका सेना में मुस्लिम, पठान, भंगी आदि सभी जाति के लोग थे। राजा गंगाधर राव कला प्रेमी थे अतः उन्होंने इस नाट्य शाला का निर्माण किया, एक विशाल पुस्तकालय बनबाया जिसमें समस्त धार्मिक ग्रंथ एकत्रित किये गये है। इससे उस समय साहित्य में रूचि का परिचय मिलता है। तात्कालीन समाज में लोक कलाओं में नृत्य, बाद्य संगीत आदि कलायें खूब प्रचलित थे। राजा गंगाधर राव के पश्चात् महारानी लक्ष्मी बाई भी इन कलाओं की पोषक हुयीं। शस्त्र अस्त्र विद्या का अभ्यास भी प्रचलित था स्त्रियां भी तलवार, मलखम्भ, अश्वारोहण, तीर, बन्दूक आदि चलाने की कलाओं में निपुण थीं। स्त्रियां पतिव्रता हुआ करती थी। विवाहोत्सव, जन्मोत्सव आदि धूमधाम से मनाये जाते थे। तत्कालीन लोग धन धान्य से सम्पन्न थे। नागरिक जीवन बड़ा ही भव्य और समृद्ध था। उस युग में धार्मिक भावना का मानव मन में अति संचार हुआ था। उस समय अनेकों मंदिर पाये जाते थे स्वयं रानी महादेव के मंदिर में नित्य प्रति जाया करती थीं। अनेकों पर्व एवं उत्सव दशहरा, दीपावली, रक्षाबंधन, गौर पूजन, हल्दी कुंकुं उत्सव आदि प्रमुख थे इनका वर्णन झांसीश्वरीचरितम् में किया गया है। ये पर्व उत्सव भारतीय संस्कृति तथा परम्परा के प्रतीक थे। उस समय विद्या कलायें, चित्रकला, काव्यकला नृत्य वाद्य, ध्रुपद वीणा आदि कलायें अपनी उन्नतावस्था में थीं। चित्रकार सुखलाल, कविपजनेश, हीरालाल आदि के नामोल्लेख झांसीश्वरीचरितम् किये गये है।

झांसीराज्य में कृषि उद्योग, कला स्थापत्य वगैरह के क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य रघुनाथ राव काल में हुआ जैसा कि झांसी गजेटियर और एटकिन्सन ई. टी. स्टेटिस्टकल जिस क्रिपशन्स एण्ड हिस्टोरिकल एकाउण्टस ऑफ नार्थ वेस्टर्न इण्डिया भाग1 पृ0 (253) और 254 में विस्तार से अंकित है इस अध्याय के अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि बुन्देलखण्ड के अन्य किसी राज्य में इस तरह की उन्नति या विकास नहीं हुआ जैसा कि झांसी के मराठा सूबेदार रघुनाथ राव के काल में हुआ। झांसी नगर विन्ध्य क्षेत्र का सबसे समृद्ध तथा विकासशील नगर के रूप में परिवर्तित हो चुका था।

परिशिष्ट :-

रघुवंश महाकाव्य	–	चौखम्भा संस्कृत पुस्तकालय वनारस
कुमार संभव	–	चौखम्भा संस्कृत सीरीज ऑफिस विद्या विलास प्रेस, वनारस सिटी 1951
शिशुपाल वध	–	वाराणसी द्वितीय संस्करण
झांसीश्वरीचरितम्	–	पं0 सुबोध चन्द्र पन्त राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली
किरातार्जुनीयम् (भारवि)	–	वाराणसी द्वितीय संस्करण
मनुस्मृति	–	
दुर्गासप्तशती	–	गीता प्रेस, गोरखपुर – संस्करण
महाभारत	–	वनपर्व – महाभारत प्रकाशक मण्डल चांदनी चौक दिल्ली
वाल्मीकि रामायण	–	मूल प्रति
मेघदूतम्	–	वासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणशीकर

सहायक ग्रंथ सूची

काव्य प्रकाश	–	(मम्मट) आ0 विश्वेश्वर, वाराणसी
साहित्य दर्पण	–	(विश्वनाथ कविराज) डा0 सत्य वृतसिंह वाराणसी
काव्यादर्श	–	ओरिएण्टल बुक्स सप्लाइंग एजेन्सी पूना 1924 दण्डी
काव्यालंकार	–	चौखम्भा सं0 सी0 1928 भामह
चन्द्रालोक	–	चौखम्भा संस्कृत सीरीज ऑफिस विद्यालय प्रेस वनारस 1950 चौखम्भा संस्कृत सीरीज ऑफिस संस्करण 1921 बाम्बे
श्री कोष	–	श्री केदारनाथ शर्मा तृ0 संस्करण 1947
अमर कोष	–	वासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणशीकर पं0
बुन्देलखण्ड का इतिहास	–	मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त'
झांसीकी रानी लक्ष्मीबाई	–	श्री वृन्दावन लाल वर्मा
सन सत्तावन की क्रान्ति	–	श्री परिपूर्णानन्द वर्मा
क्रान्ति पथ	–	श्रवण कुमार त्रिपाठी
झांसीश्वरी ड्यूरिंग द ब्रिटिस रूल	–	डा0 एस0 पी0 पाठक

भारतीय स्वातान्त्र्य समर - पं० विनायक दामोदरराव सावरकर

गदर का इतिहास -

बुन्देलखण्ड दर्शन - मोती लाल त्रिपाठी ' अशान्त '

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य का इतिहास - डा0 श्रीधर भास्कर वर्णेकर

संस्कृत साहित्य की रूपरेखा - पं0 चन्द्रशेखर पाण्डेय

सस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास - आचार्य पाण्डेय कानपुर

वृन्दावन लाल वर्मा के उपन्यासों का सांस्कृतिक अध्ययन - ..., शारदा निकेतन वाराणसी-5 द्वितीय संस्करण 1982

साहित्यिक एव सांस्कृतिक निबंध - डा0 कैलाशनाथ द्विवेदी, एम0 ए0 साहित्याचार्य, पीएच0डी0, डी0लिट0 1996 15 सी. गोविन्द नगर, कानपुर

कालिदास एवं भवभूति के नारी पात्र - डा0 कैलाशनाथ द्विवेदी, एम0 ए0 साहित्याचार्य, पीएच0डी0, डी0लिट0 1996 15 सी. गोविन्द नगर, कानपुर प्रकाशन वर्ष 1999

झांसी गजेटियर -

जालौन गजेटियर -

गरूड़ पुराण - महामहोपाध्याय पं० विद्याधर शास्त्री

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभम् - सम्पादक द्वारिका प्रसाद शर्मा

संस्कृत काव्य परिचय - भोला शंकर व्यास

रस सिद्धान्त - नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली (द्वि0) 1969 डा0 नगेन्द्र

भारत में अंग्रेजी राज्य - ओंकार प्रेस इलाहाबाद (द्वि0) 1938 सर सुन्दर लाल

भारत वर्ष का वृहत् इतिहास - भाग 1, स्वास्तिक प्रकाशन इलाहाबाद 1982 प्रथम संस्करण प्रो0 श्री पाण्डेय

संस्कृत हिन्दी कोष - स0 न0 दिल्ली, प्रथम (हिन्दी संस्करण) 1966 वामन शिवराम आप्टे

शिवराज्योदयम् महाकाव्यम् - शारदा गौरव ग्रंथ माला 425 सदा शिव पैठ-30 श्रीधर भास्कर

वर्णोकर

छत्रपतिचरितम् महाकाव्यम् – अध्यापक निवास काशी विद्यापीठ वाराणसी प्र0 सं0 सं0 2031 डा0 उमाशंकर त्रिपाठी

पत्र - पत्रिकायें

सागरिका – सागर विश्वविद्यालय सागर सम्पादक डा0 राम जी उपाध्याय

सागरिका – अर्वाचीन संस्कृत महाकाव्य विशेषांक 2036 विक्रम संवत्सरे डा0 रहसविहारी द्विवेदी सागरिका समिति, गौरभम् 1996 15 सी. गोविन्द नगर कानपुर

संस्कृतामृतम् – जून/जुलाई 1999

अजस्त्रा – 18–/1–4, 1995 डा0 हर्षनारायण स्मृति विशेषांक लखनऊ स्वातंत्र्यगाथा डा0 ओम प्रकाश पाण्डेय

कल्याण – नवम्बर 1961 गोरखपुर सौर मार्ग शीर्ष 2018 गीता प्रेस गोरखपुर

अप्रतिम प्रतिभा– संस्कृत छंदसाम – डा0 रामकिशोर मिश्र

दैनिक जागरण – झांसी

सागरिका – जून 2000 अंक

सागरिका – 1999